कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास को समर्पित

वर्ष 66 अंक : 11 पृष्ठ : 56 सितंबर 2020 मूल्य : ₹ 22

कृषि अनुसंधान

कृषि अवसंरचना निधि के तहत एक लाख करोड़ रुपये की वित्तपोषण सुविधा आरंभ

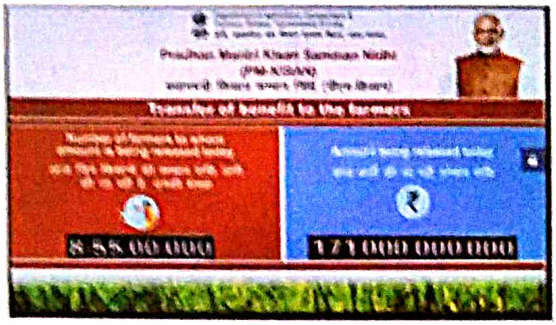

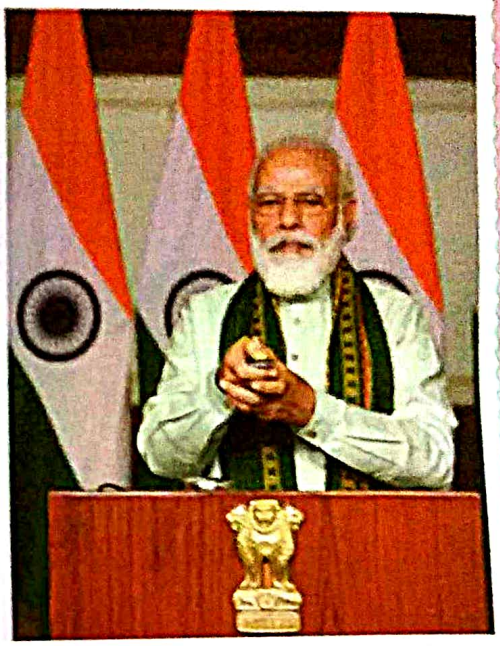

प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने 9 अगस्त, 2020 को एक लाख करोड़ रुपये की कृषि अवसंरचना निधि के तहत वित्तपोषण सुविधा की एक नई योजना आरंभ की है। यह योजना समुदाय कृषक परिसंपत्तियों के निर्माण तथा फसल उपरांत कृषि अवसंरचना में किसानों, पैक्स, एफपीओ, कृषि उद्यमियों आदि की सहायता करेगी। ये परिसंपत्तियां अपनी उपज के लिए अधिक मूल्य पाने में किसानों को सक्षम बनाएंगी, क्योंकि वे उच्चतर मूल्यों पर भंडारण एवं बिक्री करने, अपव्ययों को कम करने तथा प्रसंस्करण एवं मूल्यवर्धन में सक्षम हो जाएंगे।

प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने 9 अगस्त, 2020 को नई दिल्ली में वीडियो कांफ्रेंसिंग के जरिए कृषि अवसंरचना निधि के तहत् एक लाख करोड़ रुपये की वित्तपोषण सुविधा आरंभ की।

मंत्रिमंडल द्वारा योजना को अनुमोदित किए जाने के केवल 30 दिनों के बाद 2280 से अधिक कृषक सोसायटियों को 1000 करोड़ रुपये से अधिक की पहली मंजूरी दी गई। इस कार्यक्रम का संचालन वीडियो कांफ्रेंस के जरिए किया गया तथा इसमें देशभर के लाखों किसानों, एफपीओ, सहकारी सभी, पैक्स एवं नागरिकों ने भाग लिया।

कार्यक्रम के दौरान, प्रधानमंत्री ने लगभग 8.5 करोड़ किसानों को 17,000 करोड़ रुपये की पीएम–किसान योजना के तहत् छठीं किस्त भी जारी की। लाभ बटन दबाने के साथ ही आधार प्रमाणित उनके बैंक खातों में नगदी सीधा हस्तांतरित हो गई। इस हस्तांतरण के साथ, इस योजना के तहत् 1 दिसंबर, 2018 को इसकी शुरुआत से अब तक 10 करोड़ से अधिक किसानों के हाथों में 90,000 करोड़ रुपये से अधिक उपलब्ध करा दिया गया है।

प्राथमिक कृषि क्रेडिट सोसायटियों के साथ परस्पर संवाद

प्रधानमंत्री ने वर्चुअल तरीके से कर्नाटक, गुजरात एवं मध्यप्रदेश की तीन प्राथमिक कृषि क्रेडिट सोसायटियों के साथ परस्पर संवाद किया जो योजना के आरंभिक लाभार्थियों में से हैं। प्रधानमंत्री की इन सोसायटियों के प्रतिनिधियों के साथ उनके वर्तमान प्रचालनों और किस प्रकार वे ऋण का उपयोग करने की योजना बनाते हैं, को समझने के लिए परस्पर गहन चर्चा हुई। सोसायटियों ने गोदाम बनवाने, ग्रेडिंग और सॉर्टिंग इकाईयां स्थापित करने की अपनी योजना के बारे में प्रधानमंत्री को जानकारी दी जो सदस्य किसानों को उनकी उपज के लिए उच्चतर मूल्य प्राप्त करने में मददगार होगी।

राष्ट्र के नाम संबोधन

प्राथमिक कृषि क्रेडिट सोसायटियों के साथ अपने परस्पर संवाद के बाद, प्रधानमंत्री ने राष्ट्र के नाम अपने संबोधन में विश्वास जताया कि किस प्रकार किसानों और कृषि क्षेत्र को इस योजना से लाभ मिलेगा। उन्होंने कहा कि यह योजना किसानों और कृषि क्षेत्र को वित्तीय प्रोत्साहन उपलब्ध कराएगी और वैश्विक–स्तर पर प्रतिस्पर्धा करने की भारत की क्षमता में बढ़ोत्तरी करेगी।

प्रधानमंत्री ने दोहराया कि भारत के पास वेयरहाउसिंग, कोल्डचेन और खाद्य प्रसंस्करण जैसे फसल–उपरांत प्रबंधन समाधानों में निवेश करने, और जैविक तथा प्रतिबलित खाद्यों जैसे क्षेत्रों में वैश्विक उपस्थिति का निर्माण करने की विशाल संभावना है। उन्होंने यह भी उल्लेख किया कि यह योजना कृषि स्टार्टअप्स के लिए लाभ उठाने तथा प्रचालनों को बढ़ाने का एक अच्छा अवसर प्रदान करती है और इस प्रकार एक ऐसे परितंत्र का निर्माण करती है जो देश के प्रत्येक हिस्से में किसानों तक पहुंचता है।

कृषि अवसंरचना निधि

कृषि अवसंरचना निधि ब्याज माफी तथा ऋण गारंटी के जरिए फसल उपरांत प्रबंधन अवसंरचना एवं सामुदायिक कृषि परिसंपत्तियों के लिए व्यवहार्य परियोजनाओं में निवेश के लिए एक मध्यम–दीर्घकालिक कर्ज वित्तपोषण सुविधा है। इस योजना की अवधि वित्त वर्ष 2020 से 2029 (10 वर्ष) होगी। इस योजना के तहत 3 प्रतिशत प्रति वर्ष की ऋण माफी तथा दो करोड़ रुपये तक ऋण के लिए सीजीटीएमएसई स्कीम के तहत ऋण गारंटी कवरेज के साथ ऋण के रूप में बैंकों और वित्तीय संस्थानों द्वारा 1 लाख करोड़ रुपये उपलब्ध कराए जाएंगे। लाभार्थियों में किसान, पैक्स, विपणन सहकारी सोसायटियां, एफपीओ, एसएचजी, संयुक्त जवाबदेही समूह (जेएलजी), बहु–उद्देशीय सहकारी समितियां, कृषि उद्यमी, स्टार्टअप्स और केंद्रीय/राज्य एजेंसियां या सार्वजनिक–निजी साझेदारी परियोजना प्रायोजित स्थानीय निकाय शामिल हैं।

कृषि अवसंरचना निधि के तहत एक लाख करोड़ रुपये की वित्तपोषण सुविधा आरंभ

प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने 9 अगस्त, 2020 को एक लाख करोड़ रुपये की कृषि अवसंरचना निधि के तहत वित्तपोषण सुविधा की एक नई योजना आरंभ की है। यह योजना समुदाय कृषक परिसंपत्तियों के निर्माण तथा फसल उपरांत कृषि अवसंरचना में किसानों, पैक्स, एफपीओ, कृषि उद्यमियों आदि की सहायता करेगी। ये परिसंपत्तियां अपनी उपज के लिए अधिक मूल्य पाने में किसानों को सक्षम बनाएंगी, क्योंकि वे उच्चतर मूल्यों पर भंडारण एवं बिक्री करने, अपव्ययों को कम करने तथा प्रसंस्करण एवं मूल्यवर्धन में सक्षम हो जाएंगे।

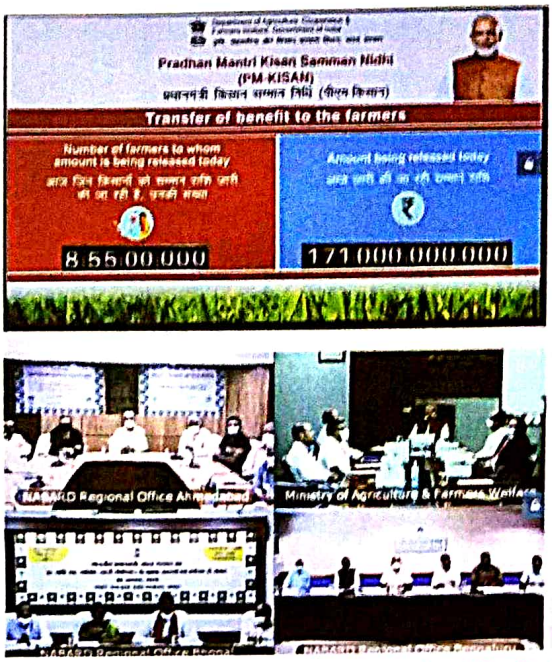

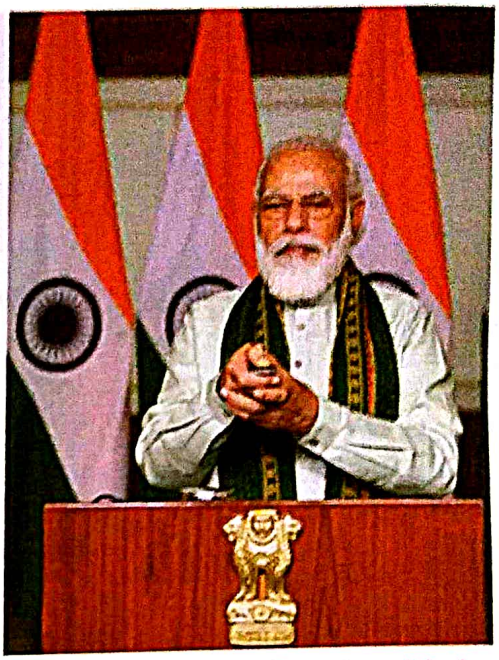

प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने 9 अगस्त, 2020 को नई दिल्ली से वीडियो कांफ्रेंसिंग के जरिए कृषि अवसंरचना निधि के तहत एक लाख करोड़ रुपये की वित्तपोषण सुविधा आरंभ की।

मंत्रिमंडल द्वारा योजना को अनुमोदित किए जाने के केवल 30 दिनों के बाद 2280 से अधिक कृषक सोसायटियों को 1000 करोड़ रुपये से अधिक की पहली मंजूरी दी गई। इस कार्यक्रम का संचालन वीडियो कांफ्रेंस के जरिए किया गया तथा इसमें देशभर के लाखों किसानों, एफपीओ, सहकारी संघों, पैक्स एवं नागरिकों ने भाग लिया।

कार्यक्रम के दौरान, प्रधानमंत्री ने लगभग 8.5 करोड़ किसानों को 17,000 करोड़ रुपये की पीएम–किसान योजना के तहत् छठीं किस्त भी जारी की। लाभ बटन दबाने के साथ ही आधार प्रमाणित उनके बैंक खातों में नगदी सीधा हस्तांतरित हो गई। इस हस्तांतरण के साथ, इस योजना के तहत् 1 दिसंबर, 2018 को इसकी शुरुआत से अब तक 10 करोड़ से अधिक किसानों के हाथों में 90,000 करोड़ रुपये से अधिक उपलब्ध करा दिया गया है।

प्राथमिक कृषि क्रेडिट सोसायटियों के साथ परस्पर संवाद

प्रधानमंत्री ने वर्चुअल तरीके से कर्नाटक, गुजरात एवं मध्यप्रदेश की तीन प्राथमिक कृषि क्रेडिट सोसायटियों के साथ परस्पर संवाद किया जो योजना के आरंभिक लाभार्थियों में से हैं। प्रधानमंत्री की इन सोसायटियों के प्रतिनिधियों के साथ उनके वर्तमान प्रचालनों और किस प्रकार वे ऋण का उपयोग करने की योजना बनाते हैं, को समझने के लिए परस्पर गहन चर्चा हुई। सोसायटियों ने गोदाम बनवाने, ग्रेडिंग और सॉर्टिंग इकाईयां स्थापित करने की अपनी योजना के बारे में प्रधानमंत्री को जानकारी दी जो सदस्य किसानों को उनकी उपज के लिए उच्चतर मूल्य प्राप्त करने में मददगार होगी।

राष्ट्र के नाम संबोधन

प्राथमिक कृषि क्रेडिट सोसायटियों के साथ अपने परस्पर संवाद के बाद, प्रधानमंत्री ने राष्ट्र के नाम अपने संबोधन में विश्वास जताया कि किस प्रकार किसानों और कृषि क्षेत्र को इस योजना से लाभ मिलेगा। उन्होंने कहा कि यह योजना किसानों और कृषि क्षेत्र को वित्तीय प्रोत्साहन उपलब्ध कराएगी और वैश्विक-स्तर पर प्रतिस्पर्धा करने की भारत की क्षमता में बढ़ोत्तरी करेगी।

प्रधानमंत्री ने दोहराया कि भारत के पास वेयरहाउसिंग, कोल्डचेन और खाद्य प्रसंस्करण जैसे फसल–उपरांत प्रबंधन समाधानों में निवेश करने, और जैविक तथा प्रतिबलित खाद्यों जैसे क्षेत्रों में वैश्विक उपस्थिति का निर्माण करने की विशाल संभावना है। उन्होंने यह भी उल्लेख किया कि यह योजना कृषि स्टार्टअप्स के लिए लाभ उठाने तथा प्रचालनों को बढ़ाने का एक अच्छा अवसर प्रदान करती है और इस प्रकार एक ऐसे परितंत्र का निर्माण करती है जो देश के प्रत्येक हिस्से में किसानों तक पहुंचता है।

कृषि अवसंरचना निधि

कृषि अवसंरचना निधि ब्याज माफी तथा ऋण गारंटी के जरिए फसल उपरांत प्रबंधन अवसंरचना एवं सामुदायिक कृषि परिसंपत्तियों के लिए व्यवहार्य परियोजनाओं में निवेश के लिए एक मध्यम–दीर्घकालिक कर्ज़ वित्तपोषण सुविधा है। इस योजना की अवधि वित्त वर्ष 2020 से 2029 (10 वर्ष) होगी। इस योजना के तहत 3 प्रतिशत प्रति वर्ष की ऋण माफी तथा दो करोड़ रुपये तक ऋण के लिए सीजीटीएमएसई स्कीम के तहत ऋण गारंटी कवरेज़ के साथ ऋण के रूप में बैंकों और वित्तीय संस्थानों द्वारा 1 लाख करोड़ रुपये उपलब्ध कराए जाएंगे। लाभार्थियों में किसान, पैक्स, विपणन सहकारी सोसायटियां, एफपीओ, एसएचजी, संयुक्त जवाबदेही समूह (जेएलजी), बहु–उद्देशीय सहकारी समितियां, कृषि उद्यमी, स्टार्टअप्स और केंद्रीय/राज्य एजेंसियां या सार्वजनिक–निजी साझेदारी परियोजना प्रायोजित स्थानीय निकाय शामिल हैं।

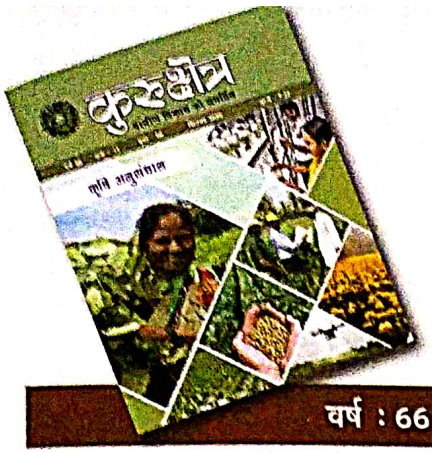

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास मंत्रालय की प्रमुख मासिक पत्रिका

इस अंक में

वर्ष : 66 ★ मासिक अंक : 11 ★ पृष्ठ : 56 ★ भाद्रपद–आश्विन 1942 ★ सितंबर 2020

कृषि अनुसंधान से कृषि क्षेत्र का कायाकल्प — 5
–नरेन्द्र सिंह तोमर

भारत की सशक्त कृषि अनुसंधान प्रणाली — 10
–डॉ. जगदीप सक्सेना

खाद्य सुरक्षा और आमदनी के लिए कृषि अनुसंधान — 17
–जे. पी. मिश्रा

सतत कृषि विकास हेतु शोध और विकास — 23
–डॉ. के. के. त्रिपाठी और डॉ. स्नेहा कुमारी

74 वां स्वतंत्रता दिवस : लालकिले की प्राचीर से प्रधानमंत्री के संबोधन की मुख्य बातें — 28

कृषि अनुसंधान आवश्यकताओं को प्राथमिकता देना जरूरी — 30
–जी.आर. चिंताला

कृषि अनुसंधान : उपलब्धियां और चुनौतियां — 35
–अशोक सिंह

स्मार्ट कृषि के लिए उन्नत कार्यप्रणालियां — 41
–डॉ. वाई. एस. शिवे और डॉ. टीकम सिंह

बहुउद्देशीय भारतीय कृषि प्रसार प्रणाली — 46
–डॉ. श्याम रंजन कुमार सिंह
एवं डॉ. अनुपम मिश्रा

बागवानी उत्पादों का मूल्यवर्धन — 52
–डॉ. राम रोशन शर्मा

प्रधान संपादक : धीरज सिंह

वरिष्ठ संपादक : ललिता खुराना

संयुक्त निदेशक (उत्पादन) : के. रामालिंगम

आवरण : राजिन्द्र कुमार

सज्जा : मनोज कुमार

संपादकीय कार्यालय
कमरा नं. 655, सूचना भवन, सी.जी.ओ. काम्पलेक्स,
लोधी रोड, नई दिल्ली-110003
वेबसाइट : publicationsdivision.nic.in
ई-मेल : kuru.hindi@gmail.com

व्यापार प्रबंधक
दूरभाष : 011-24367453

कुरुक्षेत्र मंगवाने की दरें
एक प्रति : ₹ 22, विशेषांक : ₹ 30, वार्षिक : ₹ 230,
द्विवार्षिक : ₹ 430, त्रिवार्षिक : ₹ 610

कुरुक्षेत्र में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो। पाठकों से आग्रह है कि कैरियर मार्गदर्शक किताबों/संस्थानों के बारे में विज्ञापनों में किए गए दावों की जांच कर लें। पत्रिका में प्रकाशित विज्ञापनों की विषय-वस्तु के लिए 'कुरुक्षेत्र' उत्तरदायी नहीं है।

पत्रिका न मिलने की शिकायत हेतु इस पते पर मेल करें ई-मेल : pdjucir@gmail.com कुरुक्षेत्र की सदस्यता लेने या पुराने अंक मंगाने के लिए भी इसी ई-मेल पर लिखें या संपर्क करें। अधिक जानकारी के लिए दूरभाष: 011-24367453 पर संपर्क करें।

संपादक (प्रसार एवं विज्ञापन)
प्रसार एवं विज्ञापन अनुभाग
प्रकाशन विभाग,
कमरा सं. 56, भूतल, सूचना भवन,
सीजीओ परिसर, लोधी रोड,
नयी दिल्ली-110003

प्रकाशन विभाग के विक्रय केंद

नयी दिल्ली	पुस्तक दीर्घा, सूचना भवन, सीजीओ कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड	110003	011–24367260
दिल्ली	हाल सं. 196, पुराना सचिवालय	110054	011–23890205
नवी मुंबई	701, सी-विंग, सातवीं मंज़िल, केंद्रीय सदन, बेलापुर	400614	022-27570686
कोलकाता	8, एसप्लानेड ईस्ट	700069	033-22488030
चेन्नई	'ए विंग, राजाजी भवन, बसंत नगर	600090	044-24917673
तिरुअनंतपुरम	प्रेस रोड, नयी गवर्नमेंट प्रेस के निकट	695001	0471-2330650
हैदराबाद	कमरा सं. 204, दूसरा तल, सीजीओ टावर, कवादिगुड़ा सिकंदराबाद	500080	040-27535383
बैंगलुरु	फर्स्ट फ्लोर, 'एफ विंग, केंद्रीय सदर, कोरामंगला	560034	080-25537244
पटना	बिहार राज्य कोऑपरेटिव बैंक भवन, अशोक राजपथ	800004	0612-2683407
लखनऊ	हॉल सं-1, दूसरा तल, केंद्रीय भवन, क्षेत्र-ए, अलीगंज	226024	0522-2325455
अहमदाबाद	4–सी, नैप्च्युन टॉवर, चौथी मंजिल, एचपी पेट्रोल पंप के निकट, नेहरू ब्रिज कार्नर, आश्रम रोड, अहमदाबाद	380009	079-26588669

संपादकीय

"न्यू इंडिया के एक प्रहरी हमारे किसान, हमारे अन्नदाता हैं जो देश का भरण–पोषण करने के लिए परिश्रम की पराकाष्ठा कर रहे हैं। दूसरे प्रहरी हमारे वैज्ञानिक बंधु हैं जो नई–नई तकनीक विकसित कर किसान का जीवन आसान कर रहे हैं।" प्रधानमंत्री के ये उद्गार किसानों और वैज्ञानिकों की भूमिका का महत्व बताने के लिए पर्याप्त हैं। निसंदेह इन दो प्रहरियों के मदद से ही आज देश में अनाज, दाल, फल–सब्जियों और दूध का रिकॉर्ड उत्पादन हो रहा है। और कोरोना संकटकाल में भी इन्हीं दो प्रहरियों की बदौलत देश की विशाल जनसंख्या को भोजन की उपलब्धता सुनिश्चित की जा सकी।

इस अंक में भारत में कृषि अनुसंधान की ऐतिहासिक यात्रा, भारत की सशक्त कृषि अनुसंधान प्रणाली और इसकी उपलब्धियों का ज़िक्र किया गया है। कृषि और किसान कल्याण मंत्री सहित कृषि क्षेत्र के विशेषज्ञों और वैज्ञानिकों ने कृषि अनुसंधान की दिशा में हासिल सफलता और आगे की रणनीति पर विचार किया है।

यूं तो देश में कृषि अनुसंधान की दिशा में प्रयास स्वतंत्रता से पहले ही शुरू हो गए थे लेकिन देश में कृषि अनुसंधान के सशक्तीकरण की एक ठोस रणनीति स्वतंत्रता के बाद ही बनाई गई जिसके अंतर्गत एक व्यापक राष्ट्रीय कृषि अनुसंधान प्रणाली का विकास किया गया। इसमें कृषि शिक्षा और कृषि प्रसार को भी प्रमुखता के साथ जोड़ा गया। आज इसका राष्ट्रव्यापी नेटवर्क देश के कोने–कोने में कृषि विकास की अलख जगा रहा है।

हरितक्रांति ने देश को खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भर बनाया, वही श्वेतक्रांति से भारत पूरे विश्व में दूध उत्पादन में सिरमौर बन गया। सुनहरी क्रांति ने देश को फल उत्पादन में अग्रणी बना दिया। पीली क्रांति से हमने खाद्य तेलों के उत्पादन में तेज़ कदम बढ़ाए और नीली क्रांति से देश में मछली उत्पादन का परिदृश्य बदल गया। इनके अलावा मांस उत्पादन, अंडा उत्पादन और सब्जी उत्पादन में भी क्रांतिकारी सुधार हुए। आज देश एक समग्र, सतत और सदाबहार क्रांति की ओर अग्रसर है। कृषि अनुसंधान व विकास की इस यात्रा में आईसीएआर ने देशभर में विभिन्न फसलों और अन्य कृषि तथा पशुधन आधारित जिंसों पर अनुसंधान के लिए अनुसंधान संस्थानों का जाल बुन दिया है।

हाल के वर्षों में अनेक राज्यों में बागवानी फसलें आर्थिक विकास का सूत्रधार बन गई हैं और देश के कृषि जीडीपी में बागवानी का योगदान 30.4 प्रतिशत तक पहुंच गया है। वैश्विक–स्तर पर भारत फलों और सब्जियों का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक है परंतु आम, केला, पपीता और अनार सहित कई फलों के उत्पादन में हम शिखर पर हैं। अपनी प्राचीन परंपरा को पुनर्जीवित करते हुए हमारा देश मसालों का सबसे बड़ा उत्पादक और निर्यातक बन गया है। भारत में कृषि का विकास और अनाज उत्पादन में आत्मनिर्भरता राष्ट्रीय–स्तर पर भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद और राज्य–स्तर पर राज्य कृषि विश्वविद्यालयों के संबंधित प्रयासों का प्रतिफल है।

निसंदेह कृषि अनुसंधान में भारत ने एक महत्वपूर्ण मुकाम हासिल किया है लेकिन यह सफलताएं केवल एक पड़ाव हैं, अभी हमें लंबा रास्ता तय करना है। आत्मनिर्भर कृषि अभियान के तहत नई किस्मों, उत्पादन व संरक्षण की नई तकनीकों तथा भारतीय उत्पादों के लिए गुणवत्ता व सुरक्षा के मानदंडों के विकास जैसे कृषि अनुसंधान क्षेत्र के बेहद समन्वित प्रयास आगे भी जारी रहेंगे। भारत में कृषि का भविष्य कृषि अनुसंधान एवं विकास में वर्तमान में कितना निवेश किया जा रहा है, उस पर निर्भर करता है। आत्मनिर्भर कृषि अभियान के तहत भारत को वैश्विक–स्तर पर प्रतिस्पर्धी बनाने, खाद्य तथा पोषण सुरक्षा बनाए रखने और किसानों तथा ग्रामीण मज़दूरों की आमदनी के साधन जुटाने के लिए बुनियादी ढांचे और मानव संसाधन विकास के क्षेत्र में अनुसंधान और विकास के कार्य में निवेश की भी आवश्यकता होगी। साथ ही, आयात पर निर्भरता कम करने, स्वास्थ्यवर्धक उत्पादों के साथ ही दालों व तिलहनों का उत्पादन बढ़ाने, अनुसंधान के द्वारा पाम ऑयल का उत्पादन बढ़ाने और तिलहन की नई किस्में ईजाद करने की ज़रूरत है।

कृषि विशेषज्ञों की राय है कि कृषि अनुसंधान एवं विकास को नूतन प्रयोग करने की आवश्यकता है जिससे सूक्ष्म कृषि, उच्च पोषक और प्रसंस्कृत किए जाने वाली किस्में, जलवायु प्रतिरोधक प्रौद्योगिकियां, कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित कृषि और बाज़ार परामर्शों के लिए साइबर कृषि भौतिक प्रणालियां विकसित हो सकें। जल प्रशासन और जल सम्भावनाओं को खोजने के लिए विकासात्मक अनुसंधान भी बेहद जरूरी है। अग्रणी क्षेत्र जैसे जीन सम्पादन, जीनोमिक्स, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, नैनो टेक्नोलॉजी पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। ये पूंजी–प्रधान अनुसंधान हैं और इस दिशा में आगे बढ़ने के लिए कृषि अनुसंधान एवं विकास पर निवेश बढ़ाना समय की मांग है।

हमारे देश में कृषि क्षेत्र ने अनेक मामलों में पूरी दुनिया को राह दिखाई है। लेकिन समय के साथ जो चुनौतियां खेती से जुड़ती चली गईं, वो आज के इस दौर में बहुत अहम् हैं। ये चुनौतियां ही किसान की आय कम करती हैं। इन चुनौतियों से दृढ़ संकल्प और इच्छा शक्ति से ही निपटा जा सकता है निसंदेह वर्तमान सरकार की नीतियों और प्रयासों में यह संकल्प और इच्छाशक्ति जग जाहिर है। किसानों की आय 2022 तक दोगुनी करने के प्रधानमंत्री के संकल्प पर सरकार लगातार कार्य कर रही है। लक्ष्य मुश्किल जरूर है पर नामुमकिन नहीं।

17 मार्च, 2018 को राष्ट्रीय उन्नति मेले में वीडियो कांफ्रेंसिंग के जरिए किसानों और वैज्ञानिकों को संबोधित करते हुए प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने बेहद प्रेरणादायी बात कही जो आपसे साझा करना चाहूंगी– "कहीं मैंने पढ़ा है कि जीवित प्रजातियों में अकेला मानव नहीं है जो खेती करता है। इंसान के अलावा दो–तीन और प्रजातियां हैं जो अपने लिए भोजन को पैदा करती हैं और चींटी भी उन्हीं में से एक है। दुनिया के कुछ जंगलों में चीटियां बहुत व्यवस्थित तरीके से फंगस यानी फफूंदी की खेती करती हैं। वो बाकायदा खेत बनाती हैं, खरपतवार हटाती हैं, पानी की व्यवस्था करती हैं और यहां तक की एंटीबायोटिक का भी इस्तेमाल करती हैं। भाइयों और बहनों, लाखों वर्षों से ये चींटियां आज भी बची हुई हैं, तो उसकी वजह है इच्छाशक्ति। दुनिया की सबसे पुरानी और सबसे छोटी एग्रिकल्चरिस्ट हमें ये सीख देती है कि कोई भी लक्ष्य असंभव नहीं है। आइए, हम सभी मिलकर भारतीय खेती की और उन्नति का संकल्प लें, भारतीय खेती का गौरव लौटाने का संकल्प लें, इस लक्ष्य को प्राप्त करें।" निसंदेह प्रधानमंत्री के ये उद्गार किसानों की आय 2022 तक दोगुनी करने के उनके संकल्प की दिशा में मार्गदर्शक का काम करेंगे।

कृषि अनुसंधान से कृषि क्षेत्र का कायाकल्प

–नरेन्द्र सिंह तोमर

आज हमारे देश में कृषि विज्ञान, कृषि इंजीनियरिंग और कृषि क्षेत्र की विभिन्न शाखाओं में नवीन पद्धतियों, अनुसंधानों और नवाचारों को तेज़ी से आगे बढ़ाने के लिए मिशन मोड में काम किया जा रहा है। वह दिन दूर नहीं, जब हमारे देश का किसान वैज्ञानिक सोच के साथ वैज्ञानिक तरीके से आधुनिक प्रौद्योगिकी का उपयोग कर देश के कृषि क्षेत्र को कृषि उद्योग के रूप में स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा और हमारे देश के उच्च शिक्षित युवा इसे एक उद्यम के तौर पर अपनाने में गर्व महसूस करेंगे।

प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में एनडीए सरकार कृषि क्षेत्र की विकास दर बढ़ाने और किसानों के कल्याण के लिए अभूतपूर्व प्रयास कर रही है। केवल उत्पादन पर ध्यान केंद्रित न करके, किसानों की आय बढ़ाने और कृषि से संबंधित जोखिम कम करने पर ध्यान केंद्रित किया जा रहा है। सरकार ने किसानों की आय बढ़ाने के लिए कई नीतिगत सुधार किए हैं। इसी उद्देश्य से जुलाई 2019 में प्रधानमंत्री ने "भारतीय कृषि के कायाकल्प" के लिए मुख्यमंत्रियों की एक उच्चाधिकार प्राप्त समिति गठित की। इस समिति में सात राज्यों के मुख्यमंत्री और केंद्रीय कृषि एवं किसान कल्याण मंत्री सहित नीति आयोग के सदस्य को शामिल किया गया।

सरकार ने वर्ष 2020-21 के बजट में कृषि व संबंधित गतिविधियों, सिंचाई और ग्रामीण विकास के लिए 2.83 लाख करोड़ रुपये आवंटित किए, जो अब तक का सर्वाधिक बजट प्रावधान है। भारत सरकार चाहती है कि सभी किसान भाइयों की माली हालत सुधरे, कृषि उत्पादन और उत्पादकता में ज्यादा से ज्यादा बढ़ोत्तरी हो, हमारे अन्नदाताओं को वैज्ञानिक पद्धति से खेती-किसानी करने का अवसर मिले, कृषि के सभी महत्वपूर्ण क्षेत्रों में अनुसंधान की गति बढ़े, कृषि उपकरणों और मशीनरी का न केवल विकास हो, बल्कि उन तक आम किसान की पहुंच कायम हो। कृषि प्रौद्योगिकी खर्चीली न होकर किफायती हो, ताकि हर किसान उसका उपयोग कर सके।

प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने 2015 में झारखंड के हज़ारी बाग में कृषि अनुसंधान संस्थान की नींव रखते हुए कृषि क्षेत्र के भविष्य पर टिप्पणी करते हुए कहा था कि हमारे देश ने प्रथम कृषि क्रांति देखी है और अब समय की मांग है कि देश में दूसरी कृषि क्रांति अविलंब होनी चाहिए। इस संबोधन में प्रधानमंत्री ने भविष्य की खाद्यान्न चुनौतियों को भांपते हुए देश के किसानों, कृषि विशेषज्ञों और राज्य सरकारों से दूसरी कृषि क्रांति का आह्वान किया था। आज राष्ट्र प्रधानमंत्री की इस परिकल्पना को साकार करने के

लिए कृषि क्षेत्र के बहुमुखी विकास और कृषि में वैज्ञानिक प्रणाली, नवोन्मेष एवं आधुनिक प्रौद्योगिकी के अधिकतम उपयोग के साथ तेज़ी से आगे बढ़ रहा है। एनडीए सरकार के पिछले कार्यकाल से ही कृषि अनुसंधान के ज़रिए कृषि उत्पादन में बढ़ोत्तरी के साथ पोषण गुणवत्ता पर पूरा ध्यान केंद्रित किया जा रहा है।

भारत सरकार के कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय तथा उससे जुड़े कृषि अनुसंधान संगठनों ने विगत वर्षों के दौरान कृषि अनुसंधान को नई दिशा दी है। किसानों तक कृषि की नवीनतम प्रौद्योगिकी पहुंचाने का ही परिणाम है कि वर्ष 1950-51 के मुकाबले आज हमारे देश में खाद्यान्न उत्पादन में 5.6 गुना, बागवानी क्षेत्र में 10.5 गुना, मत्स्य क्षेत्र में 18.26 गुना, दुग्ध उत्पादन में 11 गुना और अंडा उत्पादन में 52.9 गुना वृद्धि हुई है। यह सुखद स्थिति है कि 1950-51 में जहां भारत का कुल खाद्यान्न उत्पादन केवल 5 करोड़ टन था, वह 2018-19 में बढ़कर 28.5 करोड़ टन हो गया। भारत ने ये उपलब्धियां ज़मीन और जल संसाधन की घटती उपलब्धता के बावजूद हासिल की हैं। 1960 के दशक में हुई हरितक्रांति ने भारत में खाद्यान्न सुरक्षा के परिदृश्य को पूरी तरह बदल दिया। सरकार ने इस दिशा में राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा कानून और राष्ट्रीय पोषण मिशन जैसी नीतियों और पहलों को ज़मीन पर उतारकर देश के प्रत्येक नागरिक तक न केवल आहार की उपलब्धता सुनिश्चित की है, बल्कि पोषणयुक्त खाद्य सामग्री को न्यूनतम मूल्यों पर ज़रूरतमंदों तक पहुंचाने का प्रयास किया है।

देश में कृषि अनुसंधान को बढ़ावा देने के उद्देश्य से 16 जुलाई, 1929 को भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद की स्थापना की गई थी। इसका 91 वर्षों का इतिहास स्वर्णिम रहा है और इसने देश के कृषि विज्ञान, कृषि अनुसंधान और कृषि प्रौद्योगिकी को नया आयाम दिया है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद बागवानी, मत्स्य विकास, पशुविज्ञान, कृषि शिक्षण एवं कृषि अनुसंधान सहित कृषि क्षेत्र से जुड़ी गतिविधियों और कार्यों में मार्ग-निर्देशन, प्रबंधन और समन्वय का महत्वपूर्ण कार्य कर रही है। इसके अंतर्गत देशभर में 102 अनुसंधान संस्थान और 71 कृषि विश्वविद्यालय काम कर रहे हैं और यह विश्व-स्तर पर सबसे बड़ी राष्ट्रीय कृषि प्रणालियों में से एक है। आईसीएआर ने अपने विभिन्न अनुसंधानों और प्रौद्योगिकी विकास के माध्यम से देश में कृषि क्षेत्र के क्रमिक विकास और हरितक्रांति को आगे बढ़ाने में अहम् भूमिका निभयी है। आईसीएआर के कृषि अनुसंधानों और देश के किसान भाइयों की कड़ी मेहनत का ही नतीजा है कि आज हमारे देश में अनाज के भंडार भरे पड़े हैं और खाद्यान्न संकट जैसा शब्द अब विश्व की दूसरी सबसे बड़ी आबादी वाले देश के शब्दकोश से गायब हो गया है।

कृषि विज्ञान और कृषि अभियांत्रिकी जैसे विषयों के शिक्षण में भी आईसीएआर ने विश्व-स्तर पर अपनी पहचान स्थापित की है। इस संगठन ने अपने उपयोगी कृषि अनुसंधानों को किसान भाइयों तक पहुंचाने के लिए 718 कृषि विज्ञान केंद्रों का एक विशाल नेटवर्क स्थापित किया है। कृषि क्षेत्र में हुए वैज्ञानिक अनुसंधानों के फलस्वरूप फसलों की ज़्यादा पैदावार देने वाली किस्मों, अधिक दूध देने वाले गोवंश की प्रजातियों और बागवानी क्षेत्र के विकास सहित सभी क्षेत्रों में अप्रत्याशित सफलता मिली है। हमारे वैज्ञानिकों ने नए-नए अनुसंधान किए और उन अनुसंधानों को गांवों में किसानों के पास पहुंचाने का सफलतम प्रयत्न किया। इनमें से कुछ उपलब्धियों को इस तरह गिनाया जा सकता है:-

फसल किस्मों से संबंधित अनुसंधान

अगर हाल ही की बात करें तो वर्ष 2019-20 में कुल 220 फसल किस्मों को अधिसूचित करके व्यावसायिक खेती के लिए जारी किया गया है। इसमें 101 किस्में जलवायु अनुकूल हैं तो वहीं 15 बहु-दबाव सहिष्णु किस्में शामिल हैं। कुल विकसित किस्मों में अनाज की 96, तिलहन की 51, व्यावसायिक फसलों की 18 एवं चारा फसलों की 18 किस्में हैं। चावल, मक्का, गेहूं, सोरघम, बाज़रा, अलसी तथा रागी सहित विभिन्न फसलों की 20 बायो-फॉर्टिफाइड (जैव प्रवर्धित) किस्में भी विकसित की गई हैं। यह उत्साहवर्धक है कि पिछले दो-तीन वर्षों में हम उत्पादन में आत्मनिर्भरता के करीब पहुंच गए हैं। इस उपलब्धि के लिए आईसीएआर और कृषि सहकारिता विभाग ने देश के विभिन्न भागों में कुल 150 सीड हब बनाकर किसानों को उन्नत प्रजाति के बीज उपलब्ध कराए हैं। प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने इस बात पर चिंता व्यक्त की थी कि कृषि प्रधान देश और कृषि आधारित अर्थव्यवस्था होने के बावजूद हमें अब भी खाद्य तेल का आयात करना पड़ता है। यह समस्या 'शून्य खाद्य तेल आयात' के मिशन मोड से सुलझाई जानी चाहिए। इसी दिशा में आगे बढ़ते हुए आईसीएआर ने पिछले एक वर्ष में तिलहनी फसलों पर 50 हजार से अधिक राष्ट्रीय-स्तर के क्लस्टर अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन किए हैं। इन प्रदर्शनों से अलसी की फसल में हासिल हुए लक्ष्य से इस आशा को बल मिलता है कि तिलहन के मामले में हम आयात पर होने वाले खर्च को जल्द कम कर पाएंगे।

वर्ष 2009 से 2014 के दौरान फसलों की कुल 545 किस्में ज़ारी की गई थीं, जबकि 2014 से 2019 की अवधि में आईसीएआर ने इससे लगभग दो गुनी अर्थात 1020 किस्में विकसित कर कृषि उत्पादन में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। बागवानी फसलों में जहां 2009-2014 के मध्य केवल 269 किस्में विकसित की गईं, वहीं 2014 से 2019 के मध्य 339 किस्में विकसित की गईं। आईसीएआर द्वारा प्रजनित पूसा बासमती विश्व की सबसे लंबे दाने वाली धान की किस्म है। इस किस्म की विश्व में सर्वाधिक मांग है। 2009-2014 के मुकाबले 2014-2019 के दौरान इसके उत्पादन से आय में करीब 33,000 करोड़ रुपये की वृद्धि हुई है। इस किस्म के निर्यात से प्रति वर्ष लगभग 16,700 करोड़ रुपये मूल्य की विदेशी मुद्रा अर्जित की जा रही है।

आईसीएआर के गन्ना प्रजनन संस्थान, कोयम्बटूर द्वारा विकसित गन्ने की किस्म-सीओ-0238 की उत्पादकता 76.5 टन प्रति हेक्टेयर है जो प्रचलित किस्मों से 14 टन प्रति हेक्टेयर ज़्यादा है। उत्तर भारत में किसान गन्ने के आधे से ज़्यादा क्षेत्र में यह

किस्म लगाकर अच्छा मुनाफा कमा रहे हैं। किसानों की आय बढ़ाने के लिए गन्ने की यह किस्म बहुत महत्वपूर्ण है। इसी तरह, टमाटर की रोग प्रतिरोधी किस्में- 'अर्का रक्षक' और 'अर्का सम्राट' विकसित की गई हैं। 27 राज्यों में 30 हजार हेक्टेयर क्षेत्र में किसान इसे उगा कर 500 करोड़ रुपये से ज़्यादा सालाना कमा रहे हैं।

आईसीएआर ने 2014 से 2019 के बीच 53 बायो रि-इन्फोर्स्ड (जैव-प्रबलित) किस्में ईज़ाद की हैं। चावल, गेहूं, मक्का, सरसों जैसी 10 फसलों की ये किस्में कुपोषण से मुक्ति दिलाने में कारगर साबित हुई हैं। इन किस्मों के खाद्यान्न को मिड-डे मील और सार्वजनिक वितरण प्रणाली के ज़रिए लोगों की थाली तक पहुंचाकर स्वास्थ्य एवं पोषण-स्तर को बेहतर बनाया जा सकता है।

पशुधन विकास

पशुधन विकास और देश में दुग्ध क्रांति लाने में भी कृषि वैज्ञानिकों ने उल्लेखनीय कार्य किए हैं। वर्ष 2014 से 2019 के मध्य 40 नई पशु प्रजातियों को पंजीकृत एवं अधिसूचित किया गया है। वहीं, इन पांच वर्षों में पशुओं की बीमारियों से निपटने के लिए 10 टीके विकसित किए गए जो वर्ष 2009-2014 की तुलना में 40 फीसदी ज़्यादा है। भारत को वर्ष 2024 तक खुरपका-मुंहपका (एफएमडी) रोग से मुक्त करने के लिए एक प्रभावी निगरानी प्रणाली विकसित की गई है। इसके लिए टेंपरेचर टॉलरेंट वैक्सीन भी विकसित की जा रही है। वर्ष 2014 से 2019 के मध्य पशुओं की बीमारियों के निदान के लिए 43 डॉयग्नोस्टिक किट विकसित किए गए, जो इससे पहले के पांच साल की तुलना में 51 प्रतिशत अधिक हैं।

बागवानी क्षेत्र

बागवानी उत्पादन के मामले में आज हमारा देश प्रथम स्थान पर है। भारतीय अर्थव्यवस्था को गति देने में बागवानी क्षेत्र एक प्रमुख कृषि उद्यम के रूप में उभरा है। इस क्षेत्र ने रोज़गार के भी कई नए अवसर पैदा किए हैं। किसानों की आय दोगुनी करने के उपायों हेतु 2018 में बनी समिति की रिपोर्ट में अनुमान लगाया गया है कि वर्ष 2022-23 तक बागवानी उत्पादन का स्तर 45.1 करोड़ टन तक पहुंचने की उम्मीद है। इसके लिए कृषि रकबे में 2.8 प्रतिशत और उत्पादकता में 3.1 प्रतिशत की बढ़ोत्तरी करनी होगी। आईसीएआर ने वर्ष 2019-20 के दौरान बागवानी फसलों की कुल 133 नई किस्मों को अधिसूचित कर उन्हें व्यावसायिक खेती के लिए जारी किया है। इसमें सब्जी की 71, मसालों की 14, बीजीय मसालों की 15, आलू की 5, कंद फलों की 18, फलों की 6 तथा रोपण फसलों की 4 किस्में शामिल हैं।

मात्स्यिकी क्षेत्र

1.34 करोड़ टन उत्पादन के साथ भारत का मात्स्यिकी क्षेत्र देश की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। घरेलू मांग पूरी करने के साथ ही मछली निर्यात से देश को 7 बिलियन डॉलर की विदेशी मुद्रा भी प्राप्त हुई है। भारत मूल की मत्स्य प्रजाति के विभिन्न पहलुओं पर जानकारी देने के लिए एक ऑनलाइन सूचना प्रणाली विकसित की गई है।

कृषि शिक्षा

कृषि पाठ्यक्रमों की ओर देश में विद्यार्थियों का रुझान बढ़ रहा है। कृषि विज्ञान एवं कृषि अभियांत्रिकी की शिक्षा के क्षेत्र में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद और हमारे कृषि महाविद्यालयों ने अभूतपूर्व प्रगति की है। कृषि शिक्षा को आधुनिक, नवोन्मेष और रोज़गारपरक बनाने के लिए समय-समय पर नए कार्यक्रम और मॉड्यूल विकसित किए गए हैं।

कोरोना संकट के कारण महानगरों से गांवों में लौटे तमाम शिक्षित युवा अब खेती-किसानी में हाथ आज़मा रहे हैं। उनका ध्यान केवल उत्पादन पर ही न होकर विपणन, प्रसंस्करण और कृषि कार्यों को वैज्ञानिक स्वरूप देने की ओर बढ़ रहा है। ये युवा किसान आधुनिक कृषि तकनीक और सूचना प्रौद्योगिकी का उपयोग करते हुए पेशेवर तरीके से खेती-किसानी कर रहे हैं। इसे देखते

हुए लगता है कि अब वह दिन दूर नहीं, जब एक नई कृषि क्रांति जल्द ही सामने आएगी।

केंद्र सरकार ने लॉकडाउन के दौरान कृषि गतिविधियों को बंदिशों से मुक्त कर दिया था। इसी के फलस्वरूप, कोरोना संकट के दौरान भी कृषि क्षेत्र ने आर्थिक झटकों को सहन करने की अभूतपूर्व क्षमता का प्रदर्शन किया। जिस दौर में अर्थव्यवस्था के बाकी क्षेत्र मंदी से जूझ रहे हों, उसी दरम्यान कृषि क्षेत्र में संतोषजनक वृद्धि दर का बना रहना किसी बड़ी उपलब्धि से कम नहीं है। अगर कोरोना संकट के दौरान देश के पास पर्याप्त खाद्यान्न भंडार नहीं होता, तो जिन विषम परिस्थितियों से जूझना पड़ता, उनकी महज कल्पना ही किसी को भी झकझोर सकती है।

कृषि क्षेत्र में निहित क्षमताओं और संभावनाओं का दोहन करने के लिए श्री नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में मौजूदा सरकार कृषि से जुड़े नवोन्मेष पर बल दे रही है ताकि खेती-किसानी केवल उदर-पोषण का ज़रिया भर नहीं, बल्कि मुनाफे का सौदा बन सके। इसी उद्देश्य से सरकार कृषि उत्पादों के निर्यात को बढ़ावा देने पर भी ज़ोर दे रही है। विश्व व्यापार केंद्र की एक रिपोर्ट में कहा गया है कि खेती पर ध्यान केंद्रित करने और किसानों की बेहतरी के प्रभावी उपायों पर अमल के कारण भारत कृषि वस्तुओं के निर्यात के मामले में विश्व के शीर्ष पांच निर्यातकों में नाम दर्ज करा सकता है। 2019 में 39 बिलियन डॉलर के वार्षिक कृषि निर्यात के साथ भारत आठवें स्थान पर रहा। यूरोप 181 बिलियन डॉलर मूल्य के कृषि निर्यात के साथ पहले स्थान पर है।

कृषि क्षेत्र में रासायनिक उर्वरकों का इस्तेमाल सीमित करने के लिए सरकार जैविक खेती को बढ़ावा दे रही है। मौजूदा समय में जैविक उत्पादों की मांग भी बढ़ी है और इसे देखते हुए सरकार ने देश के सौ से अधिक ज़िलों में जैविक खेती को प्रोत्साहन देने की योजना लागू की है। कृषि मंत्रालय परंपरागत कृषि विकास योजना के अंतर्गत जैविक खेती से जुड़े किसानों को प्रति हेक्टेयर 50 हजार रुपये की वित्तीय मदद दे रहा है। जैविक खेती वाले क्षेत्रों में सरकार खाद्य प्रसंस्करण उद्योग को भी प्रोत्साहन दे रही है ताकि उन इलाकों में कृषि आधारित औद्योगीकरण को भी बढ़ावा मिले। सरकार जड़ी-बूटियों की खेती को भी प्रोत्साहन दे रही है ताकि हर्बल उत्पादों की देश में आपूर्ति बढ़ने के साथ-साथ इनका निर्यात भी किया जा सके।

टिड्डियों के प्रकोप से किसानों की फसलों को भारी नुकसान की आशंका हर साल बनी रहती है। देश के पश्चिमी राज्यों के साथ मध्य भारत के क्षेत्रों में इसका खतरा कुछ ज़्यादा ही रहता है। यह वैज्ञानिक अनुसंधान और आधुनिक प्रौद्योगिकी के उपयोग का ही फल है कि हमारे देश ने टिड्डियों का खात्मा करने के लिए अब ज़मीन के साथ आसमान से भी हमला शुरू कर दिया है। देश में पहली बार ड्रोन के ज़रिए टिड्डी नियंत्रण की शुरुआत के बाद एरियल स्प्रे के लिए हेलीकॉप्टर की तैनाती की गई। इस कार्य के लिए ब्रिटेन से 60 मशीनें मंगाई गईं। टिड्डी नियंत्रण के लिए ड्रोन का उपयोग करने के मामले में भारत विश्व का पहला देश बन गया है।

कृषि उत्पादन आज देश की अर्थव्यवस्था की धुरी बन गया है। लंबे समय से महसूस किया जा रहा था कि कृषि क्षेत्र में नए सुधार होने चाहिए। सुप्रसिद्ध कृषि वैज्ञानिक और तत्कालीन राष्ट्रीय किसान आयोग के अध्यक्ष प्रो. एम.एस. स्वामीनाथन ने अपनी रिपोर्ट में कृषि क्षेत्र के लिए विशेष रूप से सिंचाई, ड्रेनेज, भूमि विकास, जल-संरक्षण, अनुसंधान विकास और सड़क संपर्क में सुधार और कृषि से जुड़े आधारभूत ढांचे के विकास हेतु सार्वजनिक निवेश में लगातार वृद्धि की सिफारिश की थी। स्वामीनाथन रिपोर्ट में न्यूनतम समर्थन मूल्य के अमल में सुधार और इस प्रणाली में धान और गेहूं के अलावा अन्य फसलों को भी शामिल करने पर बल दिया गया था। रिपोर्ट में यह भी सिफारिश की गई थी कि फसल का न्यूनतम समर्थन मूल्य, उत्पादन की औसत लागत से कम से कम 50 प्रतिशत ज्यादा होना चाहिए।

खेती-किसानी के काम मे लगे करोड़ों देशवासियों के लिए यह प्रसन्नता का विषय है कि मोदी सरकार ने एक लाख करोड़ रुपये के कृषि अवसंरचना कोष (एग्रीकल्चर इंफ्रास्ट्राक्चर फंड) को मंजूरी दे दी है। इस फंड के ज़रिए निजी निवेश को प्रोत्साहन मिलने से देशभर में कृषि गतिविधियों के लिए ग्रामीण क्षेत्र का चहुंमुखी विकास होगा। कृषि क्षेत्र के कायाकल्प और किसानों के लिए यह एक वरदान साबित होगा।

मत्स्य पालन, पशुपालन, हर्बल खेती, मधुमक्खी पालन और कृषि उद्यमिता को बढ़ावा देने के लिए राष्ट्रीय कृषि विकास योजना के अंतर्गत नवोन्मेष एवं कृषि उद्यमिता विकास कार्यक्रम के ज़रिए कृषि स्टार्टअप्स को प्रोत्साहन दिया जा रहा है। 112 स्टार्टअप्स को 1185.90 लाख रुपये उपलब्ध कराए जा चुके हैं। कृषि एवं संबद्ध क्षेत्र के स्टार्टअप्स को 2485 लाख रुपये से अधिक की निधियां उपलब्ध कराई जाने वाली हैं। इससे कृषि क्षेत्र में युवाओं के लिए रोज़गार के नए अवसर खुलेंगे। हाल ही में आणंद, गुजरात में विश्व-स्तर की अत्याधुनिक शहद परीक्षण प्रयोगशाला स्थापित की गई है। इससे गुणवत्तापूर्ण शहद के उत्पादन और विदेशों को निर्यात में वृद्धि होगी। सरकार ने प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना, पी.एम. सम्मान निधि और किसान क्रेडिट कार्ड जैसी योजनाओं से

ज्यादा से ज्यादा किसानों को जोड़कर उनके जीवन में खुशहाली लाने की कोशिश की है।

सरकार ने किसानों के हित में चार ऐसे बड़े फैसले किए हैं जो भविष्य के लिए एक नया इतिहास रचने जा रहे हैं। एक देश एक बाज़ार और मंडी अधिनियम में संशोधन किया गया है ताकि किसानों को उनकी उपज का उचित दाम मिल सके। कृषि उत्पादन व्यापार एवं वाणिज्य (संवर्धन एवं सरलीकरण) अध्यादेश लागू किए जाने से अब किसान अपनी फसल देश में कहीं भी बेच सकते हैं। यह कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी कि देश को अंग्रेजों की हुकूमत से तो आज़ादी 1947 में मिल गई थी, लेकिन अन्नदाता किसान को आज़ादी अब मिली है। मूल्य आश्वासन और कृषि आवश्यकताओं के करार के लिए किसानों का सशक्तीकरण और संरक्षण अध्यादेश 2020 भी सरकार का कृषि क्षेत्र के लिए एक ऐतिहासिक निर्णय है। इसका मुख्य उद्देश्य किसानों और प्रायोजकों के बीच कृषि करारों के लिए एक विधिक व्यवस्था स्थापित करना है ताकि किसानों को उनके उत्पादों का उचित एवं लाभकारी मूल्य मिल सके। कृषि उपज के लिए इलेक्ट्रॉनिक व्यापार और ई-प्लेटफॉर्म की व्यवस्था किसानों को भौतिक दूरियों के कारण आने वाली कठिनाइयों से मुक्त करेगी। मंडी शुल्क की छूट से भी किसानों को फायदा हो रहा है।

सरकार ने वर्ष 2020-21 विपणन मौसम की खरीफ फसलों के न्यूनतम समर्थन मूल्यों (एमएसपी) में अपेक्षाओं के अनुरूप वृद्धि की है। ये मूल्य, उत्पादन लागत पर 50 प्रतिशत से 83 प्रतिशत का मुनाफा जोड़कर निर्धारित किए गए हैं। इसका सीधा लाभ देश के करोड़ों किसानों को मिलेगा। मोदी सरकार का शुरू से ही प्रयास रहा है कि किसानों को उनकी उपज की लागत का कम से कम डेढ़ गुना मूल्य अवश्य मिले। पूरे देश में कृषि मुनाफे का व्यवसाय बने, छोटे किसान की ताकत बढ़े, उत्पादन और उत्पादकता बढ़े, किसानों को विपणन का उचित प्लेटफॉर्म मिले, किसान प्रोसेसिंग और पैकेजिंग में जाएं, इसके लिए प्रधानमंत्री ने 10 हजार कृषि उत्पादक संगठन (एफ.पी.ओ.) बनाने की घोषणा की थी। प्रसन्नता की बात है कि हम इस दिशा में तेज़ी से आगे बढ़े हैं।

प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने कहा है कि यह कोविड 19 की चुनौती को अवसर में परिवर्तित करने का समय है। आत्मनिर्भरता का मार्ग यहीं से खुल रहा है। इसके मूल में हमारे देश का अन्नदाता किसान है और सबसे पहले उसी की चिंता की गई है। वास्तव में गांव, गरीब और किसान के उत्थान का लक्ष्य पूरा करने का संकल्प निश्चित रूप से भविष्य में हमारे किसान भाइयों के चेहरों पर समृद्धि की आभा बिखेरेगा। इसमें परंपरागत कृषि की जगह वैज्ञानिक पद्धति और आधुनिक प्रौद्योगिकी पर आधारित खेती-किसानी की अहम भूमिका होगी। यह प्रसन्नता का विषय है कि आज हमारे देश में कृषि विज्ञान, कृषि इंजीनियरिंग और कृषि क्षेत्र की विभिन्न शाखाओं में नवीन पद्धतियों, अनुसंधानों और नवाचारों को तेज़ी से आगे बढ़ाने के लिए मिशन मोड में काम किया जा रहा है। वह दिन दूर नहीं, जब हमारे देश का किसान वैज्ञानिक सोच के साथ वैज्ञानिक तरीके से आधुनिक प्रौद्योगिकी का उपयोग कर देश के कृषि क्षेत्र को कृषि उद्योग के रूप में स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा और हमारे देश के उच्च शिक्षित युवा इसे एक उद्यम के तौर पर अपनाने में गर्व महसूस करेंगे।

(लेखक भारत सरकार में केंद्रीय कृषि एवं किसान कल्याण, ग्रामीण विकास तथा पंचायती राज मंत्री हैं।)

ई-मेल : ns.tomar@sansad.nic.in
mord.kb@gmail.com

भारत की सशक्त कृषि अनुसंधान प्रणाली

विकास यात्रा एवं नई दिशाएं

–डॉ. जगदीप सक्सेना

भारतीय कृषि अपनी अनेक गौरवशाली उपलब्धियों और कीर्तिमानों के साथ आज विश्व पटल पर प्रतिष्ठित है। विश्व की मात्र 2.4 प्रतिशत भूमि और लगभग 4 प्रतिशत पानी के साथ हमारी कृषि लगभग 18 प्रतिशत वैश्विक आबादी का सम्मानपूर्वक भरण–पोषण कर रही है। संपूर्ण कृषि उत्पादन के संदर्भ में भारत का विश्व में दूसरा स्थान है, जबकि दूध, दालों और जूट के उत्पादन में भारत शिखर पर है। फलों और सब्जियों के उत्पादन में देश ने हाल में दूसरा महत्वपूर्ण स्थान अर्जित किया है, जिससे हम पोषण सुरक्षा की ओर अग्रसर हुए हैं। इन अनूठी उपलब्धियों को साकार करने में 'किसान, विज्ञान और अनुसंधान' की प्रभावी त्रिवेणी ने केंद्रीय भूमिका निभाई है। हाल के वर्षों में भारत सरकार की कृषि और कृषक कल्याण नीतियों, कार्यक्रमों और योजनाओं ने कृषि विकास को विशेष गति तथा संबल प्रदान किया है।

विश्व की मात्र 2.4 प्रतिशत भूमि और लगभग 4 प्रतिशत पानी के साथ हमारी कृषि लगभग 18 प्रतिशत वैश्विक आबादी का सम्मानपूर्वक भरण-पोषण कर रही है। संपूर्ण कृषि उत्पादन के संदर्भ में भारत का विश्व में दूसरा स्थान है, जबकि दूध, दालों और जूट के उत्पादन में भारत शिखर पर है। फलों और सब्जियों के उत्पादन में देश ने हाल में दूसरा महत्वपूर्ण स्थान अर्जित किया है, जिससे हम पोषण सुरक्षा की ओर अग्रसर हुए हैं। धान, गेहूं, गन्ना, कपास और मूंगफली के उत्पादन में भी भारत का दूसरा स्थान है। इसी प्रकार मछली उत्पादन में भी देश ने हाल में द्वितीय स्थान प्राप्त कर लिया है।

वर्ष 1950-51 से अब तक देश के खाद्य अनाज उत्पादन में 5.4 गुना से अधिक, बागवानी फसलों में 10.1 गुना से अधिक, मात्स्यिकी उत्पादन में 15.5 गुना से अधिक, दूध उत्पादन में 10 गुना से अधिक और अंडों के उत्पादन में 48.1 गुना से अधिक वृद्धि हुई है। इन अनूठी उपलब्धियों को साकार करने में 'किसान, विज्ञान और अनुसंधान' की प्रभावी त्रिवेणी ने केंद्रीय भूमिका निभाई है। हाल के वर्षों में भारत सरकार की कृषि और कृषक कल्याण नीतियों, कार्यक्रमों और योजनाओं ने कृषि विकास को विशेष गति तथा संबल प्रदान किया है।

स्वतंत्रता के बाद देश में कृषि अनुंसधान के सशक्तीकरण की एक ठोस रणनीति बनाई गई, जिसके अंतर्गत एक व्यापक राष्ट्रीय कृषि अनुसंधान प्रणाली का विकास किया गया। इसमें कृषि शिक्षा और कृषि प्रसार को भी प्रमुखता के साथ जोड़ा गया। आज इसका राष्ट्रव्यापी नेटवर्क देश के कोने-कोने में कृषि विकास की अलख

जगा रहा है। परंतु इसका बीजारोपण आज़ादी से कई दशक पहले ब्रिटिशकाल में हुआ था।

नींव से नेटवर्क तक

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में बार-बार अकाल और भुखमरी ने ब्रिटिश सरकार को झकझोर दिया था। परंतु इसका कारण संवेदनशीलता नहीं थी, बल्कि इंग्लैंड भेजे जाने वाले कृषि आधारित कच्चे माल की आपूर्ति में बार-बार उत्पन्न होने वाली बाधा थी, जिससे इंग्लैंड का औद्योगिक उत्पादन और कारोबार प्रभावित होता था। उन्नीसवीं सदी में भारत में हर बारहवें साल भयंकर अकाल पड़ता था। शताब्दी के दौरान तबाही मचाने वाले सात बड़े अकालों ने लगभग 20 करोड़ आबादी को प्रभावित किया। वर्ष 1876-78 के अकाल में लगभग छह करोड़ लोग प्रभावित हुए और भुखमरी से मरने वालों की तादाद 5,250,000 से अधिक थी। इस घटना से विचलित होकर ब्रिटिश सरकार ने सन् 1880 में अकाल आयोग का गठन किया, जिसका मुख्य उद्देश्य भारत में कृषि दशा को संकट से उबारने के उपाय बताना था।

आयोग ने अपनी रिपोर्ट में एक केंद्रीय (शाही) कृषि विभाग के गठन का सुझाव दिया और इसके अंतर्गत विभिन्न प्रांतों में कृषि विभाग खोलने की सिफारिश भी की। इससे पूर्व सन् 1871 में लॉर्ड मेयो (भारत के चौथे वायसराय) और ए. ओ. ह्यूम (बंगाल सिविल सर्विस के सदस्य और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के संस्थापक) की पहल पर ब्रिटिश सरकार ने एक केंद्रीय राजस्व, कृषि एवं व्यापार विभाग का गठन किया था, परंतु जैसाकि नाम से स्पष्ट है इसका मुख्य कार्य राजस्व अर्जन और संग्रह था। लेकिन हां, यह पहला अवसर था जब ब्रिटिश सरकार ने भारत में कृषि को महत्व दिया था, भले ही वह हाशिए तक सीमित था।

सन् 1898 और 1900 के अकाल आयोगों ने भी पहले आयोग की सिफारिशों पर ज़ोर दिया और इसे शीघ्र लागू करने की ज़रूरत बताई। संयोग से इसी दौरान लॉर्ड कर्जन भारत के वायसराय बने, जो स्वयं एक किसान परिवार से थे। पदभार संभालने के एक साल के भीतर ही, सन् 1899-90 के दौरान, देश में पिछले 200 वर्षों का सबसे भयंकर अकाल पड़ा। लगभग पूरे देश में अकाल के व्यापक और गहरे प्रभाव को देखते हुए लॉर्ड कर्जन ने भारत में एक समग्र कृषि अनुसंधान संस्थान की स्थापना का निर्णय लिया। फलस्वरूप सन् 1905 में बिहार के दरभंगा ज़िले में एक विशाल 'इम्पीरियल एग्रीकल्चरल रिसर्च इंस्टीट्यूट' की स्थापना हुई, जिसे देश के पहले कृषि अनुसंधान संस्थान और कॉलेज के रूप में मान्यता और गौरव प्राप्त हुआ। यह संस्थान और स्थान बाद में 'पूसा' नाम से विख्यात हुआ, जिसके पीछे एक छोटी-सी कहानी है। लॉर्ड कर्जन को इस काम के लिए अपने पारिवारिक मित्र श्री हेनरी फिप्स (शिकागो, अमेरिका) से कुल 30,000 पौंड का दान प्राप्त हुआ था। इसलिए संस्थान में 'फिप्स फ्रॉम यूएसए' की पट्टिका लगाई गई, जो अपने संक्षिप्त रूप 'पीयूएसए' यानी 'पूसा' के नाम से प्रसिद्ध हुआ। संस्थान ने तत्परता के साथ कार्य करना शुरू कर दिया, परंतु सन् 1934 के भयंकर भूकंप में इस भव्य भवन का एक बड़ा हिस्सा क्षतिग्रस्त हो गया। इसलिए इसे राजधानी दिल्ली के बाहरी क्षेत्र में स्थित एक विशाल भूखंड पर स्थानांतरित करने का निर्णय लिया गया। एक सुंदर और प्रभावशाली परिसर का निर्माण हुआ, जिसका शुभारंभ सन् 1936 में तत्कालीन वायसराय लॉर्ड लिनलिथगो ने किया। आज यही संस्थान देश-विदेश में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान (पूसा इंस्टीट्यूट) के नाम से विख्यात है। देश के कृषि विकास और अनुसंधान प्रणाली में इस संस्थान की अहम् भूमिका सदैव सराहनीय तथा प्रशंसनीय रही है। सन् 1960 के दशक में हरितक्रांति को साकार करके देश को खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भर बनाना इस संस्थान का सर्वोत्कृष्ट योगदान है, जिसे अंतरराष्ट्रीय ख्याति प्राप्त हुई। वर्तमान में यह संस्थान भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के प्रशासनिक नियंत्रण में कार्य कर रहा है।

आज भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (आईसीएआर के नाम से लोकप्रिय) देश की राष्ट्रीय कृषि अनुसंधान, शिक्षा और प्रसार प्रणाली का सूत्रधार, कर्णधार और प्रमुख स्तंभ है। परंतु इसका जन्म भी ब्रिटिशकाल में हुआ था। ब्रिटिश सरकार ने सन् 1926 में लॉर्ड लिनलिथगो की अध्यक्षता में एक 'रॉयल कमीशन ऑन एग्रीकल्चर' का गठन किया, जिसका उद्देश्य देश में कृषि विकास एवं ग्रामीण अर्थव्यवस्था को बेहतर बनाने के उपाय सुझाना था। आयोग ने अपनी रिपोर्ट में एक ऐसी राष्ट्रीय संस्था के गठन का प्रस्ताव दिया, जो देशभर में कृषि अनुसंधान (पशु विज्ञान अनुसंधान सहित) को प्रोत्साहन तथा दिशा-निर्देश देकर संगठित और समन्वित कर सके।

आयोग की सिफारिश के आधार पर 16 जुलाई, 1929 को 'इम्पीरियल कौंसिल ऑफ एग्रीकल्चरल रिसर्च' की स्थापना हुई, जिसे आज़ादी के बाद 'आईसीएआर' का नाम मिला। देश के विभिन्न प्रांतों में कार्य कर रहे कृषि विभागों को इसके अंतर्गत लाकर समन्वित कृषि अनुसंधान की ओर पहला कदम उठाया गया।

इस समय देश में मुख्य रूप से औद्योगिक महत्व की फसलों पर अनुसंधान और विकास कार्य के लिए विभिन्न केंद्रीय 'कमोडिटी कमेटी' कार्य कर रहीं थी। इन पर होने वाला खर्च आंशिक रूप से सरकार द्वारा वहन किया जाता था, जबकि शेष भाग इन फसलों के निर्यात पर लगने वाले कर से प्राप्त किया जाता था। ऐसी पहली कमेटी कपास पर सन् 1921 में बनाई गई थी, इसका नाम था 'द इंडियन सेंट्रल कॉटन कमेटी'। इसके अंतर्गत किए गए अनुसंधान कार्य के कारण कपास की नई और सुधरी किस्मों का विकास हुआ और कपास की गुणवत्ता भी बेहतर हुई। कमेटी के अंतर्गत कुछ फसलों के अनुसंधान संस्थान या केंद्र भी खोले गए।

कपास कमेटी की उपलब्धियों से उत्साहित होकर कुछ अन्य व्यावसायिक फसलों के लिए भी ऐसी कमेटी गठित की गईं, जैसे लाख, जूट, गन्ना, तंबाकू, नारियल, तिलहन, मसाले, काजू और सुपारी पर। आईसीएआर के अस्तित्व में आने के बाद इसके उपाध्यक्ष

इन कमोडिटी कमेटी के अध्यक्ष के रूप में अपना मार्ग-निर्देशन देते थे। सन् 1965 में इन कमोडिटी कमेटी को भंग कर दिया गया और इनके अनुसंधान संस्थानों को आईसीएआर में समाहित कर दिया गया। दूसरी ओर कुछ विशिष्ट अनुसंधान संस्थान आज़ादी से पहले से सक्रिय थे, जिन्हें आईसीएआर में शामिल किया गया। इनमें 'पूसा इंस्टीट्यूट' सर्वप्रमुख था। पुणे में सन् 1889 में स्थापित 'इम्पीरियल बैक्टीरियोलॉजिकल लेबोरेटरी' बाद में मुक्तेश्वर स्थानांतरित हुई, और आज यह भारतीय पशुचिकित्सा अनुसंधान संस्थान के नाम से विख्यात है। अब इसका मुख्य परिसर इज्जतनगर, बरेली (उत्तर प्रदेश) में है। इसी तरह बंगलौर में सन् 1923 में 'इम्पीरियल इंस्टीट्यूट ऑफ एनीमल हस्बैंड्री एंड डेयरिंग' की स्थापना की गई थी, जो अब करनाल में राष्ट्रीय डेयरी अनुसंधान संस्थान के नाम से देश-विदेश में कीर्ति का परचम लहरा रहा है।

आज़ादी के बाद जैसे-जैसे देश में विकास ने रफ्तार पकड़ी, वैसे-वैसे कृषि विकास को गति देने वाले अनेक कारक भी सामने आए। समय के साथ जनसंख्या में सतत् वृद्धि हुई, 'रोटी, कपड़ा और मकान' की आवश्यकता ने ज़ोर पकड़ा, खाद्य और पोषण सुरक्षा देश की प्राथमिकता बन गईं, आर्थिक विकास के साथ भोजन में विविधता की मांग बनी और अंततः अन्नदाता का आर्थिक उद्धार देश का संकल्प बन गया। इन चुनौतियों का सामना करने के लिए समय-समय पर कुछ विशिष्ट फसलों या फसल समूहों पर अनुसंधान तथा विकास को सशक्त और तेज़ बनाया गया। इनके उत्पादन और उत्पादकता में असाधारण वृद्धि हुई, जिससे कृषि क्षेत्र में देश ने अनेक क्रांतियां दर्ज की। हरितक्रांति ने देश को खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भर बनाया, वहीं श्वेतक्रांति से भारत पूरे विश्व में दूध उत्पादन में सिरमौर बन गया। 'सुनहरी क्रांति' ने देश को फल उत्पादन में अग्रणी बना दिया। पीली क्रांति से हमने खाद्य तेलों के उत्पादन में तेज़ कदम बढ़ाए। नीली क्रांति से देश में मछली उत्पादन का परिदृश्य बदल गया। इनके अलावा, मांस उत्पादन, अंडा उत्पादन, रेशा उत्पादन और सब्जी उत्पादन में भी क्रांतिकारी सुधार हुए।

आज देश एक समग्र, सतत् और 'सदाबहार क्रांति' की ओर अग्रसर है। कृषि अनुसंधान व विकास की इस यात्रा में आईसीएआर ने देशभर में विभिन्न फसलों और अन्य कृषि तथा पशुधन आधारित जिंसों (कमोडिटी) पर अनुसंधान के लिए अनुसंधान संस्थानों का जाल बना दिया। कृषि में मिट्टी, मौसम और जलवायु की विविधता की अहम् भूमिका को देखते हुए प्रमुख संस्थानों के क्षेत्रीय-स्तर पर अनुसंधान स्टेशन भी खोले गए। इसी बीच, अखिल भारतीय समन्वित परियोजनाओं (एआईसीआरपी) की शुरुआत भी हुई, जिसका मूल विचार अंतरराष्ट्रीय संगठन 'द रॉकफेलर फाउंडेशन' से प्राप्त हुआ था। सन् 1950 के दशक में यह संस्था मैक्सिको, केंद्रीय अमेरिका और कैरिबियन देशों में अनेक फसलों के सुधार कार्यक्रम को संचालित कर रही थी। भारत सरकार ने इसके साथ सन् 1956 में एक समझौता करके मक्का में सुधार करने की ज़िम्मेदारी सौंप दी। रॉकफेलर फाउंडेशन के दो मक्का वैज्ञानिक भारत आए और उन्होंने अखिल भारतीय-स्तर पर मक्का के उत्पादन से जुड़े विविध पहलुओं को जाना, समझा और एक रिपोर्ट प्रस्तुत की। रिपोर्ट में देश के विभिन्न भागों में अनुसंधान और परीक्षण करने की बात कही गई थी। आईसीएआर ने रिपोर्ट के अनुसार अनुसंधान कार्य प्रारंभ किया, जिसके परिणामस्वरूप सन् 1961 में भारत में मक्का के अधिक उपजशील संकर सामने आए। यह एक बड़ी सफलता थी जिससे उत्साहित होकर सन् 1965 में आईसीएआर ने 'एआईसीआरपी' को अपने अनुसंधान कार्यक्रमों में एक स्थायी और महत्वपूर्ण जगह दी। इसके अंतर्गत अनेक कृषि जिंसों और उत्पादों में सुधार के लिए एआईसीआरपी शुरू की गई। प्रत्येक एआईसीआरपी में देश के विभिन्न भागों में स्थित अनुसंधान संस्थान/रिसर्च स्टेशन/कृषि विश्वविद्यालय आदि एक नेटवर्क के रूप में मुख्य केंद्र से जुड़े रहते हैं और समन्वित रूप से फसल सुधार के लिए अनुसंधान एवं विकास कार्य करते हैं। राष्ट्रीय कृषि अनुसंधान प्रणाली में अपने उल्लेखनीय योगदानों के कारण एआईसीआरपी का एक महत्वपूर्ण और प्रतिष्ठित स्थान है।

कृषि अनुसंधान में संस्थानात्मक विकास की राह पर आगे बढ़ते हुए वर्तमान में आईसीएआर का एक विशाल और व्यापक अनुसंधान नेटवर्क है, जिसकी उपस्थिति देश के प्रत्येक भाग में देखी जा सकती है। यहां यह बताना भी समीचीन होगा कि आईसीएआर देश में कृषि शिक्षा और कृषि प्रसार की केंद्रीय एजेंसी भी है और इनके अंतर्गत भी आईसीएआर ने एक राष्ट्रव्यापी नेटवर्क विकसित किया है। वर्तमान में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के अंतर्गत 69 राष्ट्रीय अनुसंधान संस्थान कार्य कर रहे हैं, जिनमें से चार सर्वप्रमुख संस्थानों को विश्वविद्यालय का दर्जा (डीम्ड यूनिवर्सिटी) प्राप्त है। इनके अलावा 14 राष्ट्रीय अनुसंधान केंद्र, छह राष्ट्रीय ब्यूरो और 13 निदेशालय/परियोजना निदेशालय भी आईसीएआर के अंतर्गत सक्रिय हैं। एआईसीआरपी की संख्या भी धीरे-धीरे बढ़कर 60 पर पहुंच गई है और इसके साथ 19 नेटवर्क परियोजनाएं भी कार्य कर रही हैं। आईसीएआर द्वारा विशिष्ट उद्देश्यों के लिए 10 अन्य परियोजनाएं भी संचालित की जा रही हैं। कृषि शिक्षा के क्षेत्र में तीन केंद्रीय विश्वविद्यालय सीधे आईसीएआर के नियंत्रण में कार्य कर रहे हैं, जबकि 64 राज्य कृषि विश्वविद्यालयों को आईसीएआर द्वारा वित्तीय व तकनीकी सहायता और मार्गदर्शन प्रदान किया जाता है। कृषि प्रसार के लिए देश को 11 जोंस में बांटकर प्रत्येक ज़ोन में कृषि प्रौद्योगिकी अनुप्रयोग अनुसंधान संस्थान स्थापित किए गए हैं और प्रत्येक संस्थान के अंतर्गत ज़िला-स्तर पर कृषि विज्ञान केंद्र बनाए गए हैं, जो सीधे किसानों के संपर्क में कार्य करते हैं। वर्तमान में पूरे देश में 721 कृषि विज्ञान केंद्र सक्रियता से अपनी अहम् भूमिका निभा रहे हैं। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के अंतर्गत कार्यरत कृषि अनुसंधान, शिक्षा और प्रसार की यह प्रणाली विश्व की विशाल और व्यापक प्रणालियों में से एक है।

सन् 2050 में कैसा होगा कृषि अनुसंधान का स्वरूप

कृषि और भोजन संबंधी भविष्य की चुनौतियों का नियोजित कृषि अनुसंधान के माध्यम से सामना करने के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (आईसीएआर) ने गहन विचार-विमर्श और अध्ययन के उपरांत 'विज़न 2050' नामक महत्वपूर्ण दस्तावेज़ तैयार किया है। इसके अनुसार सन् 2050 में भारत की आबादी लगभग 1.65 अरब हो जाएगी, जिसमें से लगभग 50 प्रतिशत शहरों में जीवनयापन करेंगे। मध्यम आय वर्ग का आधार बढ़कर आबादी के 30 प्रतिशत तक पहुंच जाएगा और भारतीयों की औसत वार्षिक आय बढ़कर 4,01,839 रुपये प्रति व्यक्ति हो जाएगी, जो सन् 2010-11 में मात्र 53,331 रुपये प्रति व्यक्ति थी। अनुमान यह भी बताते हैं कि सन् 2035 के बाद ग्रामीण आबादी की वृद्धि दर नकारात्मक हो जाएगी। इसका अर्थ यह कि कृषि जोतों का प्रति इकाई आकार बढ़ जाएगा, ग्रामीण बाज़ारों में संकुचन होगा और खेती में मशीनीकरण का वर्चस्व होगा। कृषि का स्वरूप बदलकर व्यवसाय-उन्मुख हो जाएगा, जिसका संचालन भली-भांति प्रशिक्षित कृषक उद्यमी या कृषक उत्पादक कंपनियां करेंगी। अध्ययन बताते हैं कि सन् 2050 में प्रति व्यक्ति ऊर्जा उपयोग बढ़कर 3,000 किलो कैलोरी हो जाएगा। इसे पूरा करने के लिए खाद्यान्नों की मांग में लगभग 50 प्रतिशत की वृद्धि होगी जबकि फल, सब्जियों और पशुधन उत्पादों की मांग में 100 से 300 प्रतिशत तक की बढ़ोत्तरी अनुमानित है।

इस परिदृश्य में यह आवश्यक हो गया है कि कृषि अनुसंधान एवं विकास के एजेंडे को मुख्य रूप से विज्ञान, नवोन्मेष (इनोवेशन) तथा तकनीक के माध्यम से नया स्वरूप दिया जाए। इसके लिए सर्वप्रथम आवश्यकता है विभिन्न कृषि जिंसों की प्रति इकाई उत्पादकता को बढ़ाना। फसलों और पशुधन में आनुवांशिक सुधार करके किस्मों/नस्लों को अधिक उपजशील बनाना एक प्रभावी उपाय है। इसलिए जैव प्रौद्योगिकी (बायोटेक्नोलॉजी) आधारित आनुवांशिक सुधार की तकनीकों के विकास को प्राथमिकता के दायरे में लाने का प्रयास हो रहा है। जेनेटिक इंजीनियरिंग से मनचाही खूबियों वाली फसलें तैयार करने का सिलसिला शुरू हो गया है। अनेक देशों में इनकी व्यावसायिक खेती ने आशाजनक परिणाम दिए हैं, परंतु हमारे देश में बीटी-कॉटन के बाद अभी तक किसी अन्य जीएम फसल को व्यावसायिक खेती की सरकारी मंजूरी नहीं मिल पाई है। परंतु बायो-टेक्नोलॉजी की अन्य तकनीकों के माध्यम से रोगरोधी, कीटरोधी तथा बेहतर पोषणिक गुणवत्ता वाली फसलें विकसित की जा रही हैं और इनकी व्यावसायिक खेती भी प्रारंभ हो गई है। आईसीएआर ने भविष्य में 'हरित जैव प्रौद्योगिकी' आधारित तकनीकों को प्रोत्साहन देने की योजना बनाई है। साथ ही, 'श्वेत जैव प्रौद्योगिकी' को भी बढ़ावा दिया जा रहा है, जिसके अंतर्गत सूक्ष्मजीवों (मुख्य रूप से बैक्टीरिया) का उपयोग करके नए और कृषि उपयोगी उत्पाद तैयार किए जाते हैं, जैसे जैव उर्वरक, जैव कीटनाशी आदि। जलवायु परिवर्तन के संकट का सामना करने के लिए फसलों में सूखारोधी, जलभराव के प्रति सहनशील, उच्च तापमान सहने योग्य और कम नमी (पानी) में पनपने वाली फसल किस्मों के विकास का कार्य तेज़ कर दिया गया है। नई किस्मों के विकास में नैनो टेक्नोलॉजी, जीनोमिक्स, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी, जैसी आधुनिक तकनीकों के उपयोग को बढ़ावा देने की योजना बनाई गई है। इन विधाओं का इस्तेमाल मिट्टी और पानी जैसे प्राकृतिक संसाधनों के कुशल उपयोग और संरक्षण को बढ़ावा देने के लिए भी किया जा रहा है। कृषि की गहनता को बढ़ाकर प्रति इकाई भूमि उत्पादकता में वृद्धि करने के लिए 'इनोवेशन' को प्राथमिकता और प्रोत्साहन देने की योजना है।

पशुधन के संदर्भ में नस्लों के आनुवांशिक सुधार के लिए प्रजनन की आधुनिक तकनीकों का विस्तार किया जा रहा है। आशा है सन् 2050 तक कृत्रिम गर्भाधान एक सामान्य प्रक्रिया के रूप में सभी पशुपालकों द्वारा अपनाई जाएगी, जबकि आईवीएफ-ईटीटी (इन विट्रो फर्टिलाइज़ेशन-एम्ब्रयो ट्रांसफर टेक्नोलॉजी) जैसी नई तकनीकें भी प्रचलन में आ जाएंगी। बेहतर उत्पादन और प्रदर्शन करने वाले पशुओं की क्लोनिंग को भविष्य की एक प्रमुख आशा के रूप में देखा जा रहा है। ट्रांसजीनिक पशुओं का उत्पादन भी एक नई किरण है, परंतु इसके मार्ग में अनेकानेक वैज्ञानिक, सामाजिक और नैतिक बाधाएं हैं, जिन्हें दूर करना आवश्यक है। बायोटेक्नोलॉजी के माध्यम से पशुओं की रोगरोधी नस्लों का विकास भी भविष्य के अनुसंधान का एक प्रमुख एजेंडा है। परंतु नई तकनीकों द्वारा प्रभावशाली और सस्ते टीकों का विकास जल्दी ही पशुपालकों को बड़ी राहत देने वाला है।

कृषि अनुसंधान को प्रोत्साहन देने के लिए वैश्विक संगठनों के साथ साझेदारी को व्यापक और मज़बूत बनाया जा रहा है। विशिष्ट समस्याओं और चुनौतियों के समाधान के लिए देश में 'उत्कृष्टता केंद्र' स्थापित करने की पहल हो गई है, जिसे भविष्य में अधिक विस्तार दिए जाने की योजना है। आपसी सहयोग, जानकारियों की साझेदारी, संसाधनों का इष्टतम उपयोग और नवोन्मेष भविष्य के कृषि अनुसंधान के मूल स्तंभ हैं।

फसल विज्ञान और बागवानी अनुसंधान

आज़ादी के बाद देश के सामने बड़ी समस्या और चुनौती अपनी आबादी का भरण-पोषण था। अनाज के अनेक श्रेष्ठ उपजाऊ और उत्पादक क्षेत्र पाकिस्तान के हिस्से में चले गए थे। अकाल और भुखमरी की समस्या थी। विदेशों से खराब गुणवत्ता वाला लाल गेहूं भारत आता था, जिस पर अधिसंख्य भारतीय अपने भोजन के लिए निर्भर थे। इसलिए फसल विज्ञान अनुसंधान की सर्वोच्च प्राथमिकता अनाज वाली फसलों का कुल उत्पादन बढ़ाना था। इसके अंतर्गत उत्पादन क्षेत्र का विस्तार और प्रति हेक्टेयर उत्पादकता बढ़ाना मुख्य लक्ष्य निर्धारित किए गए। नई किस्मों के विकास पर भी अनुसंधान प्रारंभ किया गया। नई दिल्ली स्थित भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान की अगुआई में अनेक संस्थानों और कृषि विश्वविद्यालयों में अनाज उत्पादन बढ़ाने के वैज्ञानिक प्रयास किए गए। ऐसी अनेक कोशिशों का परिणाम थी सन् 1960 के दशक में हुई हरितक्रांति, जिसने भारत को अन्न उत्पादन में आत्मनिर्भर बना दिया। अन्न दासता से सदा के लिए मुक्ति दिला दी। इसके बाद फसल विज्ञान अनुसंधान ने कभी पीछे मुड़कर नहीं देखा। सन् 1990 के दशक में हुई 'पीली क्रांति' से खाद्य तेलों के उत्पादन में असाधारण वृद्धि हुई। संस्थानात्मक-स्तर पर देखें तो वर्तमान में आईसीएआर के अंतर्गत 13 राष्ट्रीय संस्थान, तीन ब्यूरो, नौ परियोजना निदेशालय, दो राष्ट्रीय अनुसंधान केंद्र, 27 एआईसीआरपी और पांच अखिल भारतीय नेटवर्क परियोजनाओं का राष्ट्रव्यापी नेटवर्क फसल विज्ञान पर तत्परता से अनुसंधान कार्य में संलग्न है। अकेले आईसीएआर के नेटवर्क ने फसलों की लगभग 3,300 नई किस्में और संकर विकसित करके देश के किसानों को सौंपे हैं।

सन् 1970 के दशक में हमारे वैज्ञानिकों ने दुनिया का पहला बाज़रा का संकर विकसित किया और विश्व को कपास का पहला संकर देने की पहल भी भारत में की गई। गहन अनुसंधान द्वारा विकसित गेहूं और गन्ने की किस्में पूरे भारत में लोकप्रिय हैं और अधिकांश उत्पादन क्षेत्र पर इनका वर्चस्व है। बासमती धान की नई किस्म ने बासमती निर्यात को जबर्दस्त उछाल दिया है। अनुसंधान की आधुनिक दिशाओं में कार्य करते हुए भारतीय वैज्ञानिकों ने धान के जीनोम विज्ञान के वैश्विक प्रयास में अहम् योगदान दिया। कुल 33 प्रमुख फसलों की डीएनए फिंगरप्रिंटिंग की गई। फसल विज्ञान अनुसंधान का ही परिणाम है कि आज देश के प्रत्येक जलवायु क्षेत्र की खेती के लिए हमारे किसानों के पास लगभग सभी प्रमुख फसलों की उन्नत किस्में उपलब्ध हैं और इनके लिए विशेष रूप से विकसित कृषि क्रियाओं का पैकेज भी किसानों तक पहुंचाया गया है।

देश में बागवानी अनुसंधान की बात करें तो इसकी शुरुआत सन् 1954 में हुई जब भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली के वनस्पति विज्ञान विभाग में बागवानी अनुसंधान के लिए एक अलग सेक्शन खोला गया। यहां फलों और सब्जियों के साथ शोभाकारी फसलों पर भी शोधकार्य की रूपरेखा बनाई गई और सिलसिलेवार ढंग से अनुसंधान प्रारंभ हुआ। सन् 1959 में इस सेक्शन को उन्नत करके अलग विभाग के रूप में पुनर्गठित किया गया। अगला महत्वपूर्ण कदम बंगलौर में राष्ट्रीय दर्जे के भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान की स्थापना था। इसके बाद जैसे-जैसे भारतीय आबादी में बागवानी फसलों का महत्व बढ़ता गया, वैसे-वैसे इसका अनुसंधान नेटवर्क भी मज़बूत और व्यापक होता गया। आज देश में आईसीएआर के अंतर्गत बागवानी अनुसंधान का कार्य 10 केंद्रीय संस्थानों, छह निदेशालयों, सात राष्ट्रीय अनुसंधान केंद्रों, 13 एआईसीआरपी और छह नेटवर्क परियोजनाओं के माध्यम से संपन्न किया जा रहा है। इसका मुख्य उद्देश्य बागवानी फसलों का उत्पादन बढ़ाकर देशवासियों के लिए पोषण सुरक्षा सुनिश्चित करना और बागवानों को एक सशक्त आजीविका सुरक्षा प्रदान करना है।

हाल के वर्षों में अनेक राज्यों में बागवानी फसलें आर्थिक विकास का सूत्रधार बन गई हैं और देश के कृषि जीडीपी में बागवानी का योगदान 30.4 प्रतिशत तक पहुंचा गया है। पिछले कुछ वर्षों में देश के कुल बागवानी उत्पादन ने तेज़ी से आगे निकलकर कुल खाद्यान्न उत्पादन को पीछे कर दिया है। वैश्विक-स्तर पर भारत फलों और सब्जियों का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक है, परंतु आम, केला, नारियल, काजू, पपीता और अनार सहित कई फलों के उत्पादन में हम शिखर पर हैं। अपनी प्राचीन परंपरा को पुनर्जीवित करते हुए हमारा देश पुनः मसालों का सबसे बड़ा उत्पादक और निर्यातक बन गया है। ताज़े फलों और सब्जियों की निर्यात वृद्धि दर 14 प्रतिशत (मूल्य के अनुसार) और प्रसंस्करित फलों तथा सब्जियों की 16.27 प्रतिशत है। निर्यात में वृद्धि का एक प्रमुख कारण यह रहा कि वैज्ञानिकों ने सेब, आम, अंगूर, अमरूद जैसे फलों और प्याज, आलू, टमाटर, मटर जैसी सब्जियों के निर्यात के लिए अनुकूल अनेक किस्में विकसित करके बाग-बगीचों तक पहुंचाई हैं। साथ ही, प्रसंस्करण के अनुकूल किस्में भी तैयार की गई हैं। फूलों की खेती को बढ़ावा देने के लिए भी अनेक अनुसंधान आधारित उपाय विकसित किए गए हैं। बागवानी

अनुसंधान के विभिन्न माध्यमों से अब तक बागवानी फसलों की लगभग 1600 अधिक उपजशील किस्में तैयार की जा चुकी हैं।

पशु विज्ञान और मात्स्यिकी

भारत में पशुपालन एक प्राचीन परंपरा के रूप में सदियों से किसानों के साथ रहा है। इसने पारिवारिक पोषण सुरक्षा के साथ आजीविका सुरक्षा प्रदान करने में भी अहम् भूमिका निभाई है। वर्तमान में पशुपालन देश की अर्थव्यवस्था की एक प्रमुख कड़ी भी है। राष्ट्रीय सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में पशुपालन क्षेत्र का योगदान लगभग छह प्रतिशत आंका गया है, जबकि कृषि जीडीपी में यह योगदान 25 प्रतिशत है। भारतीय पशुपालन क्षेत्र अपने आधुनिक रूप में विश्व में प्रतिष्ठित है और पशुधन उत्पादों के निर्यात में भी अग्रणी है। इसका एक कारण यह भी है कि देश में पशुपालन विकास को सदैव पशु विज्ञान अनुसंधान का सशक्त संबल मिलता रहा है।

वर्तमान में आईसीएआर के पशु विज्ञान अनुसंधान नेटवर्क के अंतर्गत देश के विभिन्न भागों में 19 अनुसंधान संस्थान कार्य कर रहे हैं। इनमें दो समकक्ष विश्वविद्यालय, आठ राष्ट्रीय/केंद्रीय संस्थान, एक ब्यूरो, एक निदेशालय, एक परियोजना निदेशालय और छह राष्ट्रीय अनुसंधान केंद्र शामिल हैं। इसके अलावा, सात एआईसीआरपी और छह नेटवर्क अनुसंधान कार्यक्रम भी पशुपालन अनुसंधान को गति दे रहे हैं। इस विशाल नेटवर्क के विकास की कहानी सन् 1889 में प्रारंभ हुई जब पुणे में पहली 'इम्पीरियल वैक्टीरियोलॉजी लेबोरेटरी' की स्थापना हुई। उद्देश्य यह था कि पशुओं को वैज्ञानिक अनुसंधान के माध्यम से भयावह और घातक रिंडरपेस्ट रोग से मुक्ति दिलाई जाए। यह रोग एक महामारी की तरह फैलकर गोवंशीय पशुओं को बड़ी संख्या में हताहत करता था, इसलिए इसे 'कैटल प्लेग' भी कहा जाता था। पशुओं की महामारी से कृषि भी प्रभावित होती थी, इसलिए ब्रिटिश सरकार ने इस प्रयोगशाला की स्थापना की, परंतु पुणे में आबादी सघन थी और प्राकृतिक तापमान भी इस प्रकार के अनुसंधान के लिए अनुकूल नहीं था, इसलिए सन् 1893 में इसे सुरम्य और शीतल मुक्तेश्वर में स्थानांतरित कर दिया गया। पर्वतीय क्षेत्र में सुविधाओं की कमी के कारण इसकी एक प्रयोगशाला इज्जतनगर, बरेली में खोली गई। आज़ादी के बाद विशाल परिसर और आधुनिक सुविधाओं के साथ इसे भारतीय पशुचिकित्सा अनुसंधान संस्थान का नाम दिया गया। मुक्तेश्वर स्थित प्रयोगशालाएं संस्थान के अतिरिक्त परिसर या केंद्र के रूप में कार्य कर रही हैं।

निरंतर अनुसंधान और सहायक सरकारी नीतियों के कारण सन् 2006 में विश्व पशु स्वास्थ्य संगठन ने भारत को रिंडरपेस्ट से मुक्त घोषित कर दिया। इस संस्थान ने देश में पशु चिकित्सा को अनेक नए आयाम दिए और कीर्तिमान बनाए। रोगों की पहचान के लिए बनाए गए 'डायग्नोस्टिक्स' और रोगनिरोध के लिए टीकों का विकास, इस संस्थान की सर्वप्रमुख उपलब्धियां हैं।

दूसरी ओर, देश में डेयरी के महत्व को देखते हुए सन् 1923 में बंगलौर में 'इम्पीरियल इंस्टीट्यूट ऑफ ऐनीमल हैल्थ एंड डेयरिंग' की स्थापना की गई। करनाल और क्रटकमंड में 'कैटल ब्रीडिंग फार्म्स' को इसका अनुसंधान स्टेशन बनाया गया। सन् 1936 में इसे 'इम्पीरियल एग्रीकल्चरल रिसर्च इंस्टीट्यूट' के अंतर्गत लाकर सीधे भारत सरकार के नियंत्रण के अधीन किया गया।

आज़ादी के बाद डेयरी अनुसंधान, शिक्षा और विकास को मज़बूत बनाने के लिए करनाल के परिसर को 'राष्ट्रीय डेयरी अनुसंधान संस्थान' के रूप में उन्नत करने का प्रस्ताव पारित हुआ और सन् 1955 में इसकी आधारशिला रखी गई। बंगलौर वाला परिसर इस संस्थान का एक प्रमुख रिसर्च स्टेशन बन गया। आज एनडीआरआई, करनाल संपूर्ण दक्षिण-एशिया क्षेत्र का एक अग्रणी डेयरी संस्थान है। यहां संपन्न अनुसंधानों ने देश में 'श्वेतक्रांति' के सपने को साकार किया और देश को दूध

उत्पादन में विश्व का सिरमौर बनाया। पशु प्रजनन से संबंधित आधुनिक तकनीकों को यहां परिष्कृत तथा मानकीकृत किया गया। विश्व में भैंस का पहला क्लोन विकसित करने का श्रेय इसी संस्थान को है। आईसीएआर के पशु विज्ञान अनुसंधान नेटवर्क में गौवंशीय पशुओं कुक्कुट (मुर्गी, बत्तख, बटेर आदि), बकरी, भेड़, ऊंट, याक, मिथुन तथा पालतू पशुओं पर भी समग्र अनुसंधान किया जा रहा है, जिसमें पोषण, चिकित्सा, प्रजनन आदि पहलू शामिल हैं।

देश में मात्स्यिकी अनुसंधान की शुरुआत सन् 1947 में 'सेंट्रल इनलैंड फिशरीज़ स्टेशन' के रूप में कोलकाता (कलकत्ता) में हुई। परंतु जैसे-जैसे समुद्री मात्स्यिकी और खारे जल तथा शीतजल में मछली पालन का महत्व बढ़ा, वैसे-वैसे नए अनुसंधान संस्थान खोले गए। आज आईसीएआर के मात्स्यिकी अनुसंधान नेटवर्क में पांच केंद्रीय अनुसंधान संस्थान, एक समकक्ष विश्वविद्यालय, एक ब्यूरो, एक निदेशालय कार्य कर रहे हैं। साथ ही, पांच नेटवर्क परियोजनाएं भी हैं, जो विशिष्ट क्षेत्रों में अनुसंधानरत हैं। संस्थानों के अनुसंधान प्रयासों के परिणामस्वरूप प्रति हेक्टेयर मछली उत्पादकता में सार्थक वृद्धि हुई और आधुनिक तकनीकों की सहायता से सागरों में भी मत्स्य प्रग्रहण बढ़ गया है। मत्स्य तथा अन्य जलजीवों के उत्पादन में आए उछाल को देश में 'नीली क्रांति' का नाम दिया गया है। मछलियों में प्रजनन और बीज उत्पादन को अनुसंधान का आधार मिलने से मत्स्य पालकों को एक बड़ी राहत और सहायता मिली है।

आधुनिक दिशाओं में कार्य करते हुए लगभग 600 मत्स्य तथा शेलफिश प्रजातियों की डीएनए बारकोडिंग की गई है। नई तकनीकों और संसाधनों से युक्त नौकाएं तथा बड़े पोत तैयार किए गए हैं, जिनसे पर्यावरण अनुकूल मत्स्य प्रग्रहण में सहायता मिल रही है। जलीय स्रोतों से न्यूट्रास्यूटिकल तथा औषधीय उत्पादों के निर्माण ने नीली क्रांति को व्यावसायिक रूप से आकर्षक बना दिया है।

कृषि शिक्षा और प्रसार

आज़ादी के पहले कृषि शिक्षा एक उपेक्षित क्षेत्र था, क्योंकि वैज्ञानिक खेती अपनी जगह नहीं बना पाई थी और कृषि स्नात्तकों की कॅरियर संबंधी संभावनाएं अत्यंत सीमित थी। परंतु ब्रिटिश सरकार ने यह मान लिया था कि भारत के कृषि विकास के लिए योग्य और प्रशिक्षित युवाओं की आवश्यकता है। इसलिए सन् 1905 में जब दरभंगा में आईएआरआई की स्थापना हुई तो उसमें कृषि शिक्षा को भी अहम् स्थान दिया गया। इसी साल कोयंबटूर में भी एक कृषि कॉलेज की स्थापना की गई। कानपुर, लायलपुर और नागपुर में 1906 में, पुणे में 1907 में और सबौर में 1908 में कृषि कॉलेज खोले गए। सन् 1948 में देश में कुल 17 कृषि कॉलेज थे, जिनमें परास्नात्तक-स्तर पर शोध की सुविधा केवल 160 छात्रों के लिए थी।

सन् 1948-49 के दौरान विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग के अध्यक्ष डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने देश के विकास में कृषि की अहम् भूमिका को रेखांकित करते हुए ग्रामीण विश्वविद्यालयों की स्थापना की सिफारिश की। परंतु उस समय अनेक सामाजिक-राजनीतिक और आर्थिक कारणों से यह बात आगे नहीं बढ़ पाई। सन् 1950 के दशक में उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री गोविंद बल्लभ पंत ने कृषि विश्वविद्यालय की स्थापना के लिए पुरज़ोर प्रयास किया और अंततः सन् 1960 में देश का पहला कृषि विश्वविद्यालय पंतनगर में खोला गया। गोविंद बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय को अमेरिका के लैंड ग्रांट पैटर्न पर स्थापित किया गया था। सन् 1960 से 1965 के बीच उत्तर प्रदेश, उड़ीसा, राजस्थान, पंजाब, आंध्रप्रदेश, मध्य प्रदेश और मैसूर (कर्नाटक) में सात कृषि विश्वविद्यालय खोले गए। वर्तमान में राष्ट्रीय कृषि अनुसंधान शिक्षा एवं प्रसार प्रणाली के अंतर्गत 74 कृषि विश्वविद्यालय देश के युवाओं को कृषि के अनेक नए-पुराने विषयों में योग्य, प्रशिक्षित और पारंगत बना रहे हैं। इन संस्थानों की छात्र क्षमता 45,000 से अधिक है।

कृषि विश्वविद्यालयों के साथ लगभग 410 कृषि महाविद्यालय संलग्न हैं और यह पूरा नेटवर्क प्रति वर्ष लगभग 28,000 छात्रों को स्नात्तक-स्तर पर और 17,500 छात्रों को परा-स्नात्तक तथा पीएडी के स्तर पर दाखिला देता है। इसके अलावा, निजी क्षेत्र के 400 से अधिक कृषि महाविद्यालय भी देश में कृषि शिक्षा के विकास में योगदान दे रहे हैं। कृषि विश्वविद्यालयों का नेटवर्क शिक्षा के साथ अनुसंधान में भी सक्रिय है और महत्वपूर्ण योगदान दे रहा है। विशेष रूप से कृषि प्रसार में इनकी भूमिका सराहनीय रही है।

भारत की कृषि प्रसार प्रणाली अपने-आप में विशिष्ट, अनूठी और व्यापक है और इसके कर्णधार हैं कृषि विज्ञान केंद्र यानी केवीके। ज़िला-स्तर पर देशभर में स्थापित केवीके की संख्या 721 है, परंतु संख्या से अधिक महत्वपूर्ण है इनकी कार्यप्रणाली जो गांव-गांव में किसानों को तकनीकी रूप से समृद्ध और आर्थिक रूप से सशक्त बना रही है। उल्लेखनीय है कि देश में पहले कृषि विज्ञान केंद्र की स्थापना प्रायोगिक तौर पर सन् 1974 में पांडिचेरी में की गई थी। इसकी असाधारण सफलता और प्रभावशीलता से उत्साहित होकर देश में केवीके का एक विशाल नेटवर्क विकसित किया गया।

आईसीएआर के विशाल अनुसंधान नेटवर्क के अलावा वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद (सीएसआईआर), भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, जैव प्रौद्योगिकी विभाग और विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग के अनेक अनुसंधान संस्थानों में भी कृषि से संबंधित अनेक पहलुओं पर शोध कार्य किए जा रहे हैं। कुल मिलाकर लक्ष्य यह है कि देश में कृषि का विकास हो और कृषक का कल्याण हो, उम्मीद करते हैं कि सन् 2022 तक अन्नदाता की आमदनी को दुगुना करने का संकल्प भी पूरा हो सकेगा।

(लेखक भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली में प्रधान संपादक रह चुके हैं।)

ईमेल- jagdeepsaxena@yahoo.com

खाद्य सुरक्षा और आमदनी के लिए कृषि अनुसंधान

–जे. पी. मिश्रा

भारत में कृषि का विकास और अनाज उत्पादन में आत्मनिर्भरता राष्ट्रीय–स्तर पर भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद और राज्य-स्तर पर राज्य कृषि विश्वविद्यालयों के समन्वित प्रयासों का प्रतिफल है। समन्वित अनुसंधान प्रयासों के तहत् मिट्टी की उत्पादकता बढ़ाने, जल प्रबंधन के ज़रिए उसका भंडारण, कृषि क्षेत्र का विस्तार और कृषि दक्षता बढ़ाने संबंधी टेक्नोलॉजी का विकास किया गया है और खेतीबाड़ी के तौर-तरीकों से संबंधित कई पैकेज भी विकसित किए जा चुके हैं। भारत को आज़ादी के बाद इन्हीं उपायों से खाद्यान्न की कमी दूर करने में मदद मिली और वह न सिर्फ अपनी ज़रूरत से अधिक अनाज पैदा करने वाला बल्कि इसका निर्यात करने वाला देश बन गया है।

भारत जैसी कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था वाले देश में खेती और उससे संबद्ध गतिविधियों का शीघ्रता से सतत विकास देश की प्रगति का सशक्त माध्यम है। कृषि ऐसी स्थिति में आ चुकी है जिसमें वह मनुष्यों और मवेशियों की बढ़ती आबादी की भोजन, ईंधन, चारे, रेशे और इमारती लकड़ी जैसी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए ज़्यादा प्रासंगिक हो गई है। प्राचीनकाल से ही कृषि और शिकार करना मनुष्य की आजीविका, भोजन और आय का प्रमुख स्रोत रहे हैं। बाद में इसमें विविधता आई और कच्चे माल के लिए कृषि पर निर्भर कई गतिविधियां जैसे वस्त्र निर्माण, दुग्ध उत्पादन, मछली पकड़ना और इमारती लकड़ी काटना आदि इसमें शामिल हो गई। लेकिन किसी खास भौगोलिक क्षेत्र में सभी को खाद्य सुरक्षा उपलब्ध कराने में कृषि का महत्व अब भी बना हुआ है। इसी तरह प्राथमिक व्यवसाय के रूप में कृषि को अपनाने वालों की आमदनी के लिहाज से भी खेती अत्यंत महत्वपूर्ण है। जनसंख्या में लगातार बढ़ोत्तरी और हमारी जैसी अर्थव्यवस्था वाले देश में आहार संबंधी मांग में विविधता आ रही है और खाद्य पदार्थों तथा आहार से संबंधित वस्तुओं की मांग में भी लगातार वृद्धि हो रही है। दूसरी ओर, खेती के लिए भूमि और जल जैसे मूल संसाधनों के सीमित होने से इन्हें और बढ़ाना संभव नहीं रह गया है। उत्पादन और संसाधनों के उपयोग के बीच इस प्रतियोगिता ने समय के साथ-साथ कृषि उत्पादन में निरंतरता बनाए रखने के बड़े मुद्दे को सामने ला दिया है। खाद्य सुरक्षा और किसानों, कृषि मज़दूरों तथा खेती से संबंधित गतिविधियों में लगे लोगों की आमदनी तथा व्यापक परिप्रेक्ष्य में समूची मानवता के अस्तित्व के लिए प्राकृतिक संसाधनों की निरंतर उपलब्धता बनाए रखने में कृषि अनुसंधान की बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका रही है। फसल कटाई से पहले और कटाई के बाद के प्रबंधन पर ध्यान देकर इसने खाद्य सुरक्षा के तीन पहलुओं- उपलब्धता, पहुंच और सामर्थ्य पर कार्रवाई सुनिश्चित की है।

स्वतंत्रता से पहले कृषि अनुसंधान : भारत में कृषि अनुसंधान प्रणाली के विकास की प्रक्रिया 1869 के शुरू में प्रारंभ हुई, जब भारत के गवर्नर जनरल लॉर्ड मेयो ने भारत सरकार के तहत कृषि विभाग गठित करने की योजना तैयार की। इसी तरह के विभाग प्रांतों में भी गठित करने की योजना बनाई गई। भारत में कृषि के क्षेत्र में वैज्ञानिक अनुसंधान की बुनियाद 1889 में पुणे में इम्पीरियल बैक्टीरियोलाजिकल लैबोरेटरी की स्थापना से रखी गई जिसे बाद में 1895 में मुक्तेश्वर स्थानांतरित कर दिया गया। लॉर्ड कर्जन के समय 1905 में बिहार में पूसा में इम्पीरियल बैक्टीरियोलाजिकल रिसर्च लैबोरेटरी की स्थापना की गई। उसके बाद केंद्रीय संस्थाओं के साथ-साथ विभिन्न प्रांतों में कई कृषि विभागों और कॉलेजों की स्थापना हुई। बाद में समन्वय स्थापित करने वाली एक एजेंसी की आवश्यकता महसूस की गई। 1926 में रॉयल कमीशन ऑन एग्रीकल्चर ने इम्पीरियल कौंसिल ऑफ एग्रिकल्चरल रिसर्च (आईसीएआर) का प्रस्ताव किया ताकि पूरे भारत में कृषि अनुसंधान को प्रोत्साहन देने के साथ-साथ उसे दिशा दी जा सके और उसमें समन्वय स्थापित किया जा सके। आई.सी.ए.आर. को सोसाइटी पंजीयन अधिनियम, 1860 के तहत जुलाई 1929 में एक सोसाइटी के रूप में पंजीकृत कराया गया। 1935 में संस्थान को नई दिल्ली स्थानांतरित कर दिया गया। इम्पीरियल कौंसिल ऑफ एग्रिकल्चरल रिसर्च की स्थापना के समय वस्तुओं से संबंधित कुछ समितियां भी थीं। उन्होंने सरकार को मुख्य रूप से सलाहकार सेवा प्रदान करने वाली संस्था का काम किया। लेकिन सीमित पैमाने पर उसने कुछ खास फसलों, जैसे कपास, लाख, पटसन, गन्ना, नारियल, तम्बाकू, तिलहन, सुपारी, मसाले और काजू पर अनुसंधान का कार्य भी हाथ में लिया।

स्वतंत्रता के बाद कृषि अनुसंधान : स्वतंत्र भारत में खेती मुख्यतः वर्षा पर ही निर्भर थी। कपास, तिलहन और ज्वार-बाजरे जैसी फसलों पर सघन अनुसंधान को बढ़ावा देने के लिए 1954 में देश के विभिन्न कृषि जलवायु क्षेत्रों में इन फसलों पर क्षेत्रीय अनुसंधान तेज़ करने की परियोजना (पिरकॉम) बनाई गई और 1957 में मक्का की फसल के लिए अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना (एआईसीआरपी) शुरू की गई। अनुसंधान का एआईसीआरपी मॉडल सफल साबित हुआ। बाद में सभी प्रमुख वस्तुओं, प्राकृतिक संसाधनों, फार्म मशीनरी, पशुधन, गृह विज्ञान आदि पर भी इसी तरह की परियोजनाएं प्रारंभ की गईं। इन परियोजनाओं की मुख्य विशेषता यह थी कि इनमें केंद्र और राज्य सरकारों के प्रयासों को समन्वित कर दिया गया ताकि दोहरावट की वजह से व्यर्थ का खर्च न हो। 1950 के दशक से पहले देश में परंपरागत रूप से धान की लंबी अवधि की किस्मों की खेती की जाती थी जिन पर उर्वरकों का कम असर पड़ता था। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद जब उर्वरकों का इस्तेमाल लोकप्रिय होने लगा तो भारत को धान की ऐसी किस्मों की आवश्यकता पड़ी जो ज़्यादा उर्वरक देने से अधिक उपज देती थीं। धान की किस्मों के विकास के क्षेत्र में बड़ी उपलब्धि 1960 के दशक में अंतर्राष्ट्रीय चावल अनुसंधान संस्थान की मदद से हासिल की गई। इससे चीन की अर्ध–बौनी किस्मों के जीन का इस्तेमाल करके अधिक पैदावार देने वाली बौनी किस्मों के विकास में मदद मिली। धान पर अनुसंधान को बढ़ावा देने के लिए 1965 में धान पर अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना की शुरुआत की गई।

यह धान का उत्पादन, उत्पादकता और किसान के मुनाफे में बढ़ोत्तरी के लिए बहु-विषयक और अंतर-संस्थागत अनुसंधान में तालमेल कायम करने वाला मंच साबित हुआ है। धान की अत्यंत सघन खेती की शुरुआत 1965 में धान की अर्ध–बौनी किस्म ताइचुंग (नेटिव)-1 के विकास से शुरू हुई। कार्यक्रम के तहत पद्मा और जया किस्मों का पहले-पहल विकास किया गया। बाद में कार्यक्रम से अधिक उपज देने वाली कई उन्नतशील अर्ध–बौनी किस्में सामने आईं। अर्ध–बौनी किस्मों को अनाज उत्पादन की दृष्टि से लंबे पौधे वाली परंपरागत किस्मों की तुलना में श्रेष्ठतर पाया गया। धान की उत्पादकता बढ़ाने के लिए धान की संकर किस्म पर अनुसंधान 1970 में प्रारंभ हुआ। लेकिन इस

बारे में सघन प्रयास 1989 से ही शुरू हो सके। नतीजा यह हुआ कि पांच साल की छोटी-सी अवधि में सार्वजनिक और निजी क्षेत्र ने धान की छह संकर किस्मों का विकास कर लिया। इनमें से पहली चार संकर किस्में 1994 में जारी की गईं। 2001 के अंत तक इनकी संख्या 19 तक पहुंच गई। देश में कम वर्षा से लेकर सबसे कम वर्षा वाले शुष्क और अर्ध-शुष्क इलाकों में खाद्य सुरक्षा के लिहाज से मक्का, ज्वार-बाज़रा, सोरगम, जौ, रागी और बाज़रा जैसी फसलों की बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका है। 1957 से मक्का की 230 से अधिक किस्में (मिश्रित और संकर) विकसित की जा चुकी हैं। इनमें से 132 किस्में 1996 के बाद जारी संकर किस्में हैं और इनमें चार दर्जन जनता द्वारा विकसित 'सिंगल क्रॉस' किस्म की संकर नस्लें हैं। बाजरे और सोरगम की आधुनिक और संकर किस्मों के विकास का कार्य 1960 के मध्य से शुरू हुआ। इससे शुष्क और अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में इन किस्मों की उपज में भारी बढ़ोत्तरी हुई और मक्का, सोरगम और ज्वार के समग्र उत्पादन में वृद्धि हुई। फल और सब्जियां हमारे भोजन का अभिन्न अंग हैं और खाद्य सुरक्षा उपलब्ध कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। भारत में फलों और सब्जियों पर अनुसंधान का कार्य कई संस्थानों द्वारा किया जाता है और फलों व सब्जियों, मसालों, कंद वाली फसलों, आलू, शुष्क जलवायु के फलों, मशरूम और पुष्प उत्पादन को बढ़ावा देने के लिए अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना (ए.आई.सी.आर.पी.) शुरू की गई है।

उन्नतशील किस्मों की सफलता सरकार की तरफ से किए गए इन प्रयासों से संभव हुई है: (1) 1970 के दशक में राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय दोनों ही तरह के कृषि सुधार कार्यक्रामें में अधिक निवेश; (2) 1980 के दशक के दौरान कुशल बीज प्रणाली की शुरुआत व इसका विकास और निजी क्षेत्र को क्रमशः शामिल किया जाना; और (3) 1990 के दशक के बाद के वर्षों में बीज उद्योग में उदारीकरण।

उर्वरकों और सिंचाई के प्रति अत्यधिक संवेदनशील पेड़-पौधों की नई और संकर किस्में एक क्रांति की तरह थीं, लेकिन उनसे उत्पादन और संरक्षण के लिए मृदा और जल प्रबंधन की नई चुनौतियां भी पैदा हो गईं। जब जनसंख्या कम थी, तो साल में एक फसल लेना बड़ी सामान्य-सी बात थी। लेकिन आबादी के बढ़ने से कई फसलें लेना आम बात हो गई। परिणामस्वरूप जब ज़मीन पर मनुष्यों और मशीनों की गतिविधियां बढ़ीं तो मिट्टी और पानी से संबंधित मसले सामने आने लगे। आज़ादी के समय देश के काफी बड़े हिस्से पर खेती वर्षा पर निर्भर थी और करीब 83 प्रतिशत भूमि पर सिंचाई की कोई सुविधा नहीं थी। इसलिए सरकार ने पहली पंचवर्षीय योजना से ही सिंचाई परियोजनाओं को प्राथमिकता देना शुरू कर दिया था। इसके साथ-साथ सरकार ने मिट्टी में नमी के संरक्षण के लिए वैज्ञानिक समाधान उपलब्ध कराना, फसल उत्पादन, किस्मों का चयन, फसलों और फसली प्रणालियां, फसल प्रतिस्थापन, ज़मीन के वैकल्पिक उपयोग आदि के लिए 1987 में बारानी खेती पर अखिल भारतीय समन्वित

तालिका-1 : उन्नत टेक्नोलॉजी के उपयोग से खाद्यान्न उत्पादन और अन्य वस्तुओं के उत्पादन में बढ़ोत्तरी

वस्तु	उत्पादन (मि. टन)		समय वृद्धि (X)
	1950-51	2019-20	
खाद्यान्न*	50.83	295.67	5.82
दलहन*	8.41	23.01	2.74
तिलहन*	5.16	33.50	6.49
कपास*	0.52	6.13	11.79
गन्ना*	57.05	358.14	6.28
बागवानी*	96.56 (1991-92)	313.35	3.25
दूध*	17.00	187.70	11.04
मछली*	0.75	13.42	17.89
अंडा (संख्या अरब में)*	16.1(1985-86)	103.30	6.42
मांस*	1.9 (1998-99)	8.11	4.27

*तीसरे अग्रिम अनुमान, 2019-20, @प्रथम अग्रिम अनुमान, 2019-20; आंकड़े 2018-19 (स्रोत : कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय; पशुपालन, डेयरी और मत्स्य पालन मंत्रालय)

अनुसंधान परियोजना (ए.आई.सी.आर.पी.डी.ए.) शुरू की। इसके अंतर्गत अन्यत्र वर्षाजल प्रबंधन, समन्वित पोषण प्रबंधन, फसलों में विविधता लाने, भूमि के वैकल्पिक उपयोग, समन्वित कृषि प्रणालियों, जलवायु में बदलाव के लिए नीतियों, जैसे क्षेत्रों को प्राथमिकता देना शुरू कर दिया। उर्वरकों के दीर्घावधि उपयोग पर प्रयोग करने, लवण के असर वाली ज़मीन, कृषि मौसम विज्ञान और कृषि वानिकी की शुरुआत की गई ताकि खास क्षेत्रों में अनुसंधान को आगे बढ़ाकर अनाज की फसलों के अधिक उत्पादन के तौर-तरीकों और नियमों को बढ़ावा दिया जा सके। साथ ही, पशुधन और मछलीपालन के क्षेत्र में भी अनुसंधान की शुरुआत हुई ताकि नई किस्मों, उप प्रजतियों, नए गुणवत्ता मानदंडों और स्वास्थ्य तथा आरोग्य में सुधार लाया जा सके।

कृषि उपकरणों और मशीनरी पर अनुसंधान 1975 में शुरू किया गया। इसका उद्देश्य देश के विभिन्न क्षेत्रों की आवश्यकताओं के अनुसार उपकरणों तथा मशीनरी का विकास और परीक्षण करना तथा उन्हें लोकप्रिय बनाना था। इससे यंत्रों और उपकरणों आदि का इस्तेमाल करके दक्षता बढ़ाने और खेती की लागत कम करने में मदद मिलने के साथ-साथ कृषि संबंधी गतिविधियों में कड़ी मेहनत को कम करने में भी मदद मिली। भारत में अग्रिम पंक्ति की कृषि प्रसार प्रणाली की शुरुआत पुडुचेरी में कृषि विज्ञान केंद्र की स्थापना से प्रारंभ हुई। इस समय देश के प्रत्येक ज़िले में कम से कम एक कृषि विज्ञान केंद्र है और कई बड़े ज़िलों में तो दो-दो कृषि विज्ञान केंद्र भी हैं। इस समय भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के अंतर्गत 113 अनुसंधान संस्थान, 57 अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान

परियोजनाएं और 25 नेटवर्क परियोजनाएं कार्य कर रही हैं। इसके अलावा, ज़िला-स्तर पर 718 कृषि विज्ञान केंद्र अग्रिम पंक्ति के कृषि प्रसार के द्वार की तरह कार्य कर रहे हैं।

राज्य कृषि विश्वविद्यालय राज्यों की कृषि से संबंधित अनुसंधान की स्थानीय आवश्यकता को पूरा करने में पूरक ज़िम्मेदारी निभाते हैं। डॉ. एस. राधाकृष्णन की अध्यक्षता में विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग ने 1949 में अमेरिका की भूमि अनुदान कॉलेज की धारणा की तर्ज पर ग्रामीण विश्वविद्यालयों की स्थापना की सिफारिश की थी। परिणामस्वरूप पहला राज्य कृषि विश्वविद्यालय 1960 में पंतनगर में स्थापित किया गया। आज राष्ट्रीय कृषि अनुसंधान प्रणाली दो स्तरों वाली प्रणाली बन गई है जिसमें राष्ट्रीय-स्तर पर भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद है और राज्य-स्तर पर राज्य कृषि विश्वविद्यालय कार्य कर रहे हैं।

भारत में कृषि का विकास और अनाज उत्पादन में आत्मनिर्भरता राष्ट्रीय-स्तर पर भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद और राज्य-स्तर पर राज्य कृषि विश्वविद्यालयों के समन्वित प्रयासों का प्रतिफल है। समन्वित अनुसंधान प्रयासों के तहत् मिट्टी की उत्पादकता बढ़ाने, जल प्रबंधन के ज़रिए उसका भंडारण, कृषि क्षेत्र का विस्तार और कृषि दक्षता बढ़ाने संबंधी टेक्नोलॉजी का विकास किया गया है और खेतीबाड़ी के तौर-तरीकों से संबंधित कई पैकेज भी विकसित किए जा चुके हैं। भारत को आज़ादी के बाद इन्हीं उपायों से खाद्यान्न की कमी दूर करने में मदद मिली और वह न सिर्फ अपनी ज़रूरत से अधिक अनाज पैदा करने वाला बल्कि इसका निर्यात करने वाला देश बन गया है। लेकिन यह भी कहना होगा कि देश की हरितक्रांति में सब कुछ हरा-भरा नहीं था, क्योंकि टेक्नोलॉजी के उपयोग से जो शानदार सफलताएं मिलीं वे आमतौर पर सिंचाई की पक्की व्यवस्था वाले कुछ खास भौगोलिक क्षेत्रों तक सिमटी थीं और पूरे साल पर्याप्त सिंचाई सुविधा से वंचित रहने वाले शुष्क तथा अर्ध-शुष्क इलाके पीछे छूटते चले गए। कृषि जोतों के आकार में लगातार कमी, संसाधनों का घटते चला जाना और कृषि सामग्री तथा खेतों में काम करने वाले मज़दूरों की मज़दूरी की बढ़ती दरों ने कृषि अनुसंधान करने वालों के लिए उत्पादन बढ़ाने और किसानों को खेती से होने वाला मुनाफा बढ़ाने की नई चुनौतियां खड़ी कर दी।

विश्व के विभिन्न भागों में फैले अंतर्राष्ट्रीय अनुसंधान संगठनों और वैज्ञानिक संस्थाओं के साथ मज़बूत संपर्कों ने भी देश में खाद्य असुरक्षा को दूर करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। जब भी ज़रूरत पड़ी, भारत की कृषि अनुसंधान प्रणाली वक्त पर काम आई और उसने जलवायु परिवर्तन, फसलों में कीड़े-मकोड़ों से होने वाली महामारियों के प्रकोप तथा फसलों और मवेशियों में विषाणुओं के संक्रमण से होने वाली बीमारियों के उन्मूलन में हमेशा मदद करके खाद्य सुरक्षा को बनाए रखा है। आज हमारे पास पेड़-पौधों, पशुधन और मात्स्यिकी जैसे क्षेत्रों में उच्च-स्तरीय अनुसंधान की अत्याधुनिक सुविधाएं हैं। बासमती चावल पर हाल की उपलब्धियां, गेहूं, टमाटर, धान आदि में कई बीमारियों के प्रतिरोध की क्षमता पैदा करने और अरहर, काबुली चना, धान और टमाटर आदि पर जीनोमिक्स संबंधी अनुसंधान हमारी प्रगति के उदाहरण हैं।

स्वतंत्रता के बाद खाद्य सुरक्षा के लिए अनुसंधान

आज़ादी से पहले देश में भीषण अकाल और अन्य कठिन परिस्थितियों का सामना करना आम बात थी। बहुत से लोग 1960 के दशक के मध्य की उन दुखद यादों को नहीं भूले होंगे जब 1964-65 और 1965-66 में लगातार सूखा पड़ा था और भारत को अमेरिका से गेहूं खरीदना पड़ा था। विश्व बाज़ार से अनाज खरीदने के लिए सरकार के पास विदेशी मुद्रा की कमी की वजह से अमेरिका के पी.एल. 480 कानून के तहत रुपये में भुगतान की शर्त पर कुछ रियायती दाम पर यह खरीद की गई। लेकिन अमेरिका के साथ यह सौदा शुरू में ही तब खटाई में पड़ गया जब भारत ने वियतनाम युद्ध के सिलसिले में हनोई और हाइफोंग पर अमेरिकी सेना द्वारा की गई बमबारी की आलोचना की।

भारत में खाद्य पदार्थों की इतनी कमी थी कि आयातित गेहूं गोदाम में रखने की बजाय बंदरगाह पर उतारते ही लोगों में बांट दिया जाता था। इसी सिलसिले में देश को 'शिप टू माउथ' (यानी जहाज से सीधे घर में) जैसी अपमानजनक टिप्पणियों का सामना करना पड़ा। तत्कालीन प्रधानमंत्री स्वर्गीय लालबहादुर शास्त्री ने अनाज बचाने के लिए देशवासियों से सप्ताह में एक दिन उपवास रखने का आह्वान किया। एक ओर जहां भारत अपने लोगों को दो जून की रोटी मुहैया कराने के लिए संघर्ष कर रहा था, वहीं मैक्सिको में कृषि वैज्ञानिक नॉर्मन अर्न्स्ट बोरलॉग के अर्ध-बौनी प्रजाति के गेहूं के नए बीज ने मैक्सिको में क्रांति ला दी जिस पर फसली बीमारियों के प्रतिरोध

चित्र 1 : विकास दर (प्रतिशत/वार्षिक) खाद्यान्न उपलब्धता और जनसंख्या

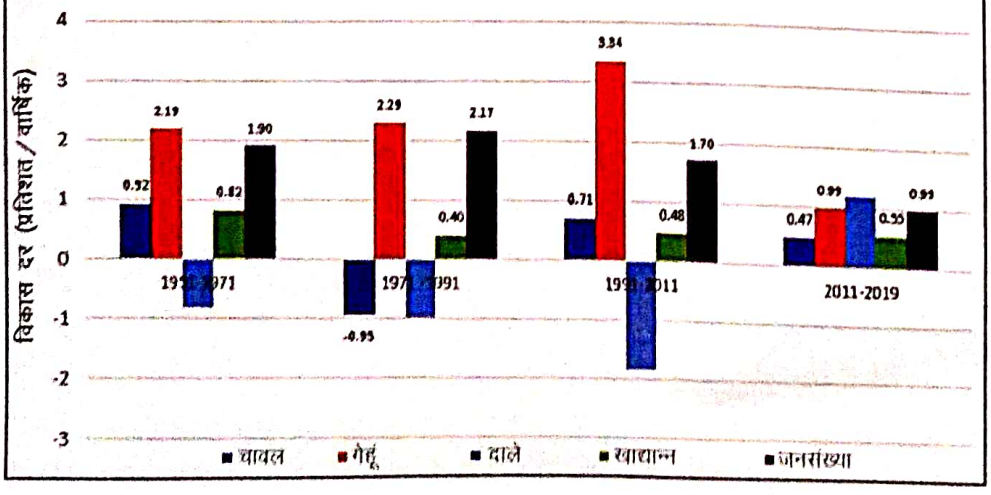

की क्षमता थी। इससे मैक्सिको, गेहूं के उत्पादन में न सिर्फ आत्मनिर्भर हो गया बल्कि 1963 में इसका निर्यात भी करने लगा। उसी समय भारत में जनता का पेट भरने के लिए आपात उपाय के रूप में गेहूं का आयात किया जा रहा था। तत्कालीन केंद्रीय कृषि मंत्री डॉ. सी. सुब्रमणियम और भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के पूर्व महानिदेशक डॉ. एम.एस. स्वामीनाथन ने अपने वैज्ञानिकों की टीम के साथ मिलकर देश में मैक्सिको की गेहूं की नई किस्मों का उपयोग करके गेहूं का उत्पादन बढ़ाने की संभावनाओं पर विचार किया। 1963 में इस तरह के गेहूं की पांच बौनी किस्मों-लेर्मा रोजो 64-ए, सोनोरा-63, सोनोरा-64, मायो-64 और एस-227 सहित करीब 200 प्रजातियों से शुरुआत की गई। ये प्रजातियां अधिक मज़बूत, छोटी, अपेक्षाकृत प्रकाश असंवेदनशील तथा उर्वरक, सिंचाई और अन्य आधानों के पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होने पर भरपूर उपज देती थीं। गेहूं और चावल के साथ-साथ मक्का, ज्वार, बाज़रा जैसी अन्य अनाज की उन्नतशील किस्मों के विकास से खाद्यान्न उत्पादन में भारी बढ़ोत्तरी हुई। लेकिन तिलहन और दलहन तब भी हमारी दुखती रग बने रहे।

चित्र–2 क्षेत्र, उत्पादन तथा खाद्यान्न पैदावार

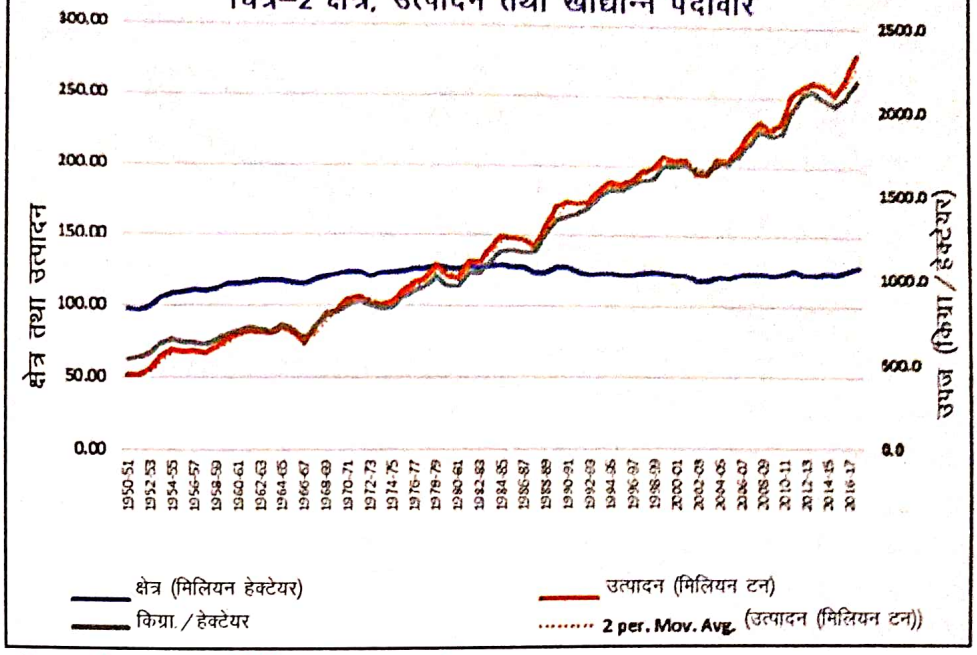

स्रोत : एग्रिकल्चरल स्टेटिस्टिक्स एट ए ग्लांस, 2019

जिस समय देश कृषि और उससे जुड़ी गतिविधियों में प्रौद्यागिकी संबंधी प्रगति के लाभ उठाने के लिए अपने को तैयार कर रहा था, तभी देश की जनसंख्या में डेढ़ गुना बढ़ोत्तरी दर्ज की गई और प्रतिवर्ष लगभग 1.9 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि के साथ 18.55 करोड़ से अधिक लोग जुड़ गए। कृषि अनुसंधान के क्षेत्र में सबसे संतोषजनक उपलब्धि यह रही कि 1951-71 की अवधि में गेहूं की प्रति व्यक्ति उपलब्धता की वृद्धि दर ने जनसंख्या वृद्धिदर को पीछे छोड़ दिया (चित्र-1 पृ. 20)। यहीं से लोगों में वह जबर्दस्त विश्वास जागा कि कृषि अनुसंधान और प्रौद्योगिकी संबंधी विकास से देश की बढ़ती जनसंख्या की खाद्यान्न और उससे संबंधित वस्तुओं की आवश्यकताओं को पूरा किया जा सकता है बल्कि उससे कहीं अधिक उत्पादन किया जा सकता है। बाद के दशकों में भी यही रुझान जारी रहा।

हरितक्रांति के बाद देश में श्वेतक्रांति आई जिससे दूध का उत्पादन बढ़ा। संकर नस्ल के मवेशियों के बारे में अनुसंधान और उनके आहार तथा आश्रय संबंधी प्रबंधन के उपायों से दुग्ध उत्पादन में बढ़ोत्तरी को जारी रखने में मदद मिली। गाय-भैंस और बकरी जैसे मवेशियों, पोल्ट्री व फिशरी प्रजनन, पशु आहार और पोषण तथा रोग प्रबंधन जैसे क्षेत्रों में अनुसंधान से इन क्षेत्रों में दिन-दूनी और रात चौगुनी प्रगति हुई। दूध और दुग्ध उत्पादों, मांस, अंडे व मछली के उत्पादन में वर्ष 1950-51 से कई गुना बढ़ोत्तरी हुई (तालिका-1 पृ. 19)। यह सब उन्नतशील नस्लों को अपनाने, दुधारू मवेशियों, मुर्गीपालन और मत्स्य पालन के आहार तथा पोषण संबंधी गुणवत्ता मानदंडों का पालन करने से संभव हो पाया। समन्वित अनुसंधान के ज़रिए टीकों और नैदानिक तरीकों के विकास से न सिर्फ बीमारियों की रोकथाम में मदद मिली बल्कि देश से मवेशियों की कुछ खतरनाक बीमारियों जैसे रिंडरपेस्ट, संक्रामक गोजातीय प्लूरो–निमोनिया, अफ्रीकी घोड़ा बीमारी और परजीवियों से फैलने वाले डॉराइन जैसे रोगों का उन्मूलन करने में सफलता मिली। देश 2030 तक खुरपका-मुंहपका (एफएमडी) से मुक्त होने की ओर भी अग्रसर है।

फसलों की नए किस्मों और उन्नतशील उत्पादन तकनीकों को अपनाने से भारत में हरितक्रांति के बाद कृषि के क्षेत्र में कई मौन क्रांतियां भी हुई हैं। टेक्नोलॉजी के उपयोग और खेती का रकबा बढ़ाकर तिलहनों का उत्पादन बढ़ाने के लिए 1986 में भारत सरकार ने तिलहनों पर टेक्नोलॉजी मिशन (टी.एम.ओ.) शुरू किया। बाद में दलहनों को भी इसमें शामिल कर लिया गया और इसे तिलहनों और दलहनों पर टेक्नोलॉजी मिशन (टी.एम.ओ.पी.) का रूप दिया गया। तिलहनों पर टेक्नोलॉजी मिशन बनाने के बाद देश में इनके उत्पादन में भारी बढ़ोत्तरी हुई जिससे तिलहनों पर अनुसंधान और विकास के लिए पर्याप्त धनराशि उपलब्ध कराने का अनुकूल माहौल बना। तिलहनों की बुआई के क्षेत्र में वृद्धि, उन्नतशील प्रजातियों के अधिक उपज देने वाले बीजों और उत्पादन में काम आने वाली अन्य सामग्रियों के उपयोग से 1986-1996 तक की 10 साल की अवधि में उत्पादन दुगुना हो गया। अनुसंधान और विकास के लिए पक्की वित्तपोषण प्रणाली और सुनिश्चित लक्ष्यों के निर्धारण से तिलहन मिशन 1986 अच्छे नतीजे दे पाने में सफल रहा। सोयाबीन, सरसों

चित्र 3 : खाद्य पदार्थों की उपलब्धता का रुझान और जनसंख्या वृद्धि

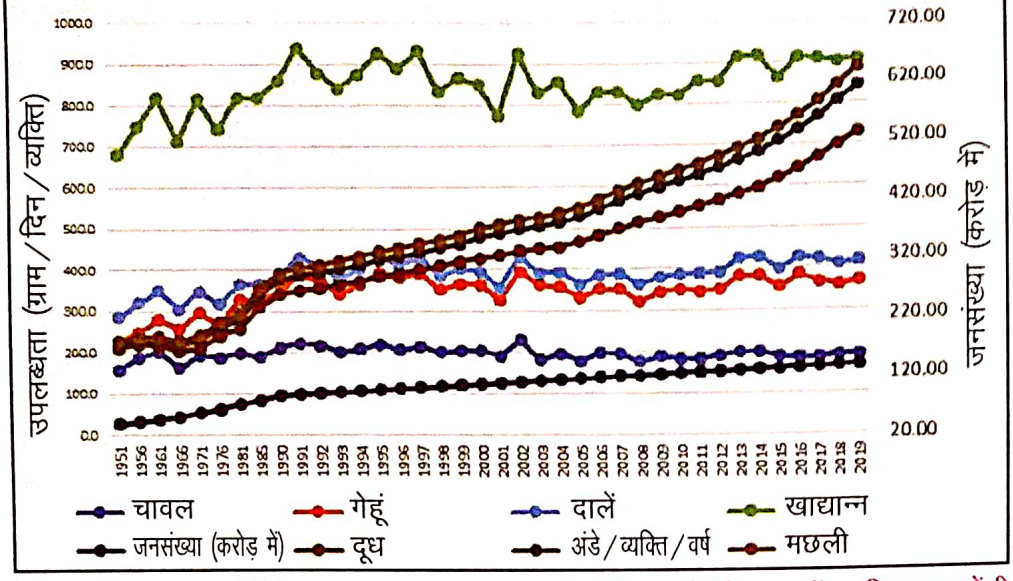

स्रोत : एग्रिकल्चरल स्टैटिस्टिक्स एट ए ग्लांस, 2019 और बेसिक स्टैटिस्टिक्स ऑन एनिमल हज़बेंड्री एंड फिशरीज़ (मछलीपालन, पशुपालन और डेयरी मंत्रालय)

मूंगफली और तिलहनों की अधिक पैदावार देने वाले उन्नतशील बीजों के विकास और उन्हें बढ़ावा देने के लिए किए गए समन्वित प्रयासों से दस साल में देश में तिलहनों के उत्पादन में क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ है। इसके बाद तिलहनों के रकबे में ठहराव-सा आ गया और उत्पादन में बढ़ोत्तरी भी रुक गई, हालांकि 1997-2017 के दौरान उत्पादकता में 37 प्रतिशत की शानदार बढ़ोत्तरी हुई है। तिलहनों का उत्पादन क्षेत्र बढ़ाने की गुंजाइश नहीं के बराबर रह गई है, इसलिए तिलहनों और दलहनों पर टेक्नोलॉजी मिशन वाली पुरानी नीति अब और काम नहीं करेगी।

तिलहन फसलों के क्षेत्रफल के आंकड़ों से यह परिलक्षित होता है कि तिलहन का क्षेत्र 1975-76 के बाद से लगभग स्थिर रहा है। विभिन्न प्रजातियों और उत्पादन तकनीकों में टेक्नोलॉजी संबंधी उन्नयन से उत्पादकता बढ़ी, जिसकी वजह से उत्पादन में बढ़ोत्तरी संभव हो पाई है। (चित्र-2) उत्पादन में वृद्धि का असली लाभ अनाज और अन्य वस्तुओं की प्रति व्यक्ति उपलब्धता में वृद्धि के रूप में स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है जिसमें जनसंख्या में उच्चतर दर से बढ़ोत्तरी के बावजूद सुधार हुआ है। (चित्र-3) हाल में दलहनों की उत्पादकता में महत्वपूर्ण वृद्धि हुई है जिसका कारण बीज प्रणाली में नई किस्मों का शामिल किया जाना है। इसकी वजह से देश दलहनों के उत्पादन में आत्मनिर्भरता के काफी करीब पहुंच गया है। राष्ट्र की खाद्य सुरक्षा में अनुसंधान के योगदान का यह ताज़ातरीन उदाहरण है।

बागवानी फसलों में लगने वाली बीमारियों और अ-जैव (ए बायोटिक) समस्याओं के प्रति कई तरह की प्रतिरोध क्षमता वाली नई किस्मों के विकास से इनके उत्पादन में बढ़ोत्तरी हो सकती है और यह देश में खाद्यान्न उत्पादन को भी काफी पीछे छोड़ सकता है। 1991-92 में बागवानी फसलों का उत्पादन 96.56 मिलियन टन था जो 2019-20 में बढ़कर 313.35 मिलियन टन हो गया। (तालिका-1 पृ. 19)

देश की जनसंख्या 2030-31 तक एक अरब 53 करोड़ 10 लाख को पार कर जाने की संभावना है। इतनी बड़ी आबादी की भोजन संबंधी आवश्यकताओं को पूरा करने के साथ-साथ बीज, चारे, और औद्योगिक इस्तेमाल के लिए खाद्यान्न की आवश्यकता पड़ेगी और कुछ अनाज की बरबादी भी होगी। विभिन्न अनुमानों के अनुसार देश को 32.6 करोड़ टन से 35 करोड़ टन अतिरिक्त खाद्यान्न की आवश्यकता पड़ सकती है। वर्ष 2030-31 तक देश खाद्य तेलों, दूध व दुग्ध उत्पादों, मांस, अंडे व मछली, फल और सब्जियों, तथा चीनी की अनुमानित मांग क्रमशः 2.43 करोड़ टन, 25.64 करोड़ टन, 2.94 करोड़ टन, 31.6 करोड़ टन, 17.8 करोड़ टन और 4.47 करोड़ टन हो जाने का अनुमान लगाया गया है (नीति आयोग, 2018)। भूमि, जल और अन्य सीमित प्राकृतिक संसाधनों की प्रति व्यक्ति उपलब्धता में गिरावट के रुझानों के बावजूद इन लक्ष्यों को प्राप्त किया जाना है।

जलवायु परिवर्तन संबंधी दुष्प्रभावों का खतरा समूची कृषि खाद्य प्रणाली पर मंडरा रहा है। इसके लिए जो रणनीति बनाई गई है वह किसानों के कल्याण के लिए उत्पादकता और अन्य सीमित प्राकृतिक संसाधनों को बढ़ाने और कृषि पर छाए संकट को कम करने के इर्द-गिर्द घूमती है। देश की अनुसंधान और प्रसार प्रणाली में गतिशीलता के कारण पिछले सात दशकों में भारतीय कृषि का प्रदर्शन शानदार रहा है। यह तात्कालिक झटकों और नई चुनौतियों को टेक्नोलॉजी संबंधी नई-नई खोजों और उपलब्धियों के माध्यम से झेलने में सक्षम है, जैसाकि हम अतीत में भी देखते आए हैं। भारत को आत्मनिर्भर बनाने की मुहिम नई किस्मों, उत्पादन व संरक्षण की नई टेक्नोलॉजी और भारतीय उत्पादों के लिए गुणवत्ता व सुरक्षा के मानदंडों के विकास जैसे कृषि अनुसंधान क्षेत्र के बेहद समन्वित प्रयासों के साथ जारी रहेगी। भारत को वैश्विक-स्तर पर प्रतिस्पर्धी बनाने, सबके लिए खाद्य तथा पोषण सुरक्षा बनाए रखने और किसानों तथा ग्रामीण मज़दूरों की आमदनी के साधन जुटाने के लिए बुनियादी ढांचे और मानव संसाधन विकास के क्षेत्र में अनुसंधान और विकास के कार्य में निवेश की भी आवश्यकता है।

(लेखक वर्तमान में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद में ओएसडी (पॉलिसी, प्लानिंग एंड पार्टनरशिप) हैं; नीति आयोग में सलाहकार (कृषि) रह चुके हैं।)
(लेख में व्यक्त विचार निजी हैं।)
ई-मेल : jp.mishra67@gov.in

सतत कृषि विकास हेतु शोध और विकास

शोध और विकास की ज़मीन पर तैयार होगा कृषि का बेहतर और टिकाऊ मॉडल

–डॉ. के. के. त्रिपाठी और डॉ. स्नेहा कुमारी

कृषि क्षेत्र में उन्नत शोध और विकास के ज़रिए बेहतर तरीकों और तकनीकों के इस्तेमाल को बढ़ावा देकर रोज़गार, आय और संपत्ति निर्माण में खेती का योगदान तेज़ी से बढ़ सकता है; इसी के मद्देनज़र इस लेख में भारतीय कृषि क्षेत्र में शोध और विकास संबंधी गतिविधियों की समीक्षा की गई है और शोध और विकास से जुड़े अवसरों और दिक्कतों का पता लगाने की कोशिश की गई है। साथ ही, कृषि को स्मार्ट और टिकाऊ बनाने के लिए सरकार की कुछ योजनाओं से हासिल नतीजों का जायज़ा लिया गया है।

कृषि और फसल विज्ञान के क्षेत्र में भारत की प्रगति काफी बेहतर रही है और हमारा देश खाद्यान्न, मसालों, दूध आदि के सबसे बड़े उत्पादक देशों में शामिल हो गया है। कृषि और किसान कल्याण मंत्रालय द्वारा खाद्यान्न, तिलहन और अन्य व्यावसायिक फसलों के 2019-20 के लिए जारी तीसरे अग्रिम अनुमान के मुताबिक, इस अवधि के दौरान देश में 29.567 करोड़ टन खाद्यान्न (27.266 करोड़ टन अनाज और 2.301 करोड़ टन दाल), 3.350 करोड़ टन तिलहन, 35.814 करोड़ टन गन्ना, 3.605 करोड़ बेल कपास और 99.2 लाख बेल जूट का रिकार्ड उत्पादन हुआ। इसके अलावा, 2019-20 के लिए मंत्रालय के बागवानी फसलों हेतु जारी अग्रिम अनुमानों के मुताबिक, इस दौरान देश में फल-सब्जियों का उत्पादन भी बंपर 32.048 करोड़ टन रहने का अनुमान है।

रोज़गार, आय और संपत्ति निर्माण में कृषि और ग्रामीण क्षेत्रों का योगदान खेती में टिकाऊ और जलवायु के अनुकूल मॉडल के इस्तेमाल के साथ-साथ उन्नत शोध और विकास के ज़रिए हमारा देश स्वयं को किस तरह बेहतर कृषि के तरीकों, मौसम अनुकूल वरायटी और तकनीक के इस्तेमाल के लिए तैयार करता है, इस पर निर्भर करता है।

शोध और विकास नीति

भारतीय कृषि की शोध और विकास नीति मुख्य तौर पर सरकारी फंडिंग और प्रावधानों पर निर्भर है; तथा शोध एवं विकास सेवाओं का प्रसार; केंद्र और राज्य सरकारों की विस्तार सेवाओं के जरिए किया जाता है। तीसरी पंचवर्षीय योजना (1961-1966) के समय से सरकार का मुख्य फोकस देश में शोध और विकास की बेहतर सुविधा के ज़रिए खाद्यान्न के मामले में आत्मनिर्भरता हासिल करने पर रहा है। 1960 के दशक में हरितक्रांति अभियान पर ज़ोर दिया गया। इस अभियान के तहत कृषि क्षेत्र में ज़्यादा से ज़्यादा शोध और नवाचार की ज़रूरत महसूस की गई और इस सिलसिले में ज़रूरी पहल के ज़रिए खाद्यान्न उत्पादन में उपज और आत्मनिर्भरता बढ़ाने का लक्ष्य तय किया गया। कृषि क्षेत्र में

शोध और नवाचार को बढ़ावा देने के लिए राज्य सरकारों ने 1960 और 1970 के दशक में राज्य कृषि विश्वविद्यालयों की स्थापना की, जिससे देश में शोध और विकास गतिविधियां तेज़ हुईं और कृषि का विकास सुनिश्चित हो सका। इन गतिविधियों के तहत घरेलू और अंतर्राष्ट्रीय-स्तर पर सहयोग के ज़रिए नए-नए शोध को बढ़ावा दिया गया और खेती की गुणवत्ता में सुधार हुआ। साथ ही, तकनीक के स्तर पर बेहतरी देखने को मिली।

1980 के दशक से देश के कृषि क्षेत्र में शोध और विकास में तेज़ी देखने को मिली। कृषि-आधारित शोध और विकास में निवेश से जुड़ी उदारवादी नीतियों के कारण यह मुमकिन हुआ। इन नीतियों के तहत शोध और विकास से जुड़े खर्च और वेंचर कैपिटल पर टैक्स में छूट दी गई और घरेलू शोध के लिए उपकरणों के आयात पर शुल्क कम करने से इस क्षेत्र में निजी भागीदारी और सरकारी-निजी भागीदारी की रफ्तार तेज़ हुई। अब देश में कृषि से जुड़ी 50 प्रतिशत से भी ज़्यादा सामग्री की आपूर्ति निजी क्षेत्र के माध्यम से होती है, जैसे कि कीटनाशक दवाएं, खेती से जुड़ी मशीनें, बीज, जैव तकनीक, खाद आदि। शोध और विकास की नीति में बदलाव से भी इस क्षेत्र में सरकारी-निजी भागीदारी को बढ़ावा मिला है। दरअसल, सरकार की तरफ से प्रायोजित शोध परियोजनाओं के ज़रिए निजी संगठनों को सरकारी फंड आवंटित किए गए और विश्व बैंक की परियोजनाओं से भी कुछ हद तक मदद मिली।

कृषि का टिकाऊ मॉडल

अगर हम कृषि के टिकाऊ मॉडल को ध्यान में रखते हुए शोध और विकास पर काम करते हैं, तो इससे न सिर्फ पर्यावरण को लाभ होता है, बल्कि इसके सामाजिक और आर्थिक फायदे भी हैं। चार्ट-1 में बताया गया है कि कृषि का टिकाऊ मॉडल तीन स्तंभों पर निर्भर होता है- आर्थिक, पर्यावरण और सामाजिक विकास। शोध और विकास की हाल की गतिविधियों में कृषि के इन तीन स्तंभों पर फोकस किया गया है। बेहतर शोध और मानव व पर्यावरण के स्तर पर ज़रूरी पहल करके कृषि के टिकाऊ मॉडल से संबंधित लक्ष्यों को हासिल किया जा सकता है। कृषि से जुड़े शोध के तहत आंतरिक संसाधनों के रूपांतरण पर ध्यान दिया जाता है और शोध के नतीजों से कृषि उत्पादों को बेहतर बनाया जाता है। साथ ही, विकास के अंतर्गत सरकार मुख्य तौर पर दिक्कतें दूर करने पर फोकस करती है- मसलन ज़मीन की गुणवत्ता में गिरावट, पर्यावरण की स्थिति में गिरावट, जनसंख्या में बढ़ोत्तरी और ग्रामीण कृषि ढांचे में संसाधनों की कमी आदि। शोध और विकास से न सिर्फ खेती के बेहतर और टिकाऊ मॉडल के तरीके जानने में मदद मिलती है, बल्कि किसानों के लिए बेहतर संसाधन उपलब्ध कराना भी मुमकिन होता है।

खेती में नवाचार को बढ़ावा देने से न सिर्फ मुनाफा बढ़ाने में सहायता मिली है, बल्कि इससे पैदा होने वाले कचरे को भी कम किया गया है। इसके अलावा, आजीविका और ग्रामीण रोज़गार के मोर्चे पर स्थिति बेहतर हुई है। अलग-अलग क्षेत्रों में शोध के ज़रिए कृषि में रोज़गार के नए अवसर पैदा हुए हैं। कृषि मूल्य शृंखला, किसान उत्पादक संगठनों, सहकारी संस्थानों और शोध केंद्रों के ज़रिए कृषि से जुड़े सामाजिक पहलुओं को ध्यान में रखने की कोशिश की गई है। कृषि ने सामाजिक प्रभाव के तौर पर युवाओं के विकास और ऊर्जा संरक्षण में योगदान दिया है। खेती के आधुनिक तौर-तरीकों का इस्तेमाल करने पर ग्रीनहाउस गैसों और प्रदूषण को नियंत्रित किया जा सकता है। इससे पर्यावरण को नुकसान पहुंचाए बिना खाद्य और पोषण सुरक्षा सुनिश्चित की जा सकती है। तालिका-1 में देश के बेहतर और टिकाऊ कृषि मॉडल से जुड़ी योजनाओं के परिणामों और इसके क्रियान्वयन में आने वाली चुनौतियों आदि के बारे में बताया गया है।

चार्ट–1 सतत कृषि के स्तम्भ

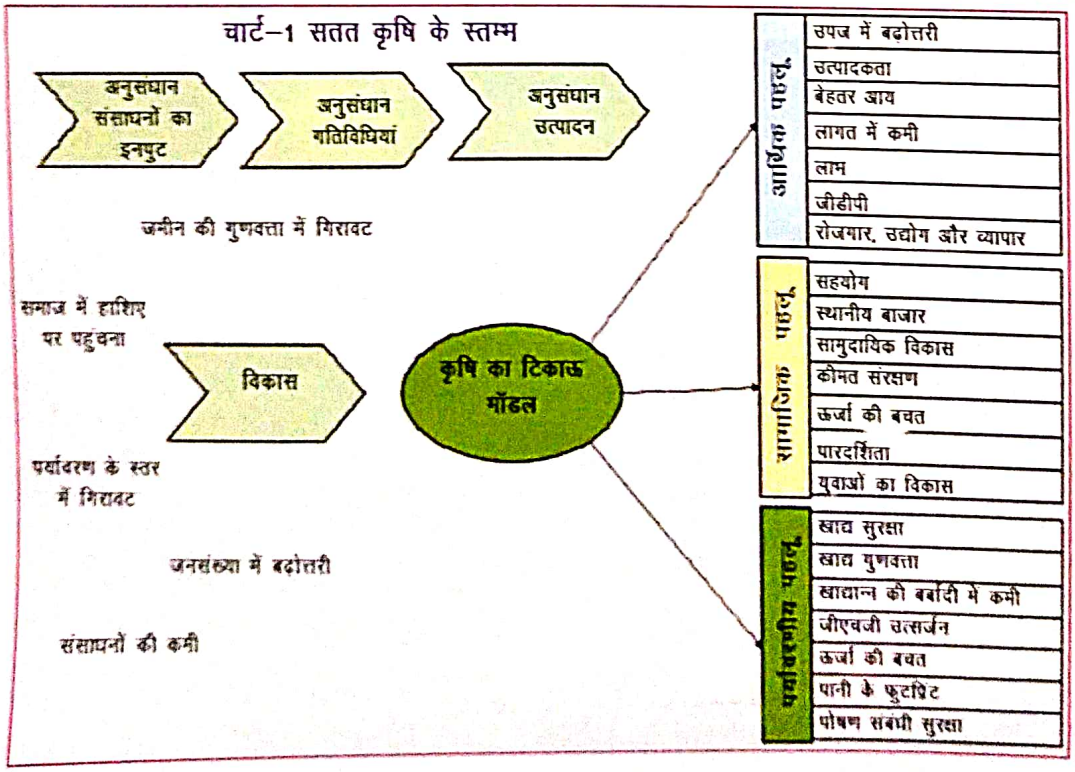

कृषि से जुड़ी सामग्रियां

अगर हमारा देश खाद्यान्न संकट के दौर से आगे बढ़ते हुए खाद्यान्न की प्रचुरता की स्थिति में पहुंचा है, तो इसमें कृषि क्षेत्र से संबंधित सामग्रियों के लिए शोध और विकास की अहम भूमिका रही

है। इस क्षेत्र में शोध और विकास पर काफी ज़ोर दिया गया है जिसके बारे में यहां सिलसिलेवार तरीके से बताया गया है:

i) बीजः बेहतर बीज विकसित करने से कृषि क्षेत्र को आगे बढ़ाने में काफी मदद मिली है। कृषि की हालत सुधारने और सतत विकास के लिए भारतीय कृषि शोध परिषद (आईसीएआर) ने सूखे से प्रभावित नहीं होने वाले और हाइब्रिड बीजों को विकसित किया। हाइब्रिड (संकर) बीजों की सबसे ज़्यादा उपलब्धता कपास (90 प्रतिशत) में है, जबकि मक्का और सूरजमुखी में ऐसे बीजों का इस्तेमाल क्रमशः 60 प्रतिशत और 80 प्रतिशत है। इस सिलसिले में बने कई नियम-कानून से भी बीज उद्योग को मज़बूती प्रदान करने में मदद मिली- जैसे कि बीज अधिनियम (1966), बीज नियंत्रण आदेश (1983), बीज नियम (1968) और राष्ट्रीय बीज नीति (2002)। फसलों में जैविक संशोधन से उपज में भी बढ़ोत्तरी देखने को मिली।

ii) खादः शोध और विकास के ज़रिए देश के खाद क्षेत्र को भी काफी फायदा पहुंचा है। खेतों से जुड़े पोषक तत्वों के लिए सब्सिडी योजना (2010) में सब्सिडी वाले खाद के बेहतर इस्तेमाल पर फोकस किया गया। हाल ही में नीम कोटेड यूरिया के क्षेत्र में शोध और इसके इस्तेमाल से न सिर्फ रासायनिक खाद की खपत कम हुई है, बल्कि मिट्टी की गुणवत्ता भी बेहतर हुई है। साथ ही, खेती के अलावा अन्य उद्देश्य से यूरिया का इस्तेमाल काफी कम हुआ है।

जैविक खाद के इस्तेमाल और रासायनिक खाद से मुक्त खेती पर ज़ोर दिए जाने से जैविक खेती के रकबे में बढ़ोत्तरी हुई है।

तालिका-1: कृषि को बेहतर और टिकाऊ बनाने के लिए प्रमुख योजनाओं का विश्लेषण (आउटपुट, परिणाम और चुनौतियों का निपटारा)

योजना	आउटपुट	परिणाम	चुनौतियों का निपटारा
राष्ट्रीय कृषि विकास योजना (आरकेवीवाई)	• जलवायु के आधार पर ज़िलों और राज्यों के लिए कृषि योजनाएं तैयार करना • कृषि उद्यमिता को अपनाना, कृषि और इससे संबंधित योजनाएं तैयार करने और इसके अमल में राज्यों को स्वायत्तता देना	• किसानों को मदद पहुंचा कर, जोखिम को कम कर और कृषि उद्यमिता को बढ़ावा देकर खेती को मुनाफे वाला धंधा बनाना	• योजना बनाने और इसे लागू करने के बीच मौजूद कमियों की पहचान कर इन्हें दूर करने के उपाय ढूंढना
परंपरागत कृषि विकास योजना (पीकेवीवाई)	• जैविक खेती को बढ़ावा देना और इससे जुड़ी नई तकनीक का प्रसार करना • जैविक खेती के तौर-तरीकों और पीजीएस सर्टिफिकेशन के लिए मदद के बारे में जागरूकता बढ़ाना	• जैविक खेती के क्षेत्रफल में बढ़ोत्तरी	• जैविक खेती के फायदों को लेकर किसानों में जागरूकता का स्तर बढ़ाना • बड़े पैमाने पर किसानों को सर्टिफिकेशन प्रक्रिया से जोड़ना • योजनाओं के लागू होने में ज़मीनी-स्तर पर मौजूद दिक्कतों को दूर करना • रासायनिक खाद पर आधारित खेती के मुकाबले इसकी उत्पादकता को बढ़ाना, ताकि किसानों में जैविक खेती का प्रचलन बढ़े
प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना (पीएमकेएसवाई)	• सिंचाई के दौरान पानी के बेहतर इस्तेमाल के लिए सही उपकरण उपलब्ध कराना-स्प्रिंकलर, ड्रिप, पिवट, रेन-गन आदि. • ज़्यादा पानी की ज़रूरत वाली फसलों के लिए उचित सिंचाई का प्रावधान करना	• फसलों के उत्पादन और किसानों की आय में बढ़ोत्तरी • पानी का उचित इस्तेमाल • कृषि के लिए सूखे की समस्या से मुक्ति	• सिंचाई कार्यों के पूरा होने में देरी और ज़्यादा लागत की वजहों की पहचान करना • किसानों के बीच जागरूकता फैलाना और उन्हें जानकारी और प्रशिक्षण मुहैया कराना।
मिट्टी की गुणवत्ता और उर्वरता से जुड़ी राष्ट्रीय परियोजना	• स्थान और फसल के आधार पर मिट्टी के स्वास्थ्य के प्रबंधन को बढ़ावा देना (मसलन अवशिष्ट प्रबंधन और जैविक खेती के तौर-तरीके) • मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजना मिट्टी में मौजूद पोषक तत्वों के बारे में किसानों को जानकारी देती है और मिट्टी की गुणवत्ता को बेहतर बनाने के लिए ज़रूरी पोषक तत्व डालने संबंधी सुझाव भी देती है	• मिट्टी में पोषक तत्वों के बेहतर प्रबंधन के जरिए उसकी गुणवत्ता को बढ़ाना, ज़मीन की श्रेणी के आधार पर उसका उचित इस्तेमाल करना	• मिट्टी की जांच वाली प्रयोगशाला/ जांच वाली मोबाइल प्रयोगशाला आदि स्थापित करना • रासायनिक खादों पर निर्भरता कम करने के मकसद से मिट्टी के स्वास्थ्य के बारे में जागरूकता फैलाना
राष्ट्रीय सतत कृषि मिशन (एनएमएसए)	• ड्रिप और स्प्रिंकलर सिंचाई के जरिए सिंचाई का बेहतर प्रबंधन करना • कृषि उत्पादन को बढ़ाना • खेती के बेहतर तरीके को बढ़ावा देना	• मिट्टी के स्वास्थ्य प्रबंधन और बेहतर सिंचाई व्यवस्था के जरिए कृषि के विकास को टिकाऊ बनाना	• कृषि से जुड़े जोखिम की पहचान कर ज़रूरी बदलाव के लिए उपाय करना

लालकिले की प्राचीर से प्रधानमंत्री

- **कोरोना योद्धाओं को नमन** : इस कोरोना के कालखंड में 'सेवा परमो धर्मः' के मंत्र के साथ, पूर्ण समर्पण भाव से मां भारती के लालों की सेवा करने वाले सभी कोरोना वॉरियर्स को भी मैं आज नमन करता हूं।
- **कोरोना वैश्विक महामारी और आत्मनिर्भर भारत** : कोरोना वैश्विक महामारी के बीच 130 करोड़ भारतीयों ने संकल्प लिया- आत्मनिर्भर बनने का...और आत्मनिर्भर भारत आज 130 करोड़ देशवासियों के लिए मंत्र बन गया है।
- **भारत की प्राकृतिक संपदा** : हमारे देश में अथाह प्राकृतिक संपदा है। आज समय की मांग है कि हमारे इन प्राकृतिक संसाधनों में हम वैल्यू एडीशन करें, हम अपनी मानव संपदा में मूल्यवृद्धि करें, नई ऊंचाइयों पर ले जाएं।
- **कृषि क्षेत्र में सुधार** : वैश्विक आवश्यकताओं के अनुसार हमारे कृषि जगत में बदलाव की आवश्ययकता है। विश्व की अपेक्षाओं को पूरा करने के लिए हमें अपने कृषि जगत को भी आगे बढ़ाने की जरूरत है। कौन सोच सकता था कि किसानों की भलाई के लिए एपीएमसी जैसे एक्ट में इतने बदलाव हो जाएंगे।
- **राष्ट्रीय बुनियादी ढांचा परियोजना** : देशवासियों के जीवन को, देश की अर्थव्यवस्था को कोरोना के प्रभाव से जल्दी से जल्दी बाहर निकालना आज हमारी प्राथमिकता है। इसमें अहम भूमिका रहेगी नेशनल इंफ्रास्ट्रक्चर पाइपलाइन की। इस पर 110 लाख करोड़ रुपये से भी ज्यादा खर्च किए जाएंगे। इसके लिए अलग-अलग सेक्टर में लगभग सात हजार प्रोजेक्ट्स की पहचान कर ली गई है। इससे देश के ओवर ऑल इंफ्रास्ट्रक्चर डेवलपमेंट को एक नई दिशा भी मिलेगी, एक नई गति भी मिलेगी।
- **मल्टी मॉडल कनेक्टिविटी** : इंफ्रास्ट्रक्चर को लेकर अब हम सिलोज़ में नहीं चल सकते हैं। हम मल्टी मॉडल कनेक्टिविटी इंफ्रास्ट्रक्चर को जोड़ने के लिए अब आगे बढ़ रहे हैं। और यह एक नया आयाम होगा, बहुत बड़ा सपना लेकर के इस पर काम शुरू किया है और मुझे विश्वास है कि सिलोज़ को खत्म करके हम, सारी व्यवस्था को एक नई ताकत देंगे।
- **श्रमशक्ति का सम्मान** : किसी भी राष्ट्र की आज़ादी का स्रोत उसका सामर्थ्य होता है, उसके वैभव, उन्नति, प्रगति का स्रोत उसकी श्रमशक्ति है।
- **गरीब कल्याण रोज़गार अभियान** : कोरोना काल में अपने ही गांवों में रोज़गार के लिए गरीब कल्याण रोज़गार अभियान शुरू किया गया है। श्रमिक साथी खुद को रि-स्किल करें, अप-स्किल करें; इस पर विश्वास करते हुए, श्रमशक्ति पर भरोसा करते हुए, गांव के संसाधनों पर भरोसा करते हुए, हम वोकल फॉर लोकल पर बल देते हुए रि-स्किल, अप-स्किल के द्वारा अपने देश की श्रमशक्ति को, हमारे गरीबों को एम्पॉवर करने की दिशा में काम कर रहे हैं।
- **संतुलित विकास** : आत्मनिर्भर भारत बनाने के लिए संतुलित विकास बहुत आवश्यक है और हमने 110 से ज्यादा आकांक्षी जिले आइडेंटिफाई किए हैं, जो औसत से भी पीछे हैं, उनको सभी पेरामीटर्स में राज्य की और राष्ट्र की औसत तक ले आना है।
- **आत्मनिर्भर कृषि और आत्मनिर्भर किसान** : आत्मनिर्भर भारत की अहम प्राथमिकता आत्मनिर्भर कृषि और आत्मनिर्भर किसान हैं और इनको हम कभी भी नज़रअंदाज नहीं कर सकते हैं। देश के किसानों को आधुनिक इंफ्रास्ट्रक्चर देने के लिए हाल ही में भारत सरकार ने एक लाख करोड़ रुपये एग्रीकल्चर इंफ्रास्ट्रक्चर के लिए आवंटित किए हैं।
- **किसानों की आय दोगुनी करना** : किसानों की आय बढ़ाने के लिए अनेक वैकल्पिक चीजों पर भी बल दिया है। उसकी किसानी में इनपुट कॉस्ट कैसे कम हो, सोलर पंप उसको डीज़ल पंप से मुक्ति कैसे दिला दें, अन्नदाता ऊर्जादाता कैसे बने, मधुमक्खी पालन हो, फिशरीज़ हो, पौल्ट्री हो, ऐसी अनेक चीजें

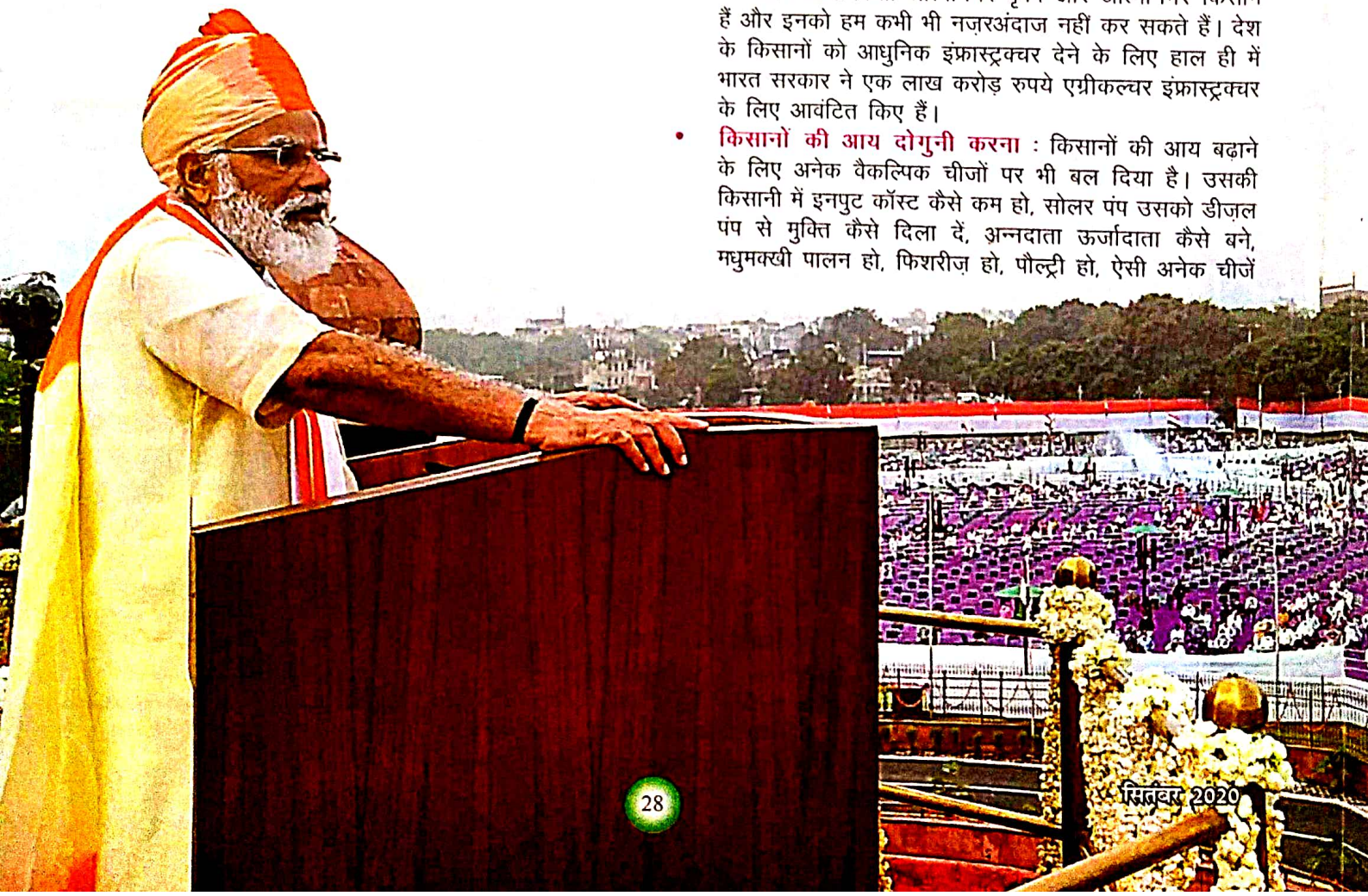

के संबोधन की मुख्य बातें

उसके साथ जुड़ जाएं, ताकि उसकी आय दोगुनी हो जाए, उस दिशा में हम लगातार काम कर रहे हैं।

- **ग्रामीण उद्योग** : ग्रामीण उद्योगों को मज़बूत करने की ज़रूरत है। ग्रामीण क्षेत्रों में विशिष्ट प्रकार से आर्थिक कलस्टर बनाए जाएंगे। कृषि और गैर-कृषि उद्योगों का गांव के अंदर एक जाल बनाया जाएगा और उसके कारण उसके साथ-साथ किसानों के लिए जो नए एफपीओ किसान उत्पादक संघ बनाने की हमने कोशिश की है, वो अपने-आप में एक बहुत बड़ा इकोनॉमिक एम्पॉवरमेंट का काम करेगा।
- **जल जीवन मिशन** : मैंने पिछली बार यहां पर जल जीवन मिशन की घोषणा की थी, आज उसको एक साल हो रहा है। मुझे संतोष है कि प्रतिदिन हम एक लाख से ज्यादा घरों में पाईप से जल पहुंचा रहे हैं और पिछले एक साल में 2 करोड़ परिवारों तक हम जल पहुंचाने में सफल हुए हैं।
- **एमएसएमई सेक्टर** में जो रिफॉर्म्स हुए हैं, एग्रीकल्चर सेक्टर में जो रिफॉर्म्स हुए हैं, इसका सीधा-सीधा लाभ मध्यमवर्गीय मेहनतकश परिवारों को जाने वाला है और उसके कारण हजारों-करोड़ों रुपयों का स्पेशल फंड, आज जो हमारे व्यापारी बंधुओं को, हमारे लघु उद्योगकारों को हम दे रहे हैं, उनको इसका लाभ मिलने वाला है।
- **नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति** : आत्मनिर्भर भारत के निर्माण में, आधुनिक भारत के निर्माण में, नए भारत के निर्माण में, समृद्ध और खुशहाल भारत के निर्माण में, देश की शिक्षा का बहुत बड़ा महत्व है। इसी सोच के साथ देश को तीन दशक के बाद नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति देने में हम आज यशस्वी हुए हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति हमारे विद्यार्थियों को जड़ से जोड़ेगी। लेकिन साथ-साथ उनको एक ग्लोबल सिटिज़न बनाने का भी पूरा सामर्थ्य देगी।
- **नवाचार पर बल** : राष्ट्रीय शिक्षा नीति में नेशनल रिसर्च फाउंडेशन पर विशेष बल दिया गया है, क्योंकि देश को प्रगति करने के लिए इनोवेशन बहुत आवश्यक होता है। इनोवेशन को जितना बल मिलेगा... रिसर्च को जितना बल मिलेगा, उतना ही देश को आगे ले जाने में... कॉम्पैटिटिव वर्ल्ड में आगे बढ़ने में बहुत ताकत मिलेगी।
- **डिजिटल इंडिया** : कभी-कभी आफत में भी कुछ ऐसी चीजें उभरकर आ जाती हैं, नई ताकत दे देती हैं और इसलिए आपने देखा होगा कोरोना काल में ऑनलाइन क्लास एक प्रकार से कल्चर बन गया है।
- **ऑनलाइन ट्रांज़ेक्शन** : देश में ऑनलाइन डिजिटल ट्रांज़ेक्शन भी तेज़ी से बढ़ रहे हैं। भारत जैसे देश में यूपीआई भीम के ज़रिए एक महीने में 3 लाख करोड़ रुपये का ट्रांज़ेक्शन हुआ है।
- **पंचायतों तक ऑप्टिकल फ़ाइबर नेटवर्क** : 2014 से पहले हमारे देश में 5 दर्जन पंचायतों में ऑप्टिकल फ़ाइबर था। गत 5 वर्ष में डेढ़ लाख ग्राम पंचायतों तक ऑप्टिकल फ़ाइबर नेटवर्क पहुंच गया जो आज इतना मदद कर रहा है। हमने तय किया है कि छह लाख से अधिक गांवों में हजारों-लाखों किलोमीटर ऑप्टिकल फ़ाइबर का काम चलाया जाएगा। 1000 दिन के अंदर-अंदर देश के छह लाख से अधिक गांवों में ऑप्टिकल फ़ाइबर नेटवर्क का काम पूरा कर दिया जाएगा।
- **महिला शक्ति** : भारत में महिला शक्ति को जब-जब भी अवसर मिले, उन्होंने देश का नाम रोशन किया है, देश को मज़बूती दी है। महिलाओं को रोज़गार और स्वरोज़गार के समान अवसर देने के लिए आज देश प्रतिबद्ध है। आज भारत दुनिया के उन देशों में है जहां नौसेना और वायुसेना में महिलाओं को कॉमबैट रोल में शामिल किया जा रहा है।
- **महिलाओं का आर्थिक सशक्तिकरण** : 40 करोड़ जन-धन खातों में 22 करोड़ खाते हमारी बहनों के हैं। 25 करोड़ के करीब मुद्रा लोन दिए गए हैं, उसमें 70 प्रतिशत मुद्रा लोन लेने वाली हमारी माताएं-बहनें हैं।
- **महिला स्वास्थ्य** : गरीब बहन-बेटियों के बेहतर स्वास्थ्य की भी चिंता ये सरकार लगातार कर रही है। हमने जन औषधि केंद्र के अंदर एक रुपये में सैनिटरी पैड पहुंचाने के लिए बहुत बड़ा काम किया है। बेटियों में कुपोषण खत्म हो, उनकी शादी की सही आयु क्या हो, इसके लिए हमने कमेटी बनाई है। उसकी रिपोर्ट आते ही बेटियों की शादी की उम्र के बारे में भी उचित फैसले लिए जाएंगे।
- **नेशनल डिजिटल हेल्थ मिशन** : हेल्थ सेक्टर में आज से नेशनल डिजिटल हेल्थ मिशन का भी आरंभ किया जा रहा है। इसमें टेक्नोलॉजी का भी बहुत बड़ा रोल रहेगा। भारत के हेल्थ सेक्टर में ये एक नई क्रांति ले आएगा। प्रत्येक भारतीय को हेल्थ आईडी दी जाएगी। ये हेल्थ आईडी प्रत्येक भारतीय के स्वास्थ्य खाते की तरह काम करेगी।
- **कोरोना वैक्सीन** : देश के वैज्ञानिक कोराना का टीका विकसित करने में जी-जान से जुटे हुए हैं। भारत में एक नहीं, दो नहीं, तीन-तीन वैक्सीन टेस्टिंग के अलग-अलग चरण में हैं। वैज्ञानिकों से जब हरी झंडी मिल जाएगी, बड़े पैमाने पर प्रॉडक्शन होगा और उनकी तैयारियां भी पूरी हैं।
- **रिन्यूएबल एनर्जी** के उत्पादन के मामले में आज भारत दुनिया के टॉप पांच देशों में अपनी जगह बना चुका है। प्रदूषण के समाधान को लेकर भारत सजग भी है और भारत सक्रिय भी है।
- **एक भारत श्रेष्ठ भारत** : हमारी पॉलिसी, हमारी प्रोसेस, हमारे प्रोडक्ट्स सब कुछ उत्तम से उत्तम हों, बेस्ट हों, तभी 'एक भारत-श्रेष्ठ भारत' की परिकल्पना साकार होगी।

(स्रोत : पीआईबी)

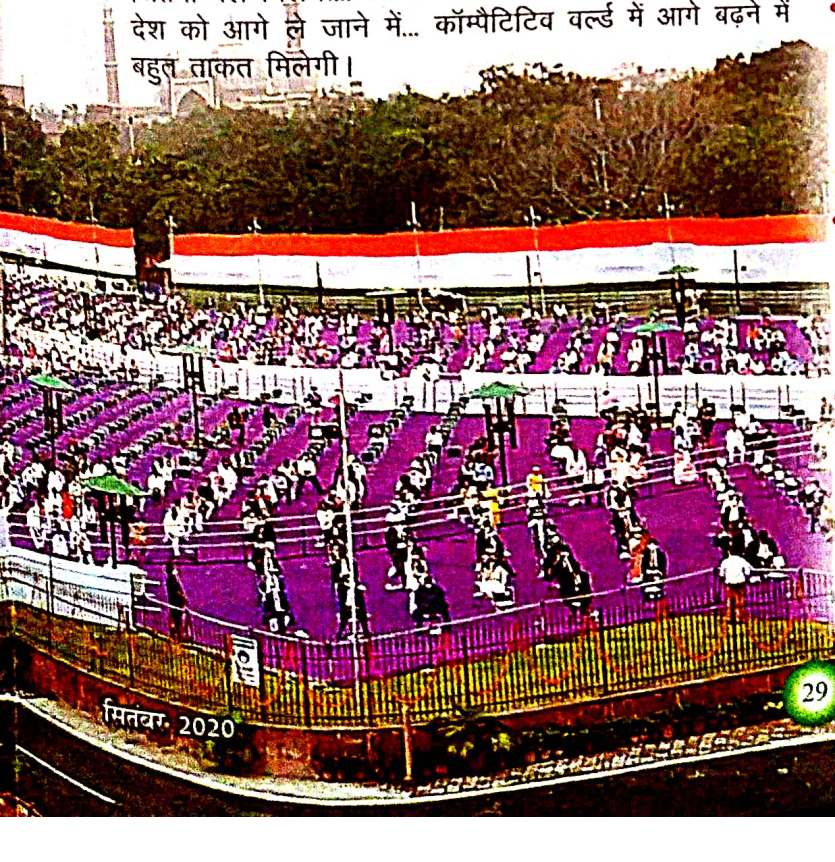

कृषि अनुसंधान आवश्यकताओं को प्राथमिकता देना जरूरी

–जी.आर. चिंताला

अनुसंधान प्रणाली ज्ञान के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, जो आधुनिक खेती में उत्पादन के कारकों में से एक है। हालांकि कृषि क्षेत्र की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि अनुसंधान प्रणाली कितने प्रभावी ढंग से ज्ञान का सृजन, उपार्जन, उपयोग और प्रसार करती है और समस्याओं का समाधान करती है। इस आलेख में लेखक ने कृषि क्षेत्र के विकास और भावी कार्यनीति निर्धारण में कृषि अनुसंधान प्रणाली और नाबार्ड की भूमिका पर अपने विचार व्यक्त किए हैं।

अधिकांश आबादी को आजीविका प्रदान करने वाली भारतीय कृषि व्यवस्था को बेशुमार समस्याओं के समाधान के लिए सतत रूप से नई जानकारियों की आवश्यकता होती है। देश की विविध अनुसंधान आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए हमारे पास एक सशक्त कृषि अनुसंधान प्रणाली है। अनुसंधान प्रणाली ज्ञान के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, जो आधुनिक खेती में उत्पादन के कारकों में से एक है। हालांकि, कृषि क्षेत्र की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि अनुसंधान प्रणाली कितने प्रभावी ढंग से ज्ञान का सृजन, उपार्जन, उपयोग और प्रसार करती है और समस्याओं का समाधान करती है।

भारतीय कृषि अनुसंधान प्रणाली में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के संस्थान, केंद्रीय और राज्य कृषि विश्वविद्यालय और कृषि विज्ञान केंद्र, अंतर्राष्ट्रीय कृषि अनुसंधान केंद्रों के कंसोर्टियम (सीजीआईएआर) के संस्थान, निगमित/निजी अनुसंधान सुविधाएं शामिल हैं। राष्ट्रीय ग्रामीण एवं कृषि विकास बैंक 'नाबार्ड' अपनी वित्तीय, विकासात्मक और पर्यवेक्षीय भूमिकाओं के माध्यम से सशक्त और आर्थिक रूप से समावेशी ग्रामीण भारत के निर्माण के अलावा कृषि अनुसंधान कार्यों का भी संचालन करता है और उन्हें प्रोत्साहन देता है।

कृषि क्षेत्र का महत्व

कृषि और संबद्ध क्षेत्र भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए अत्यधिक महत्व रखते हैं। राष्ट्रीय आय (अध्याय 7, आर्थिक सर्वेक्षण खंड-II, 2019-2020) में छठे भाग की हिस्सेदारी इस क्षेत्र की है और लगभग 50 प्रतिशत कार्यबल को यह प्रत्यक्ष रोज़गार प्रदान करता है। यह देश की खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने का मूल आधार है और विदेशी मुद्रा अर्जन के प्रमुख स्रोतों में से एक है। इसके अलावा, यह अपने अग्रगामी और अधोगामी संबंधों के माध्यम से अर्थव्यवस्था के द्वितीयक और तृतीयक क्षेत्रों के विकास को प्रभावित करता है। कृषि क्षेत्र का निष्पादन सामाजिक-आर्थिक परिणामों को भी प्रभावित करता है। कृषि विकास सीधे तौर पर कृषि आय को बढ़ाकर और अपरोक्ष रूप से रोज़गार पैदा करके तथा खाद्य पदार्थों की कीमतों को कम करके गरीबी को घटाता है।

परंतु हाल के वर्षों में कृषि और उससे संबद्ध क्षेत्रों का प्रदर्शन अपनी क्षमता से कम रहा है और उसके विकास में

अक्सर उतार-चढ़ाव देखे गए हैं। 2013-14 में 5.6 प्रतिशत की वृद्धि हासिल करने के बाद, 'कृषि, वानिकी और मत्स्य पालन' से स्थायी (2011-12) कीमतों पर सकल मूल्यवर्धित (जीवीए) वृद्धि क्रमशः 2014-15 और 2015-16 में घटकर -0.2 प्रतिशत और 0.6 प्रतिशत हो गई (अध्याय 7, आर्थिक सर्वेक्षण खंड-II, भारत सरकार, 2019-2020)। 2019-20 में इसकी वृद्धि लगभग 4 प्रतिशत होने की उम्मीद है (वार्षिक राष्ट्रीय आय 2019-20 के अनंतिम अनुमान और 2019-20 की चौथी तिमाही के लिए सकल घरेलू उत्पाद के तिमाही अनुमानों पर जारी प्रेस नोट)। कम और उतार-चढ़ाव वाली वृद्धि दर कृषि क्षेत्र में कई मौजूदा चुनौतियों का संकेत है जैसे छोटे और खंडित जोत, वर्षा-आधारित खेती पर अधिक निर्भरता, निवेश सामग्री के असंतुलित उपयोग आदि से प्राकृतिक संसाधनों का ह्रास, कम मशीनीकरण और फसलों की कम इनपुट उत्पादकता।

आर्थिक बहाली के लिए कृषि क्षेत्र को प्राथमिकता देना

कोविड 19 के आर्थिक प्रभावों से कृषि क्षेत्र केंद्रीय भूमिका में आ गया है। लाखों लोगों को भोजन मुहैया करवाने और महामारी के कारण जो लोग आजीविका खो चुके हैं, उन्हें रोज़गार प्रदान करने की इसकी ज़िम्मेदारी में बढ़ोत्तरी हुई है। इस समय जब अर्थव्यवस्था के अधिकांश क्षेत्रों में संकट गहरा गया है कृषि क्षेत्र में संभावनाएं बनी हुई हैं और यह अर्थव्यवस्था को संबल प्रदान कर रहा है। सभी प्रमुख खरीफ फसलों के तहत बोये गए क्षेत्र के पिछले वर्ष की इसी अवधि के दौरान से अधिक होने की उम्मीद है। चूंकि इस महामारी के बीच कृषि क्षेत्र सर्वाधिक संभावनाओं वाले क्षेत्रों में से एक है इसलिए मेरा मानना है कि इस समय कृषि क्षेत्र को प्राथमिकता देना देश के शीघ्र आर्थिक सुधार को सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है। इसलिए कृषि अनुसंधान पर एक विभेदित फोकस के माध्यम से कई समकालीन चुनौतियों के समाधान खोजने के लिए कदम उठाने की आवश्यकता है।

कृषि अनुसंधान की भूमिका

पिछले कुछ दशकों में भारतीय कृषि की सबसे उल्लेखनीय उपलब्धियों में से एक है खाद्यान्न उत्पादन का 1950-51 में लगभग 5.1 करोड़ टन से 2019-20 में 29.5 करोड़ टन से अधिक हो जाना (कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा जारी 2019 तक खाद्यान्न उत्पादन का तीसरा अग्रिम अनुमान) जिससे देश की खाद्य सुरक्षा को लेकर किसी भी आशंका का निवारण होता है। इसी तरह, बागवानी फसलों का उत्पादन 30 करोड़ टन को पार कर गया है। हरितक्रांति ने बीजों की उच्च उत्पादकता वाली किस्में, बेहतर सिंचाई सुविधाओं और उर्वरकों के माध्यम से उपज की पैदावार में वृद्धि करके खाद्यान्न की कमी को दूर करने के लिए देश में कृषि उत्पादन के लिए आवश्यक प्रोत्साहन प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। कृषि के लिए बुनियादी ढांचे का विकास, विस्तार, सिंचाई और इनपुट आपूर्ति और एक समर्थन मूल्य नीति ने हरितक्रांति की रचना में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

हमारे देश को कृषि अनुसंधान में निवेश से अपार लाभ हुआ है। भारत में उच्च विकास, खाद्य सुरक्षा और गरीबी घटाने में कृषि प्रौद्योगिकी के विस्तार ने महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। इसने हमें अपनी विशाल जनसंख्या के लिए खाद्यान्नों के मूल्यों में कमी, बेहतर पोषण परिणामों, ग्रामीण रोज़गार के विस्तार, कृषि निर्यात और विश्व बाजारों में हमारे कृषि उत्पादों की बेहतर प्रतिस्पर्धात्मकता के माध्यम से विदेशी मुद्रा आय के स्तर में सुधार में सक्षम बनाया है। अर्थव्यवस्था के ग्रामीण क्षेत्र में इस सुधार ने अग्रगामी और अधोगामी संबंधों के माध्यम से अर्थव्यवस्था के अन्य क्षेत्रों के विकास में मदद की है। अनुसंधान अध्ययनों से संकेत मिलता है कि अनुसंधान एवं विकास के उच्च-स्तर से उच्च उत्पादकता संभव हो सकती है जिसके फलस्वरूप अर्थव्यवस्था बेहतर होती है। इसके अलावा, कृषि अनुसंधान में निवेश से प्राप्त लाभ कृषि क्षेत्र को बढ़ावा देने के लिए किए जाने वाले अन्य निवेशों से यदि बेहतर नहीं है तो कमतर भी नहीं है। "सपोर्टिंग इंडियन फार्मर्स द स्मार्ट वे" शीर्षक वाली हाल ही में प्रकाशित पुस्तक से पता चलता है कि कृषि अनुसंधान और विकास पर खर्च किया जाने वाला प्रत्येक रुपया उर्वरक सब्सिडी (0.88), बिजली सब्सिडी (0.79), शिक्षा (0. 97) या सड़कों पर (1.10) की तुलना में बेहतर लाभ (11.2) देता है। अनुसंधान नीति के केंद्र में सार्वजनिक अनुसंधान प्रणाली की क्षमता में सुधार और जहां भी संभव हो, निजी क्षेत्र की भागीदारी को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। इसके अलावा, प्रौद्योगिकी हस्तांतरण और विकास को प्रोत्साहित करने के लिए शोध प्रयोगशालाओं से खेत तक प्रौद्योगिकी हस्तांतरण की बाधाओं को दूर किया जाना चाहिए। प्रौद्योगिकी हस्तांतरण को प्रभावी बनाने वाली तीन चीजें हैं : कृषि विस्तार, सिंचाई और ग्रामीण बुनियादी ढांचा।

भारतीय कृषि अनुसंधान संरचना को समझना

कृषि अनुसंधान कृषि क्षेत्र में तकनीकी विकास और कृषि में उत्पादकता बढ़ाने की कुंजी रहा है। भारत में कृषि अनुसंधान प्रणाली से संबंधित एक संक्षिप्त पृष्ठभूमि नीचे दी गई है:

i) भारत में कृषि अनुसंधान प्रणाली का उद्भव और विकास

अकाल आयोग की रिपोर्ट (1880 में जारी) भारत में कृषि अनुसंधान संरचना की नींव रखने के लिए एक महत्वपूर्ण कदम था। इसने केंद्र में कृषि विभागों के निर्माण के साथ-साथ उन प्रांतों में भी काम किया, जिन्हें अकाल राहत के अलावा कृषि अनुसंधान के कार्य की प्राथमिक भूमिका सौंपी गई थी। अगला प्रमुख कदम अन्य कृषि महाविद्यालयों के साथ बिहार के पूसा में इंपीरियल (अब भारतीय) कृषि अनुसंधान संस्थान की स्थापना था। रॉयल कमीशन ऑन एग्रीकल्चर (1928) की सिफारिश पर 1929 में इंपीरियल कौंसिल ऑफ एग्रीकल्चरल रिसर्च (आइसीएआर) की स्थापना की गई थी जिसे स्वतंत्रता के बाद भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (आइसीएआर) नाम दिया गया। वर्तमान में भारत में दुनिया की सबसे बड़ी कृषि अनुसंधान प्रणाली है जिसमें कृषि और संबद्ध क्षेत्रों

में अनुसंधान और शिक्षा में बड़ी संख्या में वैज्ञानिक कार्यरत हैं। वर्तमान प्रणाली में दो मुख्य धाराएं शामिल हैं अर्थात् राष्ट्रीय-स्तर पर आईसीएआर और राज्य-स्तर पर कृषि विश्वविद्यालय। इसके अलावा, कई अन्य एजेंसियां जैसे सामान्य विश्वविद्यालय, वैज्ञानिक संगठन और विभिन्न सरकारी विभाग कृषि से संबंधित अनुसंधान गतिविधियों में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से भाग लेते हैं।

भारत में कृषि अनुसंधान और शिक्षा प्रणाली में 70 से अधिक कृषि विश्वविद्यालयों सहित कई संस्थान शामिल हैं। कई वर्षों के दौरान विस्तार प्रणाली का विकास हुआ है जिसमें मुख्य ज़िम्मेदारी राज्य के लाइन विभागों की है जिसमें अन्य संस्थानों का सहयोग मिलता है। तमिलनाडु कृषि विश्वविद्यालय के अंतर्गत 1974 में पुडुचेरी में पहले कृषि विज्ञान केंद्र (केवीके) की स्थापना के बाद जनवरी 2020 तक देश में इनकी संख्या बढ़कर 700 से अधिक हो गई है। इन केवीके के उल्लिखित कार्यों में कृषि भूमि परीक्षण, फ्रंटलाइन प्रदर्शन, और किसानों का क्षमता निर्माण शामिल हैं। हाल के वर्षों में एक और महत्वपूर्ण संस्थान, जो प्रमुखता से उभरा है, वह है कृषि प्रौद्योगिकी प्रबंधन एजेंसी (एटीएमए) जो प्रमुख साझेदारों जैसे कि लाइन विभागों, अनुसंधान संगठनों, गैर-सरकारी संगठनों (एनजीओ) आदि को शामिल करके ज़िला-स्तर पर प्रौद्योगिकी प्रसार गतिविधियों की ज़िम्मेदारी लेता है।

ii) कृषि अनुसंधान का भविष्य

भारत में कृषि अनुसंधान और विस्तार प्रणाली ने अब तक कृषि क्षेत्र की चुनौतियों का भली-भांति सामना किया है। समकालीन और भविष्य की चुनौतियों का समाधान करने के लिए कृषि अनुसंधान में निम्नलिखित को शामिल करना महत्वपूर्ण है:

क) उच्च कृषि अनुसंधान व्यय : कृषि क्षेत्र के महत्व के मद्देनज़र देशहित में विभिन्न वांछनीय परिणाम प्राप्त करने के लिए कृषि अनुसंधान पर व्यय को बढ़ाने की आवश्यकता है। वर्ष 2012-14 के दौरान कृषि जीडीपी के प्रतिशत के रूप में कृषि अनुसंधान पर खर्च लगभग 0.40 प्रतिशत रहा, जो बहुत कम है। भारत की तुलना में अन्य देशों में इस पर खर्च अधिक किया जाता है। वर्ष 2008 में यही अनुपात सभी विकासशील देशों के लिए लगभग 0.54 प्रतिशत था, जबकि विकसित देशों ने औसतन अपने कृषि सकल घरेलू उत्पाद का लगभग 3.07 प्रतिशत अनुसंधान पर खर्च किया।

ख) फसल और गैर-फसल क्षेत्र दोनों पर फोकस : फसल क्षेत्र पर अनुसंधान अभी भी भारत जैसे विशाल और बढ़ती आबादी वाले देश के लिए प्रासंगिक है, जिसका एक बड़ा हिस्सा गरीबी-रेखा से नीचे है और आने वाले दशकों में राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा के समक्ष कई चुनौतियां हैं जैसे कि जलवायु परिवर्तन। हालांकि, गैर-फसल क्षेत्र पर भी बल देने की आवश्यकता है क्योंकि इसका कृषि क्षेत्र के भावी विकास का आधार बनना अपेक्षित है।

ग) छोटे भूमिधारक किसान और महिलाएं: भारतीय कृषि में दो उल्लेखनीय रुझान हैं छोटे भूमिधारकों की मौजूदगी (कृषि जनगणना 2015-16 के अनुसार कुल किसानों का 86 प्रतिशत, जिनके पास 47.3 प्रतिशत भूमि है) और कृषि क्षेत्र में महिलाओं की बढ़ती भागीदारी 73.6 प्रतिशत ग्रामीण महिला श्रमिकों में 12.6 प्रतिशत भूमि रखने वाली महिला किसान हैं। अगले 5 वर्षों में 10,000 किसान उत्पादक संगठनों (एफपीओ) की स्थापना के लक्ष्य के साथ, कृषि क्षेत्र में भावी शोध छोटे भूमिधारकों और महिलाओं द्वारा सामना की जा रही चुनौतियों का समाधान करने के लिए कम लागत वाले प्रभावी समाधान विकसित करने के लिए किए जा सकते हैं। उदाहरण के लिए, किसान उत्पादक संगठनों (एफपीओ) के माध्यम से छोटे भूमिधारकों को एकजुट करना उन्हें कम लागत पर बेहतर उत्पादकता के लाभों को प्राप्त करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम माना जा रहा है। एफपीओ से जुड़े होने के परिणामस्वरूप किसानों के कल्याण पर प्रभाव का विश्लेषण करने के लिए निरंतर शोध के साथ-साथ इसके प्रभावी कामकाज में आने वाली चुनौतियों का निपटारा समावेशी विकास प्राप्त करने में महत्वपूर्ण साबित हो सकता है।

किसान उत्पादक संगठनों (एफपीओ) के माध्यम से छोटे भूमिधारकों को एकजुट करना उन्हें कम लागत पर बेहतर उत्पादकता के लाभों को प्राप्त करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम माना जा रहा है। एफपीओ से जुड़े होने के परिणामस्वरूप किसानों के कल्याण पर प्रभाव का विश्लेषण करने के लिए निरंतर शोध के साथ-साथ इसके प्रभावी कामकाज में आने वाली चुनौतियों का निपटारा समावेशी विकास प्राप्त करने में महत्वपूर्ण साबित हो सकता है।

घ) अनुसंधान विस्तार में निजी क्षेत्र की भागीदारी : कृषि अनुसंधान के संचालन और उसके प्रयोगशाला से खेत में हस्तांतरण के लिए निजी क्षेत्र के साथ सहयोग आवश्यक है। कृषि क्षेत्र की प्रतिस्पर्धात्मकता में सुधार के लिए कृषि उद्यमियों को उपयुक्त परिवेश प्रदान करने की आवश्यकता है जिससे वे मूल्य शृंखला में उत्पादों, सेवाओं या अनुप्रयोगों के रूप में नूतन कदम उठाने में सक्षम बनें।

राष्ट्रीय ग्रामीण एवं कृषि विकास बैंक, नाबार्ड की भूमिका

संगठनात्मक और सामाजिक विकास के लिए अनुसंधान और विकास के महत्व को समझते हुए, नाबार्ड ने नाबार्ड अधिनियम 1981 के प्रावधानों के अनुसार अनुसंधान और विकास (आर एंड डी) फंड की स्थापना की है, जिसमें सालाना प्रतिपूर्ति वाली 50 करोड़ रुपये की धनराशि है। इसका उद्देश्य गहन अध्ययन और व्यावहारिक अनुसंधान के माध्यम से कृषि और ग्रामीण विकास की समस्याओं की नई जानकारियां प्राप्त करना और तकनीकी और आर्थिक अध्ययनों के माध्यम से नवीन दृष्टिकोणों को आज़माना है। आर एंड डी फंड कृषि कार्यों और ग्रामीण विकास के महत्वपूर्ण मसलों पर नीतियां बनाने के लिए लिया जाता है। इसमें कृषि, ग्रामीण बैंकिंग और ग्रामीण क्षेत्रों में प्रशिक्षण के लिए सुविधाएं,

सूचना के प्रसार और तकनीकी-आर्थिक अध्ययनों और अन्य सर्वेक्षणों के माध्यम से अनुसंधान को बढ़ावा देना शामिल है। आर एंड डी फंड के माध्यम से अनुसंधान परियोजनाओं और अध्ययनों को आयोजित करने के लिए अनुदान प्रदान किया जाता है, सेमिनार/सम्मेलन/संगोष्ठी का आयोजन किया जाता है, समसामयिक पत्रों और अन्य प्रकाशनों को प्रकाशित किया जाता है; प्रोफेसरों को नाबार्ड पीठ इकाइयों आदि के माध्यम से नाबार्ड के क्षेत्र से संबंधित विषयगत अनुसंधान करने के लिए सहायता दी जाती है। चार दशकों में नाबार्ड ने विभिन्न विषयों पर 350 से अधिक अध्ययनों और 2000 सेमिनारों और सम्मेलनों का संचालन किया है।

हाल के वर्षों में नाबार्ड द्वारा प्रायोजित कुछ महत्वपूर्ण शोध अध्ययन

i) नाबार्ड अखिल भारतीय ग्रामीण वित्तीय समावेशन सर्वेक्षण

नाबार्ड ने 2016-17 में नाबार्ड अखिल भारतीय ग्रामीण वित्तीय समावेशन सर्वेक्षण (एनएएफआईएस) आरंभ किया जिससे घरों के आजीविका और वित्तीय समावेशन पहलुओं की गहन जानकारी प्राप्त हो सके और वर्तमान ग्रामीण वित्तीय समावेशन परिदृश्य की महत्वपूर्ण रिक्तियों को पाटा जा सके । 29 राज्यों, 245 जिलों और 2016 गांवों/केंद्रों से 40,327 ग्रामीण और अर्ध-शहरी परिवारों के 1.87 लाख से अधिक सदस्यों से प्राप्त नमूनों से एनएएफआईएस को साक्ष्य-आधारित नीति बनाने में सहायता की उम्मीद है।

एनएएफआईएस 2016-17 ग्रामीण भारत में विकास की स्थिति को दर्शाता है। यद्यपि हासिल की गई प्रगति के संदर्भ में निष्कर्ष काफी अंतर-राज्यीय भिन्नता दिखाते हैं जिन्हें विभिन्न संकेतकों द्वारा मापा जाता है फिर भी राष्ट्रीय-स्तर पर आंकड़े ग्रामीण अर्थव्यवस्था की स्थिति की व्यापक समझ हासिल करने के लिए उपयोग किए जा सकते हैं।

सर्वेक्षण में अनुमान लगाया गया है कि गैर-कृषि परिवारों (एनएएच) की औसत मासिक आय 7269 रुपये है जबकि कृषि घरों (एएच) की औसत मासिक आय उनसे अधिक यानी 8931 रुपये है। एएच के लिए कुल आय में प्रमुख योगदान खेती (35 प्रतिशत) और मज़दूरी (34 प्रतिशत) से है, जबकि एनएएच में यह मज़दूरी (54 प्रतिशत) और सरकारी/ निजी नौकरी (32 प्रतिशत) से है। अगर खपत देखी जाए तो परिवारों ने लगभग 51 प्रतिशत खर्च खाद्य पदार्थों पर किया। निवेश के आंकड़ों के विश्लेषण से पता चलता है कि एएच ने सर्वेक्षण से पहले पिछले एक साल में औसतन 62,734 रुपये निवेश किए लेकिन कृषि उपकरणों की पैठ अभी भी कम है जिसमें एएच के केवल क्रमशः 5 प्रतिशत और 1.6 प्रतिशत ने ट्रैक्टर और ड्रिप सिंचाई का स्वामित्व बताया है। यह बैंक ऋण के विस्तार के साथ कृषि-बुनियादी ढांचे में निवेश के अपार अवसरों को दर्शाता है। सर्वेक्षण यह भी बताता है कि देश में लगभग 47 प्रतिशत घरों में कुछ बकाया ऋण पाए गए थे और एनएएच की तुलना में एएच के बीच ऐसा अधिक पाया गया था। अन्य निष्कर्षों से पता चलता है कि लगभग 88 प्रतिशत परिवारों के पास बैंक खाता था; पिछले वर्ष के दौरान 55 प्रतिशत एएच और 46 प्रतिशत एनएएच ने किसी बचत के बारे में बताया और औसत बचत 18,007 रुपये बताई गई।

सर्वेक्षण कुछ चिंताजनक क्षेत्रों की ओर भी इशारा करता है। केवल एक-चौथाई परिवारों ने बताया कि वे किसी न किसी प्रकार के बीमा के अंतर्गत आते हैं। विशेष रूप से मात्र 7 प्रतिशत ने फसल बीमा करवाया है, जो बहुत कम है। इन प्रमुख निष्कर्षों के अलावा, सर्वेक्षण से कई अन्य पहलुओं का भी पता चलता है जो नीति निर्माताओं के लिए महत्वपूर्ण हैं। सर्वेक्षण में रेखांकित क्षेत्रों पर ध्यान देने और सुधार की आवश्यकता है।

ii) प्रमुख भारतीय फसलों की जल उत्पादकता का मानचित्रण

नाबार्ड द्वारा अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक संबंधों पर अनुसंधान के लिए गठित भारतीय परिषद के सहयोग से प्रमुख भारतीय फसलों की जल उत्पादकता मानचित्रण पर यह अध्ययन किया गया है। यह दो मुख्य प्रश्नों के जवाब देने का प्रयास करता है (इसमें 10 प्रमुख फसलों पर अध्ययन किया गया जिसमे 60 प्रतिशत से अधिक सकल फसली क्षेत्र को लिया गया था):

- क्या भारत में मौजूदा फसल पद्धतियां विभिन्न क्षेत्रों के प्राकृतिक जल संसाधन उपलब्धता के अनुरूप हैं?
- क्या ये फसल पद्धतियां जल उपयोग के दृष्टिकोण से दीर्घकालिक हैं?

इन सवालों के जवाब के लिए, रिपोर्ट कुछ उपयोगी अवधारणाओं का उपयोग करती है। जल उत्पादकता का विश्लेषण तीन व्यापक परिदृश्यों से किया गया है- वास्तविक जल उत्पादकता (उपयोग किए जाने वाले कुल जल की प्रति इकाई फसल उत्पादन (टीसीडब्ल्यूयू), सिंचाई जल उत्पादकता (किसानों द्वारा इस्तेमाल सिंचाई जल से प्रति इकाई फसल उत्पादन) और आर्थिक जल उत्पादकता (फसल उत्पादन प्रति इकाई) टीसीडब्ल्यूयू के साथ-साथ सिंचाई के लिए इस्तेमाल जल की प्रति इकाई से उत्पादित फसल उत्पादन का मूल्य) से पूरे क्षेत्र में जल के उपयोग के संबंध में फसल की उपयुक्तता को दर्शाता है।

अध्ययन के व्यापक निष्कर्षों से पता चलता है कि भारत में ऐसे क्षेत्र हैं जो कुछ फसलों के लिए जल के अत्यधिक असमान वितरण के कारण अस्थिर कृषि की ओर बढ़ रहे हैं। इसका मतलब यह है कि फसल पद्धतियों और उपलब्ध जल संसाधन में तालमेल की बेहद कमी है। यह गन्ना और चावल के मामले में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है, जो कुछ क्षेत्रों में भूमि उत्पादकता और सिंचाई जल उत्पादकता के बीच एक विकृत संबंध दर्शाता है।

देश में विद्यमान जल की कमी के वर्तमान स्तर को देखते हुए सिंचाई जल उत्पादकता (विशेषकर चावल और गन्ने जैसी जल की अत्यधिक मात्रा का उपभोग वाली फसलों के लिए) के अनुरूप फसल की पद्धतियों को फिर से जांचने की आवश्यकता

है। अन्यथा देश जल की उपलब्धता के परिप्रेक्ष्य में अस्थिर कृषि की ओर अग्रसर होगा, किसानों के लिए जोखिम बढ़ाएगा, और दुर्लभ जल संसाधनों के उपयोग में अत्यधिक असमानता को बढ़ावा देगा।

iii) अनुसंधान और विकास के अन्य प्रयास

कृषि और ग्रामीण समृद्धि से संबंधित आगामी क्षेत्रों मसलन किसान उत्पादक संगठनों (एफपीओ), किसानों के लिए ऋण माफी योजनाएं, जलवायु स्मार्ट कृषि, सूक्ष्म वित्त (माइक्रो फाइनेंस), वित्तीय समावेशन आदि में सामाजिक-आर्थिक अनुसंधान भी नाबार्ड द्वारा अविरत किए जा रहे हैं। यह नियमित रूप से कई उपयोगी प्रकाशन/अध्ययन रिपोर्ट भी प्रकाशित करता है, जिसकी सॉफ्ट कॉपी www.nabard.org (सूचना केंद्र के तहत हालिया प्रकाशन) से प्राप्त की जा सकती है।

भावी कदम

भारतीय कृषि अनुसंधान प्रणाली ने अब तक भारतीय अर्थव्यवस्था के सामने मौजूद चुनौतियों का डट कर सामना किया है जिसमें कृषि विकास को बढ़ाना, गरीबी को घटाना और खाद्यान्न में भारत को आत्मनिर्भर बनाना शामिल है। इन प्रमुख मुद्दों को मद्देनज़र रखने के साथ-साथ भारतीय कृषि अनुसंधान प्रणाली को भविष्य में कुछ अन्य मुद्दों को शामिल करने की आवश्यकता है। समावेशी विकास हासिल करने, जलवायु परिवर्तन के लिए फसलों की प्रतिरोधी क्षमता में सुधार, भोजन की पोषण गुणवत्ता में सुधार और संसाधन उपयोग क्षमता में सुधार जैसी चुनौतियों का समाधान करने के लिए कृषि अनुसंधान और विस्तार पर खर्च बढ़ाने की आवश्यकता है। बायो-फोर्टिफिकेशन तरीकों का उपयोग उच्च गुणवत्ता वाली फसल की किस्मों को विकसित करने के लिए किया जाना चाहिए जिसमें उच्च प्रोटीन, जिंक, आयरन इत्यादि पोषक तत्व होते हैं। पादप प्रजनकों को खेती के पारंपरिक तरीकों के अलावा नवीनतम जैव-तकनीकी विधियों का उपयोग करने की आवश्यकता है।

'स्मार्ट कृषि' की आवश्यकता पर बल देते हुए हमें कृषि क्षेत्र में विकास को गति देने के लिए बिग डाटा, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, इंटरनेट ऑफ थिंग्स, कम्प्यूटिंग और ब्लॉक चेन, नैनो टेक्नोलॉजी इत्यादि के लिए एक 'प्रौद्योगिकी क्रांति' की आवश्यकता है। इसमें कम लागत वाली प्रौद्योगिकियों को विकसित करने की भी आवश्यकता हो सकती है जो कृषि उद्यमियों द्वारा खेतों तक हस्तांतरित की जा सकती हैं, जिससे अनुसंधान विस्तार में निजी क्षेत्र की अधिक भागीदारी संभव हो सकती है।

कृषि में उत्पादन की बाधाओं को दूर करने और विकास के अवसरों को बढ़ाने के लिए पारंपरिक ज्ञान सहित ज्ञान को बढ़ावा देने और साझा करने में बहु-हितग्राही दृष्टिकोण की आवश्यकता है। नाबार्ड स्थायी कृषि को बढ़ावा देने और ग्रामीण विकास के अपने मिशन को प्राप्त करने के लिए ग्रामीण भारत में अधिकतम सेवाएं देने हेतु विभिन्न संस्थानों के साथ साझेदारी की आशा रखता है।

(लेखक नाबार्ड-राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक, मुंबई के अध्यक्ष हैं।)
(लेख में व्यक्त विचार निजी हैं।)
ई-मेल : ccd@nabard.org

कृषि अनुसंधान : उपलब्धियां और चुनौतियां

–अशोक सिंह

देश में 1951 के बाद से खाद्यान्न उत्पादन में 5.4 गुना, बागवानी फसलों के उत्पादन में 10.1 गुना, मत्स्य उत्पादन में 15.2 गुना, दूध उत्पादन में 9.7 गुना तथा अंडा उत्पादन में 48.1 गुना की अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। आज जहां देश के अन्न भंडार भरे हुए हैं वहीं दूध उत्पादन में भारत निरंतर दो दशकों से विश्व में शीर्ष पर बना हुआ है। इसी तरह से मसालों के सबसे बड़े उत्पादक और निर्यातक के तौर पर भारत अपनी पहचान बना चुका है। निसंदेह इस सफलता में कृषि वैज्ञानिकों और किसानों की अहम् भूमिका है। इस क्रम में यह ज़िक्र करना भी कम प्रासंगिक नहीं होगा कि देशव्यापी–स्तर पर फैले भारत के कृषि अनुसंधान नेटवर्क को विश्व के सबसे बड़े कृषि–तंत्र के रूप में जाना जाता है।

कृषि प्रधान देश होने के नाते भारत में आबादी का लगभग 65 प्रतिशत हिस्सा आज भी अपनी आजीविका के लिए कृषि और संबद्ध क्षेत्रों पर निर्भर है, इसके विपरीत ब्रिटेन (5 प्रतिशत), अमेरिका (4 प्रतिशत), फ्रांस (14 प्रतिशत), आस्ट्रेलिया (16 प्रतिशत), जापान (21 प्रतिशत) और रूस (32 प्रतिशत) सरीखे विकसित देशों में कहीं कम आबादी कृषि से सीधे संबंधित है। इस तथ्य से समझा जा सकता है कि हमारे देश में कृषि क्षेत्र पर कितनी बड़ी जनसंख्या के लिए आजीविका और आहार जुटाने का दायित्व है। इस वास्तविकता से भी इंकार नहीं किया जा सकता है कि आज़ादी के बाद कृषि क्षेत्र में हुई उल्लेखनीय उन्नति की बदौलत ही आज देश के अन्न भंडार भरे हुए हैं और अन्य देशों को भी कृषि उत्पादों का निर्यात कर बहुमूल्य विदेशी मुद्रा का अर्जन किया जाता है। निसंदेह इस सफलता में कृषि वैज्ञानिकों और किसानों की अहम् भूमिका है। इस क्रम में यह ज़िक्र करना भी कम प्रासंगिक नहीं होगा कि देशव्यापी-स्तर पर फैले भारत के कृषि अनुसंधान नेटवर्क को विश्व के सबसे बड़े कृषि-तंत्र के रूप में जाना जाता है। इस नेटवर्क में शायद ही कोई ऐसी फसल हो जिसके अनुसंधान के लिए संस्थान/प्रायोजना/शोधकेंद्र की व्यवस्था नहीं हो। वर्तमान में देश में कृषि अनुसंधान के क्षेत्र में 27 हज़ार से भी अधिक वैज्ञानिक कार्यरत हैं और लगभग 1 लाख से ज़्यादा कर्मी इस अनुसंधान प्रणाली से जुड़े हुए हैं।

केंद्रीय कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय के अंतर्गत कार्यरत भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद की स्थापना 1929 में की गई थी। परिषद द्वारा देश में कृषि अनुसंधान एवं शिक्षा के प्रबंधन का कार्य शीर्ष संस्था के रूप में किया जाता है। परिषद के अधिदेश में टिकाऊ कृषि के लिए अनुसंधान एवं प्रौद्योगिकी विकास की योजना, कार्यान्वयन, समन्वयन और प्रोत्साहन, कृषि शिक्षा को बढ़ावा, कृषि आधारित ग्रामीण विकास हेतु प्रौद्योगिकी विकास आदि शामिल हैं।

निरंतर बढ़ता उत्पादन

देश में सन 1951 के बाद से खाद्यान्न उत्पादन में 5.4 गुना, बागवानी फसलों के उत्पादन 10.1 गुना, मत्स्य उत्पादन में 15.2 गुना, दूध उत्पादन में 9.7 गुना तथा अंडा उत्पादन में 48.1 गुना की अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। वर्ष 2019-20 के लिए अनुमानित खाद्यान्न उत्पादन 29.567 करोड़ टन है और आगामी वर्ष के लिए यह लक्ष्य 29.8 करोड़ टन का रखा गया है। इससे स्पष्ट पता चलता है कि किस तेज़ी से कृषि उत्पादन में वृद्धि हो रही है। इसी तरह से वित्तीय वर्ष 2020 के लिए बागवानी फसल उत्पादन का लक्ष्य 32.048 करोड़ टन का रखा गया है।

भारत में अन्य देशों की तुलना में सर्वाधिक संख्या में पशुधन हैं और यह गर्व की बात है कि दूध उत्पादन में भारत निरंतर दो दशकों से विश्व में शीर्ष पर बना हुआ है। वैश्विक-स्तर पर कुल दूध उत्पादन में लगभग 20 प्रतिशत का योगदान दे रहा है। इसी तरह से मसालों के सबसे बड़े उत्पादक और निर्यातक के तौर पर भारत अपनी पहचान बना चुका है। अगर धान उत्पादन की बात की जाए तो विश्व में दूसरे स्थान पर हमारा देश है। इसी तरह से फल एवं सब्जी उत्पादन और मछली उत्पादन में भी विश्व में दूसरे स्थान पर है। अंडा उत्पादन में चीन और अमेरिका के बाद भारत का स्थान है।

आज इसके अंतर्गत 72 से अधिक कृषि अनुसंधान संस्थान, 12 प्रायोजना निदेशालय, 6 ब्यूरो तथा 12 राष्ट्रीय अनुसंधान केंद्र देश के विभिन्न हिस्सों में बखूबी अपना काम कर रहे हैं। इनके अतिरिक्त 63 कृषि विश्वविद्यालय, 3 केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय, 5 समतुल्य कृषि विश्वविद्यालय तथा 4 कृषि संकाय युक्त विश्वविद्यालय भी इस नेटवर्क के महत्वपूर्ण हिस्से हैं। ये संस्थान कृषि से जुड़ी महत्वपूर्ण खाद्यान्न फसलों, बागवानी फसलों, पशुधन, मात्स्यिकी सहित अन्य संबद्ध विषयों पर काम कर रहे हैं। इस विशाल कृषि अनुसंधान तंत्र में वैज्ञानिकों द्वारा विकसित उन्नत कृषि तकनीकों को किसानों तक पहुंचाने के लिए देश के प्रत्येक ज़िले में कृषि विज्ञान केंद्रों की स्थापना भी की गई है। आज इनकी संख्या 700 से अधिक हो चुकी है।

उन्नत कृषि प्रौद्योगिकियों का विकास

आधुनिक काल में कृषि क्षेत्र अब तेज़ी से प्रौद्योगिकी-आधारित होता जा रहा है और परंपरागत खेती के तौर-तरीकों के स्थान पर अधिकाधिक किसान उन्नत वैज्ञानिक तकनीकों को अपनाकर खेती कर रहे हैं। इन नई तकनीकों की मदद से साल में न सिर्फ दो से अधिक फसल उत्पादन लेना संभव हो रहा है बल्कि कम लागत में परंपरागत कृषि की तुलना में कहीं अधिक उत्पादन कर पाना आसान हो गया है; जिससे किसानों की आमदनी में सतत वृद्धि हो रही है और उनके परिवार के जीवन-स्तर में सकारात्मक बदलाव देखने को मिल रहे हैं। अब कृषि वैज्ञानिक समझ चुके हैं कि कृषि उत्पादकता बढ़ाने पर आधारित अनुसंधान करना ही पर्याप्त नहीं है बल्कि किसान समुदाय की आमदनी बढ़ाने की रणनीति पर भी काम करना होगा। इसी के साथ केंद्र और राज्य सरकारों को किसानों को प्रोत्साहन देने वाली तमाम योजनाओं/कार्यक्रमों को भी प्रभावी रूप से लागू करना होगा ताकि लक्षित किसान परिवारों को इनका लाभ मिल सके। यह बिलकुल स्पष्ट है कि खाद्य एवं पोषण सुरक्षा के साथ किसानों को आय सुरक्षा प्रदान करने से ही गांवों में खुशहाली लाई जा सकती है। इसी गुरुमंत्र का अनुसरण कर वर्ष 2022 तक किसानों की आय दोगुनी करने के सरकार के संकल्प को पूरा किया जा सकता है।

वर्तमान में कृषि अनुसंधान में जिन पहलुओं पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है, उनमें प्रमुख तौर पर सूक्ष्म-स्तरीय कृषि भूमि उपयोग नियोजन, मृदा एवं जल संरक्षण, जल संचयन, भंडारण एवं भूजल रिचार्ज, जल उत्पादकता एवं पोषक तत्व दक्षता में सुधार, एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन, संसाधन संरक्षण प्रौद्योगिकियां, जैविक खेती, कृषि वानिकी, अपशिष्ट जल उपयोगिता, पर्वतीय एवं तटीय क्षेत्रों में कृषि,जैव अपशिष्ट प्रबंधन, खरपतवार प्रबंधन, जलवायु अनुकूल कृषि, अजैविक दबाव प्रबंधन आदि का विशेष तौर पर उल्लेख किया जा सकता है।

कृषि विशेषज्ञों की मानें तो प्रौद्योगिकी विकास, प्रौद्योगिकी प्रसार और अंत में इनके उपयोगकर्ताओं सहित सभी संबद्ध पक्ष आपस में मज़बूत कड़ियां जोड़कर संयुक्त रूप से ही कृषि क्षेत्र की उपरोक्त चुनौतियों का सामना कर सकते हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के सात दशकों के दौरान की कृषि अनुसंधान यात्रा में अनेक सराहनीय सफलताएं सामने आई। इनकी बदौलत ही कृषि क्षेत्र में उत्पादन में तेज़ी से बढ़ोत्तरी देखने को मिली। इन उपलब्धियों में हरितक्रांति, नीली क्रांति, पीली क्रांति, श्वेतक्रांति, इंद्रधनुष क्रांति आदि का खासतौर पर नाम लिया जा सकता है। यह दोहराने की ज़रूरत नहीं कि इन सफलताओं के कारण ही देश आज खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भरता हासिल कर पाया है। वर्तमान सरकार द्वारा भी कृषि क्षेत्र में विकास की गति को बढ़ाने के लिए कई प्रकार की नई पहल की गई हैं। देश की विभिन्न प्रकार की मृदा में सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी की समस्या का समाधान पाने के लिए एक ई-एटलस तैयार की गई है। इसके अलावा, देशव्यापी-स्तर पर करोड़ों की संख्या में बनाए जा रहे मृदा स्वास्थ्य कार्ड को भी इसी दिशा में उठाया गया सार्थक कदम कहा जा सकता है।

कृषि-आधारित विभिन्न क्रांतिकारी परिवर्तन

हरितक्रांति- साठ के दशक में देश में खाद्यान्न की कमी के कारण विदेशों से गेहूं और अन्य प्रकार के खाद्यान्न मंगाने की विवशता थी। जाने-माने कृषि वैज्ञानिक डॉ. एम.एस. स्वामीनाथन और उनके सहयोगियों के प्रयासों से पहली बार उच्च उपज देने वाली गेहूं की किस्मों, मशीनों, रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों और सिंचाई की उन्नत प्रणालियों का व्यापक-स्तर पर उपयोग

करते हुए पंजाब, हरियाणा और उत्तर प्रदेश के चुनिंदा क्षेत्रों में गहन खेती की शुरुआत की गई। इन प्रयासों के नतीजे अद्भुत रहे और खाद्यान्न पैदावार में अभूतपूर्व वृद्धि देखने को मिली।

नीली क्रांति- इसके अंतर्गत वैज्ञानिक तौर-तरीकों से जल कृषि, जलजीव संवर्धन, अंतर्देशीय एवं समुद्री मात्स्यिकी को बढ़ावा देते हुए देश में मत्स्य उत्पादन को नई ऊंचाइयों तक पहुंचाने में सफलता प्राप्त की गई। इसका लाभ मछुआरों के अलावा खेतों में तालाब बनाकर मत्स्य पालन करने वाले किसानों को भी बढ़ी आय के रूप में मिला। आज भारत से अनेक देशों को विभिन्न प्रकार के जलजीवों का बड़े पैमाने पर निर्यात किया जा रहा है।

श्वेतक्रांति- अन्य देशों की तुलना में देश में गौ-पशुओं सहित अन्य उपयोगी दुधारू पशुओं की सर्वाधिक संख्या की बदौलत डेयरी विकास ने बीसवीं शताब्दी के अंतिम दशकों के दौरान काफी ज़ोर पकड़ा और देखते ही देखते श्वेतक्रांति का रूप ले लिया। इसी का नतीजा है कि भारत दूध उत्पादन में गत दो दशकों से निरंतर वैश्विक-स्तर पर शीर्ष स्थान पर बना हुआ है। उल्लेखनीय है कि विश्व के कुल दूध उत्पादन का लगभग 20 प्रतिशत भारत द्वारा उत्पादित किया जाता है। आज डेयरी उद्योग में दूध उत्पादों से तैयार विभिन्न प्रसंस्कृत उत्पादों (दही, पनीर, मिठाई, घी आदि) से पशुपालकों को अच्छी-खासी कमाई हो रही है। वर्गीज़ कुरियन को श्वेतक्रांति के जनक के रूप में को जाना जाता है।

पीली क्रांति- वर्ष 1987-88 में भारत में तिलहन की पैदावार 1.26 करोड़ टन थी और यह मात्रा देश की मांग को पूरा करने के लिए अपर्याप्त थी। इसी कारणवश विदेशों से खाद्य तेल का बड़े पैमाने पर आयात करना पड़ता था। इस चुनौती को भारतीय कृषि वैज्ञानिकों ने गंभीरता से लेते हुए तिलहनों की कई उन्नत और अधिक पैदावार देने में सक्षम किस्मों को विकसित कर किसानों को इनकी खेती करने के लिए प्रेरित किया। इसका नतीज़ा बहुत ही उत्साहवर्धक रहा और वर्ष 1996-97 में देश में 2.44 करोड़ टन तिलहन पैदावार हुई। यह मात्रा देश को तिलहन उत्पादन में आत्मनिर्भर बनाने के लिए पर्याप्त थी। इस परिवर्तन को पीली क्रांति का नाम दिया गया।

गोल्डन क्रांति- देश में शहद उत्पादन को ऊंचाइयों तक पहुंचाने के लिए गोल्डन क्रांति का नाम लिया जाता है। इसकी बदौलत बागवानों को फल उत्पादन में मधुमक्खियों द्वारा परागण की दर में वृद्धि किए जाने से न सिर्फ फलों/सब्जियों की अधिक उपज मिलती है बल्कि शहद उत्पादन भी इस क्रम में प्राप्त होता है। दूसरे शब्दों में कहा जाए तो दोहरा लाभ ऐसे बागवानों को बिना किसी अतिरिक्त मेहनत के मिल जाता है।

सिल्वर क्रांति- पोल्ट्री सेक्टर को बढ़ावा देने के क्रम में अंडा उत्पादन में अप्रत्याशित वृद्धि देखने को मिली। इस पहल को सिल्वर क्रांति का नाम दिया गया। पोल्ट्री फार्मिंग से जुड़े किसानों को इससे काफी आर्थिक लाभ मिला।

उन्नत कृषि तकनीकें और उनका प्रभाव

देशव्यापी-स्तर पर फैले विशाल कृषि अनुसंधान नेटवर्क के माध्यम से वैज्ञानिकों द्वारा प्रायः सभी तरह की मृदा और जलवायु वाले क्षेत्रों के लिए अनगिनत लागत प्रभावी कृषि तकनीकियों का विकास किया गया है। ये प्रौद्योगिकियां फसल उत्पादन से लेकर कृषि वानिकी, बागवानी, पशुपालन, मछली पालन, शूकर पालन, मधुमक्खी पालन, लाख उत्पादन आदि से संबंधित हैं। प्रायः इन वैज्ञानिक तौर पर परखी गईं नई कृषि प्रौद्योगिकियों को बड़े पैमाने पर किसानों द्वारा अपनाया गया है और इनकी वजह से कृषि क्षेत्र में सकारात्मक बदलाव देखने को मिल रहे हैं। आइए, नज़र डालते हैं कुछ ऐसी ही विशिष्ट कृषि प्रणालियों पर-

समन्वित कृषि- वैज्ञानिकों द्वारा विकसित यह खेती की एक ऐसी प्रणाली है जिसमें फसल उत्पादन के साथ अलग-अलग क्षेत्रों की जलवायु के अनुसार पशुपालन अथवा बागवानी या मछली पालन जैसे कार्य भी साथ-साथ किए जा सकते हैं। इसके तहत् कई तरह के समन्वित कृषि प्रणाली के मॉडल खेत परीक्षणों के आधार पर विकसित किए गए हैं। प्रायः ये मॉडल क्षेत्र की जलवायु और वर्षा की मात्रा पर निर्भर करते हैं। उदाहरण के लिए 500-700 मि.मी. वर्षा वाले क्षेत्रों में कृषि के साथ पशुपालन की संस्तुति की जाती है। इसमें कम पानी की खपत वाली वनस्पतियों को भी उगाने का सुझाव दिया जाता है। इसी तरह से 700 से 1100 मि.मी. वर्षा वाले इलाकों में फसल-बागवानी और पशुपालन आधारित समन्वित कृषि का सुझाव एक अन्य वैकल्पिक मॉडल के रूप में दिया गया है। ऐसे क्षेत्र जहां पर 1000 मि.मी. से अधिक वर्षा की प्राप्ति होती है, वहां के लिए धान की खेती के साथ मछली पालन करते हुए वर्षाजल का भंडारण करने पर आधारित समन्वित कृषि की मॉडल संस्तुति की गई है। आवश्यकता एवं जलवायु के आधार पर सीमांत किसान इन्हें अपनाकर अपनी आमदनी को कई गुना तक आसानी से बढ़ा सकते हैं।

फसल विविधता- अमूमन किसान परंपरागत खेती में लकीर के फ़कीर बने रहते थे और एक ही तरह की फसलों की खेती लंबे समय तक करते रहते थे। इससे न सिर्फ उन्हें निरंतर कम उत्पादन मिलता था बल्कि मृदा से पोषक तत्वों का बड़े पैमाने पर ह्रास भी होता था। कृषि वैज्ञानिकों द्वारा विभिन्न अनुसंधानों के माध्यम से फसल विविधता से जुड़ी नई और उन्नत खेती की तकनीकों का विकास किया गया। इन तकनीकों में खाद्यान्न फसलों के साथ नाइट्रोजन का भूमि में स्थिरीकरण करने वाली फसलों को लगाने का सुझाव दिया गया। यही नहीं तिलहन, मसालों, सब्जियों आदि को भी इसमें सम्मिलित करने की सिफारिश इस प्रणाली को अपनाने वालों के लिए की गई। इस बदलाव से मृदा उत्पादकता में उल्लेखनीय सुधार नाइट्रोजन उर्वरकों पर बिना अतिरिक्त खर्च के संभव हो सका। इतना ही नहीं, किसानों की कुल आय में भी बढ़ोत्तरी हुई।

संरक्षित कृषि- इस प्रणाली की सबसे बड़ी विशेषता यही है कि उपलब्ध संसाधनों का भरपूर प्रयोग करते हुए जलवायु की प्रतिकूल स्थितियों में भी कई फसलें वर्ष के दौरान ली जा सकती हैं। इनमें खासतौर पर बेमौसमी सब्जियों का नाम लिया जा सकता है। बेमौसमी सब्जियों का बाज़ार में अत्यंत आकर्षक मूल्य मिलने के कारण आमदनी में कम समय में खासी बढ़ोत्तरी देखने को मिल जाती है। संसाधन प्रयोग दक्षता के कारण बहुमूल्य प्राकृतिक संसाधन जैसे जल के अलावा अन्य आदानों की बचत के साथ कृषकों के लिए खुशहाली का संदेश भी लाने में यह कृषि प्रणाली सफल रही है।

जैविक खेती- बिना रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के पैदा किए गए कृषि उत्पादों को जैविक उत्पाद कहा जाता है। वैज्ञानिकों द्वारा तय मानदंडों के अनुसार ही इन फसलों को उगाया जाता है। ये पोषण की दृष्टि से लाभदायक होने के साथ विभिन्न प्रकार के रसायनों से भी मुक्त होते हैं। इसके अलावा, ये मृदा की उर्वराशक्ति को बढ़ाने में प्रभावी रूप से मददगार होते हैं। उपभोक्ताओं के बीच जैविक उत्पादों की लोकप्रियता तेज़ी से बढ़ रही है। परंपरागत रूप से उपजाए गए उत्पादों की तुलना में इनकी बिक्री कहीं अधिक दाम पर करना संभव होता है। सरकारी तौर पर भी जैविक खेती को प्रोत्साहन देने के लिए कई तरह की योजनाएं संचालित की जा रही हैं। इस प्रकार पर्यावरण सरंक्षण के साथ मृदा उत्पादकता को भी इनसे बल मिलता है।

टपक सिंचाई प्रणाली-इस प्रणाली का विकास खेतों में सिंचाई के दौरान पानी की बर्बादी को रोकने, जल संरक्षण तथा कृषकों की इस मद पर होने वाली लागत में उल्लेखनीय कमी लाने के उद्देश्य से किया गया है। इसके अंतर्गत सिंचाई के लिए खेतों में मोटे पाइपों के प्रयोग से पानी भरने की प्रवृति पर रोक लगाते हुए पौधों की जड़ों में बूंद-बूंद से या टपक प्रणाली से पानी देते हुए सिंचाई की जाती है। इस प्रकार सिंचाई लागत में भारी बचत के साथ संरक्षित जल को अन्य उपयोग में लाया जा सकता है।

पुराने बागों के जीर्णोद्धार की तकनीक- अब तक होता यही था कि बागों में कम फलत वाले पुराने एवं अनुत्पादक पेड़ों को काट दिया जाता था इसके बाद दोबारा नए पौधों को लगाने के बाद लंबे समय तक उनके फल का इंतज़ार अलग करना पड़ता था। कृषि वैज्ञानिकों ने एक ऐसी तकनीक विकसित करने में सफलता हासिल की है जिसमें कि पुराने फल वृक्षों को काटने और नए पौधे लगाने की ज़रूरत ही नहीं पड़ती है। इस तकनीक में पुराने वृक्षों की छंटाई और उपचार कर उनमें ही दोबारा भरपूर फलन करने की क्षमता विकसित की जाती है। इससे खासतौर पर आम के पुराने बागानों की कम उत्पादन की समस्या से अत्यंत कम खर्चे में छुटकारा पाना संभव हो गया है।

कृषि मशीनीकरण-यह निर्विवादित सत्य है कि कृषि से जुड़े लगभग सभी कामकाज में मशीनों का प्रयोग बढ़ने से उत्पादन और उत्पादकता में खासी बढ़ोत्तरी हुई है। खेती के कार्यों के अनुसार ऐसी मशीनों/उपकरणों/यंत्रों को विकसित करने का श्रेय कृषि इंजीनियरिंग अनुसंधान की विधा से जुड़े वैज्ञानिकों को जाता है। इन कार्यों में खेतों को तैयार करने से लेकर निराई, गुड़ाई से लेकर फसल कटाई तक शामिल है। इस प्रकार श्रमिकों पर होने वाली लागत में कमी हुई और आय में वृद्धि भी देखने को मिली। इन मशीनों को खाली समय में किराए पर देने से भी अतिरिक्त आमदनी का सृजन किया जा सकता है।

कृषि में डिजिटल टेक्नोलॉजी का बढ़ता प्रयोग- देश के दूरवर्ती क्षेत्रों तक के किसानों तक पहुंच स्थापित करने और उन्हें उन्नत कृषि तकनीकियों के प्रति जागरूक करने के उद्देश्य से डिजिटल टेक्नोलॉजी/आईटी का बड़े पैमाने पर इस्तेमाल किया जाने लगा है। इनमें वेबसाइट्स, स्मार्टफोन, टेलीविज़न, कम्युनिटी रेडियो आदि का नाम लिया जा सकता है। मोबाइल फोन के माध्यम से प्रयोग हेतु तरह-तरह के कृषि ऐप्स हाल में विकसित किए गए हैं। इनके ज़रिए घर बैठे किसान अपनी खेती/फसल एवं पशु रोग/मौसम संबंधित जानकारियां निशुल्क कृषि विशेषज्ञों से हासिल कर सकते हैं। यही नहीं एसएमएस सेवा के माध्यम से भी किसान समुदाय तक बड़ी संख्या में महत्वपूर्ण संदेश पहुंचाए जा रहे हैं। 'नेशनल ई-गवर्नेंस प्लान इन एग्रीकल्चर' का कार्यान्वयन भी मोबाइल फोन के ऐप्स के ज़रिए केंद्र सरकार द्वारा किया जा रहा है। आने वाले समय में कृषि क्षेत्र में काफी सकारात्मक बदलाव ऐसी टेक्नोलॉजी के बढ़ते प्रयोग से देखने को मिल सकते हैं। इसी तरह से कृषि प्रसारकर्मियों द्वारा भी किसानों के खेतों पर नई तकनीकियों का प्रदर्शन किया जाता है। इसमें दृश्य-श्रव्य माध्यमों का प्रभावी तौर पर प्रयोग किया जाता है, यही नहीं दूरदर्शन द्वारा किसान चैनल भी इसी उद्देश्य को लेकर चलाया जा रहा है। इसके द्वारा प्रसारित कार्यक्रमों में कृषि वैज्ञानिकों को आमंत्रित कर नई जानकारियां किसानों को देने का प्रयास किया जाता है और किसान मंच सरीखे कार्यक्रमों में वाकायदा विशेषज्ञों से अपनी समस्याओं के जवाब भी पाने का मौका मिलता है।

भावी तकनीकियां- इसी तरह से ड्रोन और रोबोट्स के कृषि क्षेत्र में प्रयोग की शुरुआत हो चुकी है। फार्मिंग से जुड़े कमर्शियल संस्थानों द्वारा तो देश-विदेश में व्यापक-स्तर पर इनका इस्तेमाल किया जाने लगा है। देर-सबेर हमारे देश के किसान इन नई तकनीकों के फायदों को देखते हुए आकर्षित होंगे। इनके अतिरिक्त एनॉलिटिक्स, बिग डाटा, जीआईएस सॉफ्टवेयर, सेटेलाइट चित्रण आदि जैसी अत्याधुनिक टेक्नोलॉजी की उपयोगिता कृषि क्षेत्र में बढ़ाने पर भी वैश्विक-स्तर पर काम चल रहा है। इसमें कोई संदेह नहीं कि अगला दशक कृषि क्षेत्र में आमूलचूल परिवर्तन करने वाले दशक के रूप में जाना जाएगा।

अन्य प्रचलित प्रौद्योगिकियां-गत वर्षों के दौरान विकसित अन्य उपयोगी कम लागत की कृषि प्रौद्योगिकियों में संकर धान की खेती के लिए कृषि क्रियाओं का पैकेज; गेहूं बीज उत्पादन प्रौद्योगिकी; विभिन्न फसलों के लिए समेकित नाशीजीव प्रबंधन;

कृषि से जुड़े प्रमुख एप्स

सीएचसी-फार्म मशीनरी ऐप

देशभर के किसानों, विशेष रूप से छोटे और सीमांत किसान, जो उच्च तकनीक व मूल्य की कृषि मशीनरी और उपकरण खरीदने में असमर्थ है, को ध्यान में रखते हुए केंद्रीय कृषि और किसान कल्याण मंत्रालय ने "सीएचसी-फार्म मशीनरी" ऐप लॉन्च किया है। यह एक बहुभाषी मोबाइल ऐप है, जिसमें 12 भाषाओं के प्रयोग की सुविधा उपलब्ध है। इसके माध्यम से देशभर के किसान घर बैठे खेती के कामकाज के लिए ट्रैक्टर और अन्य कृषि मशीनरी किराए पर मंगा सकेंगे। इस ऐप की मदद से किसान ट्रैक्टर और खेती से जुड़े अन्य सामान किराए पर मंगा सकेंगे। इस ऐप को गूगल प्ले स्टोर से डाउनलोड किया जा सकता है।

कृषि किसान ऐप

खेती-किसानी को आसान बनाने और किसानों की आमदनी को कई गुना बढ़ाने के लिए कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय द्वारा "कृषि किसान ऐप" लॉन्च किया गया है। इसकी सहायता से किसान घर बैठे खेती से संबंधित सारी जानकारियां हासिल कर पाएंगे। कृषि किसान ऐप जियो-टैग युक्त फसल डेमो खेत और बीज केंद्र हैं। यह ऐप न केवल उनके प्रदर्शन को दिखा सकता है बल्कि किसानों को उसका लाभ उठाने में मदद कर सकता है। कृषि किसान ऐप में यह बताया गया कि फिलहाल किस राज्य में कहां पर कौन सी फसल का डेमो आप देख सकते हैं। इस ऐप में देशभर के सीड हब के बारे में भी बताया गया है। इसके तहत देशभर में फैले 150 सीड हब की जानकारी ले सकते हैं।

किसान सभा ऐप

केंद्रीय सड़क अनुसंधान संस्थान (सीएसआईआर-सीआरआरआई) ने किसान सभा के नाम से नया ऐप लॉन्च किया है। इस ऐप के ज़रिए देश के दूरदराज इलाकों के किसान सप्लाई चेन और ट्रांसपोर्ट की सुविधा से जुड़ सकते हैं। इस ऐप की मदद से किसानों की फसल की बिक्री और खाद-बीज खरीदने जैसी समस्या का समाधान भी हो जाएगा। किसान सभा ऐप को किसानों, ट्रांसपोर्टरों और कृषि उद्योग से जुड़े लोगों की समस्याओं के समाधान के लिए इस ऐप को विकसित किया गया है।

एग्री मीडिया वीडियो ऐप

यह एक वीडियो ऐप है, जो कि अधिकतर किसानों की पसंद बना हुआ है। इसकी मदद से किसान अपनी कीट प्रभावित फसल की फोटो लेकर ऐप पर अपलोड कर सकते हैं और कृषि विशेषज्ञों से उसकी रोकथान के लिए सलाह ले सकता हैं। इस तरह किसान घर बैठे फसलों को कीट और रोग से बचा सकते हैं। बता दें कि यह एक वीडियो ऐप है, जिस पर किसान दूसरी फसल के वीडियो भी देख सकते हैं। इसके अलावा खेती की नई तकनीक की जानकारी भी ले सकते हैं।

इफको किसान ऐप

इस मोबाइल ऐप के जरिए किसान अपनी फसल समेत अन्य कृषि संबंधी जानकारी ले सकते हैं। इस ऐप द्वारा कृषि विशेषज्ञों से फसलों के दाम, मौसम की जानकारी, मृदा की जांच और खेती के जुड़ी कोई भी सलाह ले सकते हैं। यह ऐप लगभग 10 भारतीय भाषाओं में उपलब्ध है।

एग्री ऐप

यह एक ऐसा एग्री ऑनलाइन प्लेटफॉर्म है, जहां किसानों को खेतीबाड़ी से लेकर सरकारी योजनाओं तक की पूरी जानकारी दी जाती है। खास बात है कि यहां कृषि विशेषज्ञों से मैसेज द्वारा बात की जा सकती है। इस पर खेतीबाड़ी संबंधी कई वीडियो भी उपलब्ध होती हैं, जिससे किसानों को आधुनिक तकनीक की जानकारी मिल पाती है।

किसान योजना ऐप

इस कृषि मोबाइल ऐप के जरिए किसान सरकारी योजनाओं संबंधी जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। इस पर राज्य की योजनाओं के विषय में बताया जाता है। इस ऐप की मदद से किसानों को सरकारी योजना की जानकारी लेने के लिए इधर-उधर भागना नहीं पड़ता है। इससे समय की भी बचत होती है।

किसान रथ

केंद्र सरकार ने हाल ही में "किसान रथ" नाम से एक ऐप लॉन्च किया है। यह ऐप कृषि उपज के परिवहन के लिए किसानों की मदद करेगा। एक आधिकारिक बयान के अनुसार, यह ऐप देशभर में 5 लाख ट्रकों और 20,000 ट्रैक्टरों को अवसर प्रदान करता है। यह ऐप राष्ट्रीय सूचना विज्ञान केंद्र (एनआईसी) द्वारा विकसित किया गया है।

कृषि विज्ञान केंद्र, इडुक्की, केरल में मृदा और जल परीक्षण करती महिला वैज्ञानिक

आलू के उत्पादन के लिए निम्न लागत निवेश प्रौद्योगिकी; सफ़ेद मूसली, इसबगोल, एलोवेरा, पिपरा मूल आदि की खेती के लिए कृषि क्रियाओं का पैकेज; समृद्ध कम्पोस्ट उत्पादन प्रौद्योगिकी; पशुधन के लिए यूरिया सीरा तरल आहार; ताज़े पानी में मोती संवर्धन; झींगा पालन प्रौद्योगिकी; श्रिम्प उत्पादन प्रौद्योगिकी; कम लागत में हरितगृह; पलाश और बेर वृक्षों पर लाख उत्पादन आदि का नाम लिया जा सकता है।

वर्ष 2019-20 की कृषि अनुसंधान उपलब्धियां

वर्ष के दौरान भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के अंतर्गत कार्यरत संस्थानों द्वारा खाद्य फसलों की कुल 220 किस्मों को व्यावसायिक खेती के लिए अधिसूचित किया गया। इन किस्मों में शामिल हैं; अनाज (96), तिलहन (37), दलहन (51), व्यावसायिक फसलें (18) तथा चारा फसलें (18)। इनके अतिरिक्त चावल, गेहूं, ज्वार, मक्का, बाज़रा, अलसी तथा रागी सहित विभिन्न फसलों की 20 बायो फोर्टीफाईड किस्में भी तैयार की गईं। इसी तरह से बागवानी फसलों की कुल 133 नवीन किस्मों को व्यावसायिक खेती के लिए जारी किया गया। इनमें सब्जी (71), मसाले (14),बीजीय मसाले (15), आलू (5), कंद (18), फल (6) एवं रोपण फसलें (4) शामिल हैं।

कृषि उद्योगों को बढ़ावा

अब समय आ चुका है कि खेती के प्रति मानसिकता में बदलाव आए और खेती को मात्र गुज़र-बसर का ज़रिया नहीं समझते हुए उद्योग या व्यावसायिक उपक्रम के रूप में अपनाया जाए। इसका सबसे बड़ा फायदा ग्रामीण क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर रोज़गार सृजन के रूप में नज़र आएगा। ग्रामीण युवाओं का रोज़गार की खोज में पलायन काफी हद तक कम हो सकेगा तथा शहरों पर पड़ने वाले इस बोझ को कम किया जा सकेगा। ऐसे उद्योगों में विभिन्न कृषि उत्पादों से प्रसंस्कृत आहार तैयार करना और शहरों में जाकर बिक्री करना शामिल है। इस प्रकार उत्पादक किसानों को बेहतर मूल्य मिल सकेगा और उनका जीवन-स्तर भी ऊंचा होगा। उदाहरण के लिए अनाजों से तैयार विभिन्न प्रकार के प्रसंस्कृति उत्पादों की बात करें तो इनमें बिस्किट, ब्रेड, गेहूं का आटा, सूजी, मैदा, पास्ता, नूडल्स; दलहनों में चने से बेसन, नमकीन,पापड़ आदि; तिलहनों से खाद्य तेल, पशुओं के लिए खली; फल एवं सब्जियों से हिमीकृत (फ्रोजन) फ्रूट्स, फ्रेंच फ्राइज़,कैचप, प्यूरी, सुखाई हुई सब्जियां, अचार; दूध से मक्खन, दही, फ्लेवर्ड मिल्क, घी, पनीर चीज़: मेडिसिनल प्लांट्स से विभिन्न प्रकार के सत या अर्क सहित कितने ही लघु उद्योगों का विकास किया जा सकता है। इनमें प्रायः कम से कम ही निवेश करने की ज़रूरत पड़ती है। शुरुआती अवस्था में पारिवारिक श्रम से भी काम चलाया जा सकता है। उत्पादों की मांग बढ़ने पर अन्य लोगों को रोज़गार के अवसरों में भी बढ़ोत्तरी हो सकती है।

चुनौतियां

कृषि अनुसंधान के क्षेत्र में सराहनीय उपलब्धियों के बावजूद अभी भी तमाम चुनौतियां किसानों, कृषि वैज्ञानिकों और सरकार के समक्ष मौजूद हैं। इनमें सीमित मात्रा में जल उपलब्धता, जलवायु परिवर्तन के दुष्प्रभाव, मृदा उत्पादकता में तेज़ी से हो रही गिरावट, बंजर भूमि का बढ़ता क्षेत्रफल, कृषि आदानों की बढ़ती कीमतें, प्राकृतिक आपदाओं के कारण फसलों की बर्बादी की बढ़ती घटनाएं, किसानों को उत्पादन की अत्यंत कम कीमत मिलना, कोविड-19 से कृषि क्षेत्र में बढ़ती समस्याएं, कीटों में कीटनाशियों के प्रति बढ़ती प्रतिरोधिता आदि का खासतौर पर उल्लेख किया जा सकता है। इनके अतिरिक्त ग्रामीण इलाकों में बुनियादी सुविधाओं का अभाव भी बहुत बड़ा कारण है जिसके कारण निजी क्षेत्र निवेश नहीं करना चाहता है। सरकार अपने सीमित संसाधनों के कारण चाहते हुए भी सीमित निवेश ही कर सकती है।

(लेखक 'खेती' और 'फल फूल' पत्रिका, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, केंद्रीय कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, नई दिल्ली में बतौर संपादक कार्यरत हैं।)

ई-मेल : ashok.singh.32@gmail.com

स्मार्ट कृषि के लिए उन्नत कार्यप्रणालियां

–डॉ. वाई. एस. शिवे और डॉ. टीकम सिंह

हाल ही में कृषि उत्पादन में व्यापक नवाचार हुए हैं, जिससे न केवल उत्पादकता में सुधार हुआ है बल्कि वे पर्यावरण की सुरक्षा के लिए भी उतने ही महत्वपूर्ण हैं। उर्वरक प्रबंधन के लिए सूचना प्रौद्योगिकी से संबंधित कई प्रणाली-अनुसंधान उपकरण उपलब्ध हो गए हैं। भौगोलिक सूचना प्रणाली (जीआईएस), ग्लोबल पोज़िशनिंग सिस्टम (जीपीएस) और रिमोट सेंसिंग (आरएस) की शुरुआत के साथ किसान अब प्रत्येक क्षेत्र की स्थान विशेष स्थितियों के लिए पोषक तत्वों से संबंधित सुझावों और जल प्रबंधन मॉडल को परिष्कृत कर सकते हैं।

विश्व की जनसंख्या में अब से 2050 तक अतिरिक्त एक तिहाई की वृद्धि दर्ज होगी और इस अतिरिक्त 2 अरब लोगों में से अधिकांश विकासशील देशों में होंगे। वहीं, शहरों में अधिक संख्या में लोग रह रहे होंगे। यदि आय और खपत में वर्तमान वृद्धि का रुख जारी रहता है तो खाद्य एवं कृषि संगठन (एफएओ) के अनुमान के अनुसार कृषि उत्पादन को भोजन और पशु चारे की अपेक्षित मांगों को पूरा करने के लिए 2050 तक 60 प्रतिशत तक बढ़ाना होगा। यदि कृषि को बढ़ती हुई वैश्विक आबादी का भरण-पोषण करना है और आर्थिक विकास व गरीबी में कमी के लिए आधार प्रदान करना है तो इसे खुद को बदलना होगा। कृषि पर प्रतिकूल प्रभाव के कारण जलवायु परिवर्तन इस कार्य को और अधिक कठिन बनाने में कसर नहीं छोड़ेगा जिस कारण नई तकनीकियों की आवश्यकता होगी, जोकि कृषि उत्पादकता और लाभप्रदता के अगले स्तर पर जाने के लिए बहुत आशाजनक लगता है। खाद्य सुरक्षा और कृषि विकास लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए बदलते परिदृश्य में जलवायु परिवर्तन के अनुकूलन और ग्रीनहाउस गैसों (जीएचजी) के उत्सर्जन को कम करने की आवश्यकता है। परंतु इस परिवर्तन को प्राकृतिक संसाधन आधार को कम किए बिना हासिल किया जाना चाहिए। भारतीय कृषि में होने वाले परिवर्तन को अधिक उत्पादक होने की आवश्यकता है। इसके अलावा, इसमें उत्पादन सामग्री का अधिक प्रभावी ढंग से उपयोग, उत्पादन में स्थिरता और साथ-साथ जोखिम, आघात और दीर्घकालिक जलवायु परिवर्तनशीलता के लिए अधिक लचीला होने की क्षमता होनी चाहिए।

एफएओ ने खाद्य सुरक्षा और जलवायु चुनौतियों को संयुक्त रूप से संबोधित करते हुए सतत् विकास (आर्थिक, सामाजिक और पर्यावरण) के तीन आयामों के रूप में जलवायु-स्मार्ट कृषि (सीएसए) को परिभाषित किया है। ये तीन मुख्य स्तंभ इस प्रकार हैं:

1) कृषि उत्पादकता और आय में लगातार वृद्धि;

2) जलवायु परिवर्तन का अनुकूलन और उसके प्रति लचीलापन;

3) जहां संभव हो, ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन को घटाना और/या हटाना।

इन तीन परस्पर जुड़ी हुई चुनौतियों का सामना करने के लिए उत्पादन प्रणालियों को कृषि भूमि स्तर पर अधिक कुशल और लचीला होने की आवश्यकता है। संसाधन संरक्षण और नूतन कार्य प्रणालियों को संसाधन उपयोग में अधिक प्रभावी होना चाहिए: अधिक खाद्यान्न उत्पादन के लिए भूमि, जल और आगतों का कम उपयोग होना चाहिए और इसे बदलाव व आघातों को झेलने के लिए अधिक लचीला होना चाहिए। इन संसाधन संरक्षण प्रौद्योगिकियों (आरसीटी) और नवीन कार्यप्रणालियों को नियत-स्तर पर सर्वाधिक सटीकता के साथ प्रयोग किया जाता है जिससे सूचना और संचार प्रौद्योगिकी निर्णय समर्थन प्रणालियों के साथ खेत-स्तर पर प्रयुक्त सामग्री जैसे बीज, उर्वरक, कीटनाशक, सिंचाई आदि में अधिक सटीकता प्राप्त हो सके और इसे ही 'स्मार्ट कृषि' माना जाता है।

स्मार्ट कृषि या/और सटीक कृषि में उत्पादन क्षमता और कृषि उत्पादों की गुणवत्ता बढ़ाने के लिए मौजूदा कृषि प्रथाओं में उन्नत प्रौद्योगिकियों का एकीकरण शामिल है। अतिरिक्त लाभ के रूप में वे बोझिल श्रम और थकाऊ कार्यों को कम करके खेत श्रमिकों के जीवन-स्तर में सुधार लाते हैं। स्मार्ट या सटीक कृषि जिसमें उत्पादन सामग्री का (जो आवश्यक है) जब और जहां आवश्यक हो, प्रयोग होता है, आधुनिक कृषि क्रांति की तीसरी लहर बन गई है (पहली मशीनीकरण थी और दूसरी आनुवांशिक संशोधन के साथ हरितक्रांति), और आजकल यह बड़ी मात्रा में आंकड़ों की उपलब्धता के कारण कृषि जानकारी प्रणालियों की वृद्धि के साथ परिष्कृत हो रही है।

हाल ही में कृषि उत्पादन में व्यापक नवाचार हुए हैं, जिससे न केवल उत्पादकता में सुधार हुआ है, बल्कि वे पर्यावरण की सुरक्षा के लिए भी उतने ही महत्वपूर्ण हैं। उर्वरक प्रबंधन के लिए सूचना प्रौद्योगिकी से संबंधित कई प्रणाली-अनुसंधान उपकरण उपलब्ध हो गए हैं। भौगोलिक सूचना प्रणाली (जीआईएस), ग्लोबल पोज़िशनिंग सिस्टम (जीपीएस) और रिमोट सेंसिंग (आरएस) की शुरुआत के साथ किसान अब प्रत्येक क्षेत्र की स्थान विशेष स्थितियों के लिए पोषक तत्वों से संबंधित सुझावों और जल प्रबंधन मॉडल को परिष्कृत कर सकते हैं।

उच्च संसाधन उपयोग दक्षता के लिए नूतन कार्य प्रणालियां

1. बीज बुवाई और रोपण में सटीकता

खेतों में सही स्थान और सही मात्रा में बीज बोना बहुत कठिन है। प्रभावी रूप से बीज बोने के लिए दो चीजों पर नियंत्रण की आवश्यकता होती है: सही गहराई पर बीज बोना, और पौधों की सही वृद्धि के लिए उचित दूरी पर पौधे लगाना। हर बार इन चीजों को अधिकतम करने के लिए सटीक बीजारोपण उपकरण तैयार किए गए हैं। जियोमैपिंग और सेंसर डाटा का संयोजन जो मिट्टी की गुणवत्ता, घनत्व, नमी और पोषक तत्वों के स्तर का विवरण देता है, बीजारोपण प्रक्रिया में लगाए जाने वाले अनुमान को काफी घटाता है। बीज को अंकुरित होने और बढ़ने की सबसे अच्छी अवस्था मिलती है और समग्र रूप से फसल उत्तम होती है। भविष्य में मौजूदा सटीक सीडर्स ट्रैक्टरों और आईसीटी सक्षम प्रणाली के साथ उपलब्ध होंगे जो किसानों को फीडबैक देंगे। बीजारोपण और रोपण में उपयोग के लिए प्रोटोटाइप ड्रोन का निर्माण और परीक्षण किया जा रहा है। ये ड्रोन संपीड़ित हवा का उपयोग करके खाद और पोषक तत्वों के साथ बीज की फली वाले कैप्सूलों को ज़मीन में सीधे रोंप सकते हैं।

2. पोषक तत्व प्रबंधन में सुस्पष्टता

स्थान विशेष पोषक तत्व प्रबंधन (एसएसएनएम) एक सुनियोजित पद्धति है जो पोषक तत्वों से "फसलों के पोषण" पर सम्पूर्ण जानकारी प्रदान करते हैं। जब भी विभिन्न फसल उत्पादन प्रणाली के अंतर्गत पोषक तत्वों की मांग और आपूर्ति के बीच तालमेल बनाने की आवश्यकता होती है, पोषक तत्वों की विशेष परिवर्तनशीलता और बेहतर पोषक तत्व उपयोग दक्षता के प्रबंधन का हल है।

i) स्मार्ट उर्वरक: स्मार्ट उर्वरक नए प्रकार के उर्वरक हैं जो सूक्ष्मजीवों और नैनो पदार्थों के आधार पर तैयार किए जाते हैं। नियंत्रित निर्गमन और/या वाहक/वितरण प्रणाली पर बल देने के साथ नैनो प्रौद्योगिकी आधारित स्मार्ट उर्वरक विकास पौधों की मांगों के अनुरूप पोषक तत्वों की उपलब्धता को संतुलित करेंगे जिससे पोषक तत्वों की क्षति कम होगी। पोषक तत्व उपयोग क्षमता में वृद्धि से फासफोरस की मात्रा आधी से एक चौथाई हो जाती है और पैदावार 10 प्रतिशत बढ़ जाती है। स्मार्ट उर्वरक से सूक्ष्म पोषक तत्वों की मात्रा में 90 प्रतिशत तक की कमी होती है। कम निवेश के कारण किसानों की आय 15-20 प्रतिशत तक बढ़ सकती है। बायोस्टिमुलंट्स पौधों के हारमोनों को उद्दीप्त करते हैं जो जड़ों के विकास, जड़ों की कार्यक्षमता, पोषक तत्वों का उद्ग्रहण और गुणों को प्रभावित करते हैं और यह रासायनिक से जैविक खाद व्यवस्था में स्थानांतरित करने में फायदेमंद होते हैं। बायोस्टिमुलेंट्स के प्रमुख समूह ह्यूमिक पदार्थ, प्रोटीन हाइड्रोलाइज़ेट और एमिनो एसिड स्टिमुलेंट्स, समुद्री शैवाल सत्त और पीजीपीआर हैं। दूसरी ओर, बायोफर्टिलाइज़र का स्वयं पोषक तत्वों की आपूर्ति किए बिना पोषक तत्वों की उपलब्धता पर अप्रत्यक्ष प्रभाव होता है। ये सजीव सूक्ष्मजीव फॉर्मूलेशन हैं जो पोषक तत्वों की उपलब्धता और उद्ग्रहण में सहायता करते हैं।

ii) लीफ कलर चार्ट: लीफ कलर पौधे की नाइट्रोजन स्थिति का एक अच्छा संकेतक है। पत्ती की क्लोरोफिल मात्रा और पत्ती के रंग में परिवर्तन के माध्यम से फसल की आवश्यकता अनुसार नाइट्रोजन की आपूर्ति का मिलान करके इसके उपयोग को अनुकूलित किया जा सकता है। फिलीपींस स्थित अंतर्राष्ट्रीय चावल अनुसंधान संस्थान द्वारा विकसित लीफ कलर चार्ट किसानों की मदद कर सकता है क्योंकि पत्ती के रंग की गहनता चावल

के पौधे में नाइट्रोज़न की स्थिति से संबंधित है। लीफ कलर चार्ट का उपयोग करके पत्ती के रंग की निगरानी नाइट्रोजन के प्रयोग के सही समय के निर्धारण में मदद करती है। सभी परिस्थितियों में लीफ कलर चार्ट का उपयोग सरल, आसान और किफायती है। अध्ययनों से पता चलता है कि लीफ कलर चार्ट का उपयोग करके नाइट्रोज़न को 10-15 प्रतिशत बचाया जा सकता है।

iii) नोरमलाइज़्ड डिफरेंस वेजीटेशन इंडेक्स (एनडीवीआई) सेंसर्स: गेहूं और चावल की फसलों में अध्ययनों से पता चला है कि रिमोट सेंसिंग आधारित नोरमलाइज़्ड डिफरेंस वेजीटेशन इंडेक्स (एनडीवीआई) सेंसर्स का उपयोग करके आवश्यकतानुसार नाइट्रोज़न के प्रयोग से बिना किसी उपज क्षति के 15-20 प्रतिशत नाइट्रोज़न बचाई जा सकती है (बिजय सिंह और अन्य, 2015) जिससे किसानों की लाभ सीमा को बढ़ाया जा सकता है।

iv) सॉयल-प्लांट एनालिसिस डेवलपमेंट (एसपीएडी) परिमाण: एसपीएडी (सॉयल-प्लांट एनालिसिस डेवलपमेंट) पत्ती में नाइट्रोज़न की स्थिति की निगरानी और चावल में नाइट्रोज़न टॉपड्रेसिंग के समय में सुधार के लिए एक सरल, त्वरित और पोर्टेबल नैदानिक उपकरण है। एसपीएडी कम लागत वाला क्लोरोफिल मीटर है और किसानों के लिए किफायती है। एसपीएडी थ्रेशहोल्ड का उपयोग करके पत्ती में नाइट्रोज़न की स्थिति की निगरानी करना और सिंचित चावल पर नाइट्रोज़न उर्वरक का समय निर्धारण करना संभव है। पौधे में नाइट्रोज़न की स्थिति को सबसे ऊपर पूरी तरह से फैली पत्ती की एसपीएडी रीडिंग से मापने को एक सामान्य प्रणाली के रूप में स्वीकार किया गया है। हालांकि यह पाया गया कि निचली पत्तियां नाइट्रोजन की स्थिति के निदान के लिए परीक्षण नमूने के रूप में अधिक उपयुक्त हो सकती हैं क्योंकि निचली पत्तियां ऊपरी पत्तियों की तुलना में नाइट्रोज़न-स्तर को पृथक करने में बहुत बेहतर होती हैं, यदि कुल नाइट्रोज़न को एक संकेतक के रूप में उपयोग किया जाता है। एसपीएडी मीटर आधारित नाइट्रोज़न प्रबंधन अधिक प्रभावी और स्मार्ट प्रतीत होता है।

v) पोषक विशेषज्ञ (एनई): एनई फसल की पैदावार, पर्यावरण गुणवत्ता और समग्र कृषि स्थिरता में सुधार के लिए निर्णय समर्थन प्रणाली सॉफ्टवेयर द्वारा निर्देशित हाल ही में विकसित सटीक पोषक तत्व प्रबंधन टेक्नोलॉजी है। सीआईएमएमवाईटी के सहयोग से इंटरनेशनल प्लांट न्यूट्रीशन इंस्टीट्यूट ने पोषक विशेषज्ञ (एनई) टेक्नोलॉजी विकसित की है। यह एक पोषक तत्व निर्णय समर्थन प्रणाली है जो स्थान विशेष पोषक तत्व प्रबंधन (एसएसएनएम) नियमों पर आधारित है। एनई उपज के अनुसार और लक्षित कृषि संबंधी क्षमताओं के साथ-साथ देशी स्रोतों से पोषक तत्वों की भरपाई को देखते हुए निर्धारित उर्वरक मात्रा सुझाता है। यह प्रणाली स्थान विशेष जानकारी को व्यवस्थित ढंग से हासिल करती है जो स्थल विशेष सुझावों को विकसित करने के लिए महत्वपूर्ण है। देश के प्रमुख मक्का उगाने वाले कृषि पारिस्थितिकी क्षेत्रों में उर्वरक की मात्रा सुझाने के लिए एनई का उपयोग सफलतापूर्वक किया गया है जिससे मौजूदा उर्वरक सुझावों की वानिस्पतिक उपज और कृषि लाभप्रदता में वृद्धि हुई है।

vi) यूरिया डीप प्लेसमेंट (यूडीपी): अंतर्राष्ट्रीय उर्वरक विकास केंद्र (आईएफडीसी) द्वारा विकसित यूडीपी तकनीक चावल प्रणालियों के लिए जलवायु स्मार्ट समाधान का एक अच्छा उदाहरण है। चावल के लिए मुख्य नाइट्रोजन उर्वरक यूरिया के प्रयोग की आम तकनीक ब्रॉडकास्ट एप्लीकेशन है जो एक बहुत ही अप्रभावी तरीका है, जिसमें 60-70 प्रतिशत नाइट्रोजन की क्षति होती है और जो जीएचजी उत्सर्जन और जल प्रदूषण को बढ़ाता है। यूडीपी तकनीक में यूरिया के 1 से 3 ग्राम के "ब्रिकेट" बनाए जाते हैं जिन्हें धान की रोपाई के बाद मिट्टी में 7 से 10 से.मी. की गहराई पर रखा जाता है। इस तकनीक से नाइट्रोज़न की कमी 40 प्रतिशत तक कम हो जाती है और यूरिया प्रभाविता 50 प्रतिशत तक बढ़ जाती है। यूरिया के उपयोग में औसतन 25 प्रतिशत की कमी के साथ इसकी पैदावार 25 प्रतिशत तक बढ़ जाती है (सिंह एवं अन्य 2010)।

3. कुशल जल प्रबंधन के लिए नूतन प्रणालियां

मानव उत्तरजीविता और सतत विकास के लिए जल सबसे महत्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधन है क्योंकि इसकी उपलब्धता दिन-प्रतिदिन कम होती जा रही है। सिंचाई क्षेत्र के लिए जल की कुल अनुमानित मांग मौजूदा-स्तर से अधिक होगी इसलिए तीन प्रमुख चुनौतियां होंगी (i) सिंचित क्षेत्रों में उपलब्ध जल संसाधनों के कुशल और उत्पादक उपयोग से "जल की प्रति बूंद अधिक फसल" (ii) कम उत्पादन वाले पारिस्थितिकी तंत्रों जैसे वर्षा-आधारित और जलमग्न क्षेत्रों की उत्पादकता में वृद्धि और (iii) कृषि उत्पादन के लिए अपशिष्ट जल का उपयोग करना। यह प्रभावी सिंचाई प्रबंधन के माध्यम से ही संभव है यानी कब और कितनी फसल की आवश्यकता है।

अ) स्वचालित सिंचाई प्रणाली: स्प्रिंकलर, ड्रिप और उपसतह ड्रिप सिंचाई जैसी दबाव वाली सिंचाई प्रणाली पहले से ही प्रचलित सिंचाई विधियां हैं जो किसानों को यह नियंत्रित करने की अनुमति देती हैं कि उनकी फसलों को कब और कितना जल मिलता है। नमी के स्तर और पौधों के स्वास्थ्य की निरंतर निगरानी करने के लिए इन सिंचाई प्रणालियों को तेज़ी से परिष्कृत इंटरनेट ऑफ थिंग्स से सुसज्जित सेंसर के साथ जोड़कर किसान केवल आवश्यकता होने पर ही हस्तक्षेप कर पाएंगे अन्यथा प्रणाली स्वायत्त रूप से संचालित होती रहेगी। हालांकि दबाव वाली सिंचाई प्रणालियां बिल्कुल रोबोटिक नहीं हैं लेकिन वे स्मार्ट फार्म के संदर्भ में पूरी तरह से स्वायत्त रूप से काम कर सकती हैं जोकि आवश्यकतानुसार सिंचाई करने के लिए खेतों के चारों ओर लगे सेंसर के आंकड़ों पर निर्भर हैं।

ब) खेत में जलाशय (ओएफआर): वर्षा जल संचयन और कुशल जल उपयोग भविष्य में वर्षा-आधारित कृषि को बनाए रखने के लिए अपरिहार्य विकल्प है। स्थिरता और लोगों की आजीविका में सुधार सुनिश्चित करने के लिए विभिन्न राज्यों ने ओएफआर के लिए विशेष कार्यक्रम शुरू किए हैं।

स) सीमित सिंचाई आपूर्ति: सीमित जल उपलब्धता की स्थिति में जल के अधिक प्रभावी और उचित उपयोग के लिए आंशिक फसल जल की आवश्यकताओं को पूरा करने के आधार पर सिंचाई कार्यनीतियों को अपनाया जाना चाहिए। विनियमित सीमित सिंचाई और नियंत्रित लेट-सीज़न सीमित सिंचाई जैसी सिंचाई प्रणालियां अपनाना जल संरक्षण और फसल उत्पादन के लिए उपयोग किए जाने वाले जल की मात्रा को घटाने के लिए एक स्वीकृत कार्यनीति बन रही है।

4. खरपतवार और कीट प्रबंधन के लिए नवीन पद्धतियां

i) नई प्रकार की खरपतवारनाशक : हाल ही में खरपतवार उगने के बाद (पोस्ट एमरजेंस) प्रयोग की जाने वाली कुछ नई पीढ़ी की खरपतवारनाशक बाज़ार में उपलब्ध हैं जो खेत की फसलों में खरपतवारों के चयनात्मक प्रभावी नियंत्रण का आश्वासन देते हैं। बहुत कम खुराक में इन खरपतवारनाशकों की आवश्यकता होती है और ये रखरखाव और लाने ले-जाने में बहुत आसान हैं। कुछ पोस्ट- एमरजेंस खरपतवारनाशक जैसे दालों और तिलहन में प्रयुक्त इमैज़ेथेपयर, फेनोक्सप्रॉप-पी-इथाइल, सायहेलोफोप ब्यूटाइल, क्विज़ालोफोप इथाइल और क्लोडिनाफॉप-प्रोपरगिल; मक्का में टेम्बोट्रायोन, चावल में पाइराज़ोसल्फ्यूरोन इथाइल, क्लोरिम्यूरोनिथाइल + मेट्सल्फ्यूरॉन मिथाइल; गेहूं में क्लोडिनाफोप + मेट्सल्फ्यूरॉन मिथाइल, व्यापक रूप से चौड़े पत्ते वाले और घास वाले खरपतवारों को नियंत्रित करने के लिए बहुत प्रभावी पाया जाता है।

ii) खरपतवारनाशक प्रतिरोधी फसलें (एचआरसी): खरपतवारनाशक प्रतिरोधी फसलें आनुवांशिक रूप से संशोधित (जीएम) फ़सल होती हैं जो विशेष ब्रॉड-स्पेक्ट्रम खरपतवारनाशक का प्रतिरोध करने के लिए संरचित की जाती हैं। ये आसपास के खरपतवारों को मारती हैं, लेकिन उगी फसल को बरकरार रखती हैं। इन एचआरसी में कुल जीएम फसल क्षेत्र का 83 प्रतिशत शामिल है, जो दुनिया भर में कृषि योग्य भूमि के 8 प्रतिशत से भी कम के बराबर है। अधिकांश खरपतवारनाशक प्रतिरोधी जीएम फसलों (मक्का, सोयाबीन, कपास) को ग्लाइफोसेट झेलने के लिए संरचित किया गया है, लेकिन अब जीएम फसलों को 2, 4 डी, डाईकेम्बा, ग्लूफोसिनेट, ग्लाइफोसेट, सल्फोनील्यूरिया, ऑक्सिनिल, मेसोट्रायोन और आइसोक्सफ्लुटोल के प्रतिरोध के लिए विकसित किया गया है। यदि भारत सरकार खरपतवारनाशक प्रतिरोधी जीएम फसलों की अनुमति देती है, तो खरपतवार प्रबंधन अधिक प्रभावी होगा।

iii) खरपतवार प्रबंधन में कृत्रिम बुद्धिमत्ता और स्वचालन: खरपतवार और कीट प्रबंधन पौधे की वृद्धि और विकास के सबसे महत्वपूर्ण पहलू हैं जिनका प्रबंधन स्वतंत्र रोबोट के माध्यम से उत्तम तरीके से किया जा सकता है। कुछ प्रोटोटाइप पहले से ही निगरानी और साथ ही प्रबंधन के लिए विकसित किए जा रहे हैं। इसी तरह खरपतवार को नियंत्रित करने के लिए स्वचालित कल्टीवेटर का उपयोग किया जा सकता है। भविष्य में उन्नत मशीन लर्निंग या यहां तक कि कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) को एकीकृत किए जाने के साथ इस तरह की मशीनें खरपतवार या फसलों की निगरानी करने के लिए पूरी तरह से मानव श्रम की आवश्यकता को समाप्त कर सकती हैं।

आजकल फसल छिड़काव अनुप्रयोगों के लिए ड्रोन भी उपलब्ध हैं जो एक और श्रम-गहन कार्य को स्वचालित करने का अवसर प्रदान करते हैं। जीपीएस, लेज़र मापन और अल्ट्रासोनिक स्थिति संयोजन का उपयोग करते हुए फसल पर छिड़काव करने वाले ड्रोन ऊंचाई और स्थान को आसानी से अनुकूलित कर सकते हैं और हवा की गति, स्थलाकृति और भौगोलिक स्थिति जैसे परिवर्ती कारकों का समायोजन कर सकते हैं। यह ड्रोन को फसलों पर अधिक प्रभावी ढंग से अधिक सटीकता और कम क्षति के साथ खरपतवारनाशकों, उर्वरकों और कीटनाशकों के छिड़काव में सक्षम बनाता है।

निराई के लिए डिज़ाइन किए गए रोबोट उसी मूल मशीन के साथ कीटों की पहचान और कीटनाशकों के इस्तेमाल करने के लिए सेंसर, कैमरा और स्प्रेयर से लैस हो सकते हैं। ये रोबोट और उनके जैसे अन्य आने वाले समय में खेतों पर अलग-अलग काम नहीं करेंगे। इन्हें ट्रैक्टरों और इंटरनेट ऑफ़ थिंग्स से जोड़ा जाएगा जिससे समस्त कार्य लगभग स्वयं ही संपन्न होगा।

उन्नत संसाधन संरक्षण कार्य प्रणालियां

अ) लेज़र लैंड लेवलिंग: प्रिसिज़न लैंड लेवलिंग एक अन्य संसाधन संरक्षण टेक्नोलॉजी है जिसमें लेज़र गाइडेड सिस्टम का उपयोग करने से एक पूरी तरह से समतल क्षेत्र पाने में मदद मिलती है। लेज़र लैंड लेवलिंग से सीधे बीज से उगाए चावल (डीएसआर) और प्रत्यारोपित चावल (टीपीआर) की उपज में लाभ और 20-25 प्रतिशत सिंचाई जल की बचत के अलावा कई अन्य लाभ हासिल होते हैं जैसे बेहतर फसल स्थापन, पोषक तत्व उपयोग क्षमता, एकसार सिंचाई आदि।

ब) रेज़ड बेड प्लांटिंग : रेज़ड बेड प्लांटिंग का अर्थ है फसलों (गेहूं, मक्का, अरहर और बागवानी फसलों) को ज्यामितीय पंक्तियों में उगाना और नाली (फ़रो) सिंचाई व्यवस्था के साथ एक मल्टी क्रॉप रेज़ड बेड प्लांटर का उपयोग करके ऊपर उठाई क्यारियों में लगाना। यह 30-40 प्रतिशत तक सिंचाई के जल को बचाने में मदद करता है, नालियां भारी बारिश होने पर निकासी चैनल के रूप में कार्य करती हैं और फसलों को अतिरिक्त नमी से

बचाती हैं। यह इंटरकल्चरल संचालनों और फसल विविधिकरण के लिए बेहतरीन अवसर प्रदान करता है।

स) संरक्षण जुताई: संरक्षण जुताई प्रणालियों में शून्य जुताई (नो-टिल), कम (न्यूनतम) जुताई, पलवार जुताई, मेढ़ जुताई से लेकर परिरेखा जुताई तक की जाती है। संरक्षण जुताई द्वारा की जाने वाली खेती फसल उगाने का वह तरीका है जिसमें मिट्टी को छेड़े बिना ज़ीरो-टिल प्लांटर/ड्रिल का उपयोग करके जुताई की जाती है। यह मिट्टी में रिसने वाले जल की मात्रा को बढ़ाता है और मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ अवधारण क्षमता बढ़ाने के साथ पोषक तत्वों के चक्रण को बढ़ाता है। संरक्षण जुताई मिट्टी के गुणों में सुधार करती है और इसे अधिक लचीला बनाती है। यह समय पर रोपण, लागत को कम करने, मिट्टी की गुणवत्ता में सुधार, लाभ में वृद्धि, अत्यधिक गर्मी के तनाव को घटाने और पर्यावरणीय आपदाओं को कम करने में मदद करता है।

उच्च उत्पादकता और लाभप्रदता के लिए अभिनव प्रणालियां

i) फसल विविधीकरण: फसल विविधीकरण देश में लाखों लोगों को रोज़गार और खाद्य सुरक्षा प्रदान करने वाली सबसे महत्वपूर्ण कृषि गतिविधि है। फसल विविधीकरण दो तरीकों से किया जा सकता है अर्थात् कालिक/क्षैतिज/फसल-चक्रीय विविधीकरण और स्थानिक/लम्बवत् विविधीकरण। ऐसी फसलें जो कम उत्पादक होती हैं या जिन्हें अधिक आदानों की आवश्यकता होती है, उन्हें अधिक लाभकारी, कम आदानों की आवश्यकता वाली, मिट्टी की उर्वरता को बनाए रखने वाली फसलों के बदले उगाया जाता है। चावल-गेहूं की फसल प्रणाली सबसे अधिक प्रभावी फसल प्रणाली है और कुल खाद्यान्न उत्पादन में लगभग 42 प्रतिशत योगदान देती है। अधिक उपज देने वाले कृषि उपज प्रजाति के उपयोग के बावजूद घटक फसलों की फसल उत्पादकता में वृद्धि या तो स्थिर (गेहूं) या गिरती हुई (चावल) है। इस प्रकार, चावल की बजाय जिसे अधिक जल की आवश्यकता होती है, मक्का या नकदी फसलों जैसे गन्ने और कपास को उगाया जाए जिससे न केवल जल की आवश्यकता कम होगी बल्कि यह कृषि प्रणाली की उत्पादकता को भी बढ़ाएगा जिससे किसानों की आय में वृद्धि होगी।

ii) एकीकृत कृषि प्रणाली (आईएफएस): आईएफएस कार्यप्रणालियों के संसाधन बचत पैकेज की व्यापक रेंज को अपनाना और उनका एकीकरण है, जो मुनाफे/आय के स्वीकार्य स्तरों को सुनिश्चित करता है तथा पूरी प्रणाली को आर्थिक रूप से टिकाऊ एवं पारिस्थितिकी रूप से नवीकरणीय व सामाजिक रूप से स्वीकार्य बनाता है। इसके अलावा, यह सघन खेती के नकारात्मक प्रभावों को कम करता है और संरक्षण के साथ-साथ पर्यावरण में सुधार लाता है। आईएफएस पद्धति में सामान्य रूप से फसल प्रणालियों के विविधीकरण और समग्र रूप से कृषि प्रणालियों पर ज़ोर दिया जाता है और इसे छोटे खेतिहर परिवारों की आर्थिक स्थिति में सुधार लाने के लिए सफल पाया गया है। पैदावार के अंतराल को कम करने के लिए सबसे उपयुक्त किफायती टेक्नोलॉजी के प्रयोग और खेतों के समग्र विकास के लिए कम लागत आवश्यकता वाले उद्यमों के एकीकरण के माध्यम से तथा आजीविका और पोषण संबंधी सुरक्षा सुनिश्चित करके यह संभव हो सकता है। 0.4 से 1.5 हेक्टेयर तक छोटे भूमि जोत पर लागू होने वाली यह पद्धति घरेलू खाद्यान्न, चारा, परिवार की ईंधन आवश्यकताओं को पूरा करने और उत्पादन लागत में कमी, लाभ में वृद्धि, पोषण सुरक्षा, अधिक रोज़गार के अवसर, नियमित आय और पर्यावरण सुरक्षा सहित अन्य लक्ष्यों को प्राप्त करने में सफल रही है। बागवानी फ़सलें मुख्य रूप से फल-सब्जियां और डेयरी तथा बकरी पालन उन आशाजनक उद्यमों में से हैं जो मौजूदा कृषि प्रणालियों के साथ सम्मिलित होकर आय को कई गुना बढ़ाते हैं।

iii) संरक्षण कृषि (सीए): सीए फसल की पैदावार, अर्थव्यवस्था और पर्यावरणीय लाभों के अनुकूलन के लिए एक अवधारणा है। सीए की मुख्य विशेषताएं तीन मूल सिद्धांत हैं: 1) मिट्टी को कम से कम छेड़ा जाना 2) मिट्टी की सतह पर फसल के अवशेषों को छोड़ देना और प्रबंधित करके मिट्टी को अधिकतम ढांपना 3) फसल विविधीकरण। सीए के मुख्य लाभ उत्पादन की लागत में कमी, खरपतवारों के प्रकोप में कमी, जल और पोषक तत्वों की बचत, पैदावार में वृद्धि, पर्यावरण लाभ, फसल विविधीकरण के अवसर, संसाधन उपयोग दक्षता में सुधार आदि हैं।

iv) जैविक खेती: भारत में जैविक खेती को पुनः विकसित किया गया है और दिनोंदिन इसकी लोकप्रियता बढ़ती जा रही है। किसान, उद्यमी, शोधकर्ता, प्रशासक, नीति निर्माता और उपभोक्ता भी देश में जैविक खेती के प्रचार और विकास में अधिक रुचि दिखा रहे हैं। जैविक खाद्य उत्पादों को पारंपरिक खेती द्वारा उत्पादित उत्पादों की तुलना में अधिक सुरक्षित और पौष्टिक माना जाता है। जैविक खेती मृदा स्वास्थ्य को बहाल करने, पर्यावरण की रक्षा करने, जैव विविधता को बढ़ाने, फसल उत्पादकता को बनाए रखने और किसानों की आय बढ़ाने में भी मदद करती है। जैविक उत्पाद अधिक मूल्य पर बेचे जा रहे हैं जो किसानों की आय बढ़ाते हैं। जैविक खेती के दीर्घकालिक लाभों को देखते हुए भारत सरकार ने देश में इसको बढ़ावा देने के लिए कई महत्वपूर्ण कदम उठाए हैं। सभी प्रकार के हितधारकों और सरकार के समर्थन से भारत में जैविक खेती के चलन का दायरा व्यापक रूप से बढ़ा है।

उपर्युक्त चर्चा के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि उन्नत और नूतन कार्य प्रणालियां स्मार्ट कृषि पद्धतियों, उत्पादकता में वृद्धि, संसाधन उपयोग दक्षता और किसानों और पर्यावरण सुरक्षा के लिए हितकारी हैं।

(डॉ. वाई. एस. शिवे डिवीजन ऑफ एग्रोनॉमी, आईसीएआर-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली में प्रधान वैज्ञानिक और डॉ. टीकम सिंह वरिष्ठ वैज्ञानिक हैं।)

ई-मेल: ysshivay@hotmail.com
tiku-agron@yahoo.co.in

बहुउद्देशीय भारतीय कृषि प्रसार प्रणाली

–डॉ. श्याम रंजन कुमार सिंह एवं डॉ. अनुपम मिश्रा

स्थान विशिष्ट एवं किसानों की आवश्यकता के अनुसार कृषि तकनीकों को किसान तक पहुंचाने के लिए मजबूत अनुसंधान प्रसार-किसान लिंकेज की आवश्यकता है। कृषि विज्ञान केंद्र इसमें महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। कृषि विज्ञान केंद्र नवाचार विज्ञान पर आधारित संस्थान हैं जिनके द्वारा मुख्यतः किसानों एवं क्षेत्र-स्तरीय प्रसार कार्यकर्ताओं को व्यावसायिक कौशल प्रशिक्षण दिया जाता है। कृषि विज्ञान केंद्र मुख्यतः "करके सीखना" और "देखकर विश्वास करना" जैसे सिद्धांतों पर कार्य करते हैं। वर्तमान भारत सरकार ने किसानों के हित में नई-नई योजनाओं की शुरुआत की है; कृषि विज्ञान केंद्र इन योजनाओं को किसानों तक पहुंचाने में पुल का काम करते हैं और कृषकों की आमदनी बढ़ाने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं।

भारत की अर्थव्यवस्था कृषि पर निर्भर करती है। यहां की लगभग दो तिहाई आबादी का भरण-पोषण कृषि के द्वारा होता है। आज हम खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भर हैं एवं आवश्यकतानुसार कृषि उत्पादन में सक्षम हैं। यह सब कुछ हरितक्रांति की देन है, पर इस सफलता में राष्ट्रीय कृषि शोध व प्रसार प्रणाली का बहुत बड़ा योगदान है। भारत की स्वतंत्रता के समय से ही भारतीय कृषि शोध व प्रसार प्रणाली में महत्वपूर्ण विकास देखा गया है।

प्रसार प्रणाली

प्रसार प्रणाली दो तरह से कार्य करती हैं- क्षेत्र प्रसार प्रणाली एवं अग्रिम पंक्ति प्रसार प्रणाली। क्षेत्र प्रसार प्रणाली मुख्यतः विकास विभाग तथा एजेंसियों के द्वारा क्रियान्वित की जाती है जिसमें वृहद्-स्तर पर कृषि तकनीकी का प्रसार बड़ी संख्या में भारतीय किसानों तक किया जाता है। जबकि अग्रिम पंक्ति प्रसार प्रणाली का क्रियान्वयन भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् व राज्य-स्तरीय कृषि विश्वविद्यालयों के द्वारा किया जाता है, जिनका मुख्य केंद्र तकनीकों का प्रदर्शन व उनका अनुकूलन तथा संबंधित हितधारकों की क्षमता का निर्माण करना है।

भारत में प्रसार कार्य मुख्यतः पांच विभागों जैसे कि कृषि एवं सहकारिता विभाग व इससे संबंधित ग्रामीण विकास मंत्रालय, कृषि विज्ञान केंद्र, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् व राज्य कृषि विश्वविद्यालयों के द्वारा अग्रिम पंक्ति प्रसार, कमोडिटी बोर्ड व इनपुट एजेंसियां और गैर-सरकारी संगठन के द्वारा प्रदान की गई प्रसार सेवाएं सम्मिलित हैं।

हरितक्रांति के पहले प्रसार पद्धति

भारत की स्वतंत्रता के बाद विभिन्न परियोजनाओं की शुरुआत हुई, जिसका उद्देश्य कृषि उत्पादन को बढ़ाना तथा साथ ही ग्रामीण विकास को बढ़ावा देना था। हालांकि भारत में ब्रिटिश शासन/स्वतंत्रता के पहले सामाजिक कार्यकर्ताओं द्वारा कुछ ग्रामीण विकास परियोजनाओं की शुरुआत की गई थी। प्रसार कार्यक्रमों का विकास दो स्तरों पर हुआ है-

स्वतंत्रता के पहले (1866-1947)

स्वतंत्रता के पूर्व व्यक्तिगत रूप से व प्राइवेट एजेंसियों के द्वारा ग्रामीण विकास के कई प्रयास किए गए जैसे कि

कृषि विज्ञान केंद्र, नदिया, पश्चिम बंगाल

हरियाणा में गुरुगांव प्रोजेक्ट की शुरुआत एफ.एल. ब्रेयने ने ग्रामीणों के उत्थान के लिए की। श्रीनिकेतन प्रोजेक्ट पश्चिम बंगाल में श्री रविन्द्रनाथ टैगोर के द्वारा शुरू किया गया, जिसमें गांव का विकास समाजशास्त्री श्री एल.एम. हर्स्ट की मदद से हुआ। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने वर्धा में 1920 में सेवाग्राम प्रोजेक्ट की शुरुआत की जिसे गांधीवादी विचारधारा पर आधारित कार्यक्रम कहा जाता है। इसका मुख्य उद्देश्य प्रत्येक व्यक्ति को आर्थिक और सामाजिक दमन से बचाना तथा उनमें देशप्रेम की भावना जागृत करना था। सर्वेंट सोसाइटी ऑफ इंडिया, मारथण्डम प्रोजेक्ट, सर्वोदय प्रोग्राम आदि कुछ अन्य उल्लेखनीय कार्यक्रम हैं।

जून 1871 में भारत सरकार ने कृषि विभाग की स्थापना की और 1882 में कृषि विभाग लगभग सभी क्षेत्रों में ढांचागत रूप से कार्य करने लगा। भारत सरकार के द्वारा सन् 1905 में उत्पादन की नई पद्धतियों के विकास हेतु इंपीरियल कृषि अनुसंधान संस्थान की स्थापना बिहार में की गई जोकि वर्ष 1936 में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली में तबदील कर दिया गया। हालांकि कृषि राज्य संबंधित विषय है परंतु कृषि में नवीन तकनीकों का समावेश कर कृषि उत्पादन को बढ़ाने में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् का महत्वपूर्ण योगदान है। इसकी स्थापना 16 जुलाई, 1929 में इंपीरियल कृषि अनुसंधान परिषद् के रूप में हुई थी। यह पूरे देश में कृषि के साथ-साथ बागवानी, मत्स्य पालन और पशु विज्ञान में अनुसंधान और शिक्षा का समन्वय, मार्गदर्शन और प्रबंधन करने वाला सर्वोच्च निकाय है। वर्ष 1942 में अधिक खाद्य उत्पादन अभियान की शुरुआत राष्ट्रीय-स्तर पर की गई। वर्ष 1946 में फिरका विकास योजना की शुरुआत मद्रास सरकार के द्वारा 34 फिरका में की गई। यह उस समय की सबसे बड़ी योजना थी।

स्वतंत्रता के पश्चात् (1947-1966)

स्वतंत्रता के पश्चात् सघन सर्वांगीण विकास के लिए प्रायोगिक परियोजना के तौर पर इटावा परियोजना की शुरुआत अल्वर्ट मेयर के द्वारा की गई। इस परियोजना ने सामुदायिक विकास परियोजना की नींव रखी तथा इसके द्वारा बहु-उद्देशीय ग्राम-स्तरीय कार्यकर्ता की अवधारणा का विकास हुआ। यह परियोजना स्वयंसहायता, लोकतंत्र, एकीकृत दृष्टिकोण, लोगों की ज़रूरतों व सहयोग जैसे सिद्धांतो पर आधारित थी।

अधिक खाद्यान्न उत्पादन अभियान समिति की अनुशंसा व इटावा परियोजना की सफलता को देखकर फोर्ड फाउंडेशन की सहायता से सामुदायिक विकास परियोजना की वर्ष 1952 में शुरुआत की गई। सामुदायिक परियोजना तीन वर्षों के लिए शुरू की गई थी; इस परियोजना का मुख्य उद्देश्य कृषि उत्पादन के सभी साधनों को बढ़ाना, बेरोज़गारी को कम करना, प्राथमिक शिक्षा, स्वास्थ्य तथा लघु उद्योगों को बढ़ाना था, अर्थात् इस परियोजना के द्वारा ग्रामीणों का सर्वांगीण आर्थिक-सामाजिक रूपांतरण करना था। यह एक परिवर्तनकारी परियोजना थी जिसमें बने हुए ब्लॉक आज भी क्रियाशील हैं।

वर्ष 1960 में सघन कृषि विकास कार्यक्रम की शुरुआत की गई जिसका मुख्य उद्देश्य समन्वित तथा सघन पहुंच के द्वारा कृषि की उन्नत तकनीकों को अपनाकर कृषि उत्पादन में आने वाली समस्याओं का समाधान करना था। यह प्रोग्राम प्रभावकारी था जिसका उद्देश्य कृषि में वैज्ञानिक विधियों के द्वारा ग्रामीण विकास के साथ रोज़गार व उत्पादन की वृद्धि करना था।

हरितक्रांति के पश्चात् प्रसार पद्धति

वर्ष 1966 में अधिक उपज किस्म कार्यक्रम की शुरुआत हुई जिसका उद्देश्य देश में खाद्यान्न में आत्मनिर्भरता प्राप्त करना था। इस कार्यक्रम के अंतर्गत अधिक उपज वाली किस्म के साथ-साथ संतुलित उर्वरक, उचित सिंचाई, फसल सुरक्षा एवं उन्नत यंत्रों के उपयोग की संस्तुति की गई जिसके फलस्वरूप देश में हरितक्रांति संभव हो पाई।

वर्ष 1971 में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् में प्रसार शिक्षा का मुख्यालय बनाया गया जिसे कृषि प्रसार विभाग में परिवर्तित किया गया। इसका उद्देश्य अनुसंधान संस्थानों, कृषि विश्वविद्यालयों और संबंधित संस्थानों में कार्यात्मक संबंध को स्थापित करना था।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् द्वारा चार मुख्य तकनीक हस्तांतरण परियोजनाएं जैसे-राष्ट्रीय प्रदर्शन, ऑपरेशनल रिसर्च परियोजना, कृषि विज्ञान केंद्र और प्रयोगशाला से खेत तक परियोजना की शुरुआत की गई। राष्ट्रीय प्रदर्शन मुख्य खाद्य फसलों पर वर्ष 1964 में राष्ट्रीय-स्तर पर शुरू किया गया जिसकी रूपरेखा एक समान थी तथा इसका उद्देश्य मुख्य फसलों की आनुवांशिक उत्पादन क्षमता को प्रदर्शित करना था।

ऑपरेशनल रिसर्च प्रोजेक्ट वर्ष 1974-75 में शुरू किया गया था। इसमें विभिन्न विषयों जैसे खाद्यान्न फसलों की खेती, मिश्रित खेती, एकीकृत समन्वित कीट प्रबंधन, वृक्षारोपण फसलें, कटाई के बाद तकनीक, भूमि सुधार, शुष्क भूमि प्रबंधन, मत्स्य पालन आदि शामिल हैं। यह परियोजना मुख्यतः जल-संभरण (वाटरशेड) क्षेत्रों में शुरू की गई थी। इसमें नई कृषि तकनीकों का प्रदर्शन किसानों के खेतों पर किया गया जिससे इसका प्रभाव किसानों व राज्य की प्रसार एजेंसियों पर पड़े व इसके द्वारा सामाजिक, आर्थिक, तकनीकी प्रसार और प्रशासनिक बाधाओं का अध्ययन भी किया गया।

कृषि विज्ञान केंद्र व प्रशिक्षकों के प्रशिक्षण केंद्र की स्थापना वर्ष 1974 में हुई थी जिनका मुख्य उद्देश्य किसानों में तकनीकी ज्ञान को बढ़ाना था और यह 'करके सीखना' व 'करके देखना' सिद्धांतों पर आधारित थी।

प्रयोगशाला से खेत कार्यक्रम की शुरुआत भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् की स्वर्ण जयंती के अवसर पर वर्ष 1979 में हुई थी जिसके द्वारा प्रयोगशाला से किसानों के खेतों तक व्यावहारिक तकनीकियों को पहुंचाना था। इनके द्वारा 50,000 कृषि परिवारों का

आर्थिक उत्थान करना था, जिनमें मुख्यतः लघु, सीमांत व भूमिहीन किसान शामिल थे।

वर्ष 1992 में राष्ट्रीय प्रदर्शन, ऑपरेशनल रिसर्च व प्रयोगशाला से खेत परियोजनाओं का सम्मिश्रण कृषि विज्ञान केंद्र में कर दिया गया। शोध प्रणाली में कृषि विज्ञान केंद्र ज़मीनी-स्तर पर कार्य करने वाला केंद्र है जिसके द्वारा किसानों की समस्याओं एवं जगह पर आधारित तकनीकियों का आकलन और परिष्करण किया जाता है।

कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केंद्र की स्थापना भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् द्वारा की गई जो एकल खिड़की प्रणाली की तरह कार्य करता है। इसके द्वारा तकनीकी जानकारी, डायग्नोस्टिक, सलाह और तकनीकी आदानों को किसान समुदाय को दिया जाता है। इनके द्वारा राज्य व क्षेत्रीय-स्तर पर नई तकनीकों को प्रदर्शित करने के लिए किसान मेलों का आयोजन किया जाता है।

लघु कृषि उत्पादन प्रणाली में अधिक उपज के साथ स्थिरता व निरंतरता को प्राप्त करने वाले तकनीकी उपायों का परिचय कराने के लिए इंस्टीट्यूशन विलेज लिंकेज प्रोग्राम की शुरुआत तकनीकी आकलन एवं परिष्करण के तहत वर्ष 1995 में की गई थी। साथ ही, पर्यावरण के मुद्दों से संबंधित, बाज़ार-आधारित, कटाई के बाद प्रबंधन, खेती में कठिन परिश्रम को कम करने तथा महिलाओं की आय को बढ़ाने से संबंधित तकनीकी उपायों को किसानों की आवश्यकता के अनुसार प्रदर्शित करना था।

राष्ट्रीय कृषि अनुसंधान प्रणाली के उत्पादन को बढ़ाने और मौजूदा संसाधनों को मज़बूत करने और उनके पूरक के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली के द्वारा विश्व बैंक की सहायता से राष्ट्रीय कृषि तकनीकी परियोजना की शुरुआत 30 जून, 1998 में हुई। इसके मुख्य उद्देश्य का परिचालन संगठित, प्रबंधन सुधार एवं शोध की रणनीति बनाकर हुआ। इस प्रोजेक्ट में नवाचार और तकनीकी के प्रसार का संचालन भारत सरकार के कृषि एवं सहकारिता विभाग और भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के द्वारा किया गया। यह पहला प्रोजेक्ट था जिसके द्वारा विषय-उन्मुख अनुसंधान को उत्पादन प्रणाली अनुसंधान की ओर केंद्रित किया गया।

गरीबी उन्मूलन और आय सृजन के द्वारा भारतीय कृषि में त्वरित और स्थायी परिवर्तन के लिए वर्ष 2007 में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के द्वारा राष्ट्रीय कृषि नवाचार परियोजना की शुरुआत की गई। इसके द्वारा ग्रामीणों की आजीविका को सुधारने और सामाजिक व आर्थिक स्थिति को बदलने के लिए उपेक्षित क्षेत्रों में नवाचार प्रणाली से विकसित तकनीकों का विस्तार करना था। इसका मुख्य उद्देश्य उत्पादन से उपभोग प्रणाली अनुसंधान को बढ़ाना है जिससे विभिन्न जरुरी क्षेत्रों में उत्पादकता, पोषण, मुनाफा, आय व रोज़गार को बढ़ाया जा सके। साथ ही, तात्कालिक व भविष्य में तकनीकी विकास में आने वाली चुनौतियों का सामना करने की बुनियादी क्षमता का विकास और रणनीतिक अनुसंधान करना था।

कृषि तकनीकी प्रबंधन एजेंसी

कृषि तकनीकी प्रबंधन एजेंसी महत्वपूर्ण हितधारकों की एक सोसायटी है, जिसका उद्देश्य ज़िले में स्थायी कृषि विकास के लिए कृषि गतिविधियां करना है। यह सार्वजनिक कृषि तकनीकी प्रणाली की अनुसंधान और प्रसार गतिविधियों को एकीकृत करने और दिन-प्रतिदिन के विकेंद्रीकरण के लिए एक केंद्रबिंदु है। विश्व बैंक की सहायता से ज़िला-स्तरीय कृषि तकनीकी प्रबंधन एजेंसी की शुरुआत की गई। प्रायोगिक परियोजना के तौर पर सात राज्यों के 28 ज़िलों में वर्ष 1998-2003 के बीच इसकी शुरुआत की गई। वर्ष 2007 में यह सभी ज़िलों में स्थायी तौर पर कार्यशील हो गया। यह ज़िला-स्तर पर तकनीकी प्रसार के लिए ज़िम्मेदार एक पंजीकृत सोसाइटी है। ब्लॉक-स्तरीय तकनीकी टीम और किसान सलाहकार समितियों; किसान समूहों और स्वयंसहायता समूहों के माध्यम से ज़मीनी-स्तर पर विस्तार गतिविधियां की जाती है।

इस एजेंसी का संबंध कृषि संबंधित विभागों, शोध संस्थानों, गैर-सरकारी संगठन और अन्य कृषि संबंधित कार्य करने वाली एजेंसियों से होता है। इसकी प्रबंधन समिति में एक परियोजना निदेशक होते हैं जो अध्यक्ष की तरह कार्य करते हैं तथा इसके सदस्य विभिन्न विभागों के प्रमुख, गैर-सरकारी संगठन व किसान समूह होते हैं। ज़िला मजिस्ट्रेट/कलेक्टर (अध्यक्ष), मुख्य विकास अधिकारी (उपाध्यक्ष), संयुक्त निदेशक कृषि, कृषि विज्ञान केंद्र प्रमुख, एक किसान, एक गैर-सरकारी संगठन का प्रतिनिधि, एक अनुसूचित जाति/जनजाति, ज़िले के मुख्य बैंक का अधिकारी और कृषि विपणन बोर्ड का प्रतिनिधि इसके गवर्निंग बोर्ड के सदस्य होते है।

सामरिक अनुसंधान और विस्तार योजना इस एजेंसी की अद्वितीय विशेषता है जिसमें प्रबंधन समिति सहभागी ग्रामीण मूल्यांकन के द्वारा ज़िले की कार्ययोजना कृषि संबंधित विभाग, कृषि विज्ञान केंद्र, गैर-सरकारी संगठन, किसानों के समूह की सहभागिता से बनाई जाती है। इसके द्वारा कृषि विकास को प्राप्त करने का रास्ता विश्लेषण और लक्ष्य, अवसर व खतरे, ताकत व कमज़ोरियों के आधार पर तय किया जाता है। यह ज़िले की कृषि संबंधित समस्याओं और तकनीकों की आवश्यकताओं का विस्तारपूर्वक बताता है। इसका मुख्य उद्देश्य शोध व प्रसार प्रणाली को जोड़ना है जिससे ज़िलें में कृषि विकास को गति मिले। इसके बाद बाज़ार संचालित विस्तार गतिविधियों के द्वारा इस योजना का क्रियान्वयन किया जाता है। इन सभी के अलावा अन्य विस्तार गतिविधियां जैसे प्रशिक्षण भी शामिल हैं जिसमें ज़िला-स्तर पर किसान प्रशिक्षण केंद्र, राज्य-स्तर पर राज्य कृषि प्रबंधन और विस्तार प्रशिक्षण संस्थान, क्षेत्रीय-स्तर पर विस्तार शिक्षा संस्थान और राष्ट्रीय-स्तर पर राष्ट्रीय कृषि प्रसार प्रबंधन संस्थान, हैदराबाद शामिल हैं। राष्ट्रीय कृषि प्रसार प्रबंधन संस्थान की इस परियोजना के कार्यान्वयन में महत्वपूर्ण भूमिका है। इस संस्थान द्वारा इस एजेंसी के निदेशक व अन्य ज़िला-स्तरीय व

विकासखंड-स्तर पर कार्य करने वाले कर्मचारियों को प्रशिक्षण दिया जाता हैं।

अनुसंधान-प्रसार-किसान लिंकेज

स्थान विशिष्ट एवं किसानों की आवश्यकता के अनुसार कृषि तकनीकों को किसान तक पहुंचाने के लिए मज़बूत अनुसंधान प्रसार-किसान लिंकेज की आवश्यकता हैं जिसमें तीनों मिलकर समस्या को पहचान कर उसका निदान करें एवं इसमें इनकी भागीदारी की ज़्यादा ज़रूरत होती है। इसी तारतम्य में अनुसंधान व प्रसार के लिंकेज को राष्ट्रीय, क्षेत्रीय, राज्य व ज़ोनल-स्तर पर संस्थागत करने का प्रयास किया गया। राष्ट्रीय-स्तर पर भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् का कृषि एवं सहकारिता विभाग से लिंकेज है जिसमें अनुसंधान व विकास जैसे मुद्दों पर चर्चा की जाती है। क्षेत्रीय-स्तर पर आठ क्षेत्रीय समितियां बनाई गई हैं जो भा.कृ.अनु.प. से संबंधित संस्थानों व कृषि विश्वविद्यालयों के अनुसंधान व विकास कार्यों की समीक्षा करते हैं। तकनीक का विकास एवं उसका विस्तार दोनों आपस में जुड़े हुए होने चाहिए, जिससे किसानों की समस्याओं के आधार पर किसानों को तकनीकी समाधान प्राप्त हो सके।

कृषि विज्ञान केंद्र

डॉ. मोहन सिंह मेहता समिति की अनुशंसा के आधार पर वर्ष 1974 में कृषि विज्ञान केंद्र की स्थापना की गई। पहला कृषि विज्ञान केंद्र पुडुचेरी में खोला गया। कृषि विज्ञान केंद्र नवाचार विज्ञान पर आधारित संस्थान है जिसके द्वारा मुख्यतः किसानों एवं क्षेत्र-स्तरीय प्रसार कार्यकर्ताओं को व्यावसायिक कौशल प्रशिक्षण दिया जाता है। कृषि में व्यावसायिक प्रशिक्षण की अवधारणा इसलिए आई क्योंकि किसान कृषि की नई तकनीकों के बारे में जानना चाहते थे जिसे कृषि विज्ञान केंद्र के माध्यम से पूरा किया गया। कृषि विज्ञान केंद्र मुख्यतः "करके सीखना" और "देखकर विश्वास करना" जैसे सिद्धांतों पर कार्य करता है। वर्तमान में इन केंद्रों के द्वारा कृषि एवं अन्य संबंधित विषयों में स्थान आधारित विशिष्ट तकनीकों का मूल्यांकन, परिशोधन एवं प्रदर्शन किया जा रहा है।

कृषि विज्ञान केंद्र की अधिकृत गतिविधियां

1. विभिन्न कृषि प्रणालियों से संबंधित स्थान विशिष्ट कृषि तकनीकों का प्रक्षेत्र परीक्षण करना।
2. किसान के खेतों पर तकनीकों की उत्पादन क्षमता को बढ़ाने के लिए अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन किया जाता है।
3. आधुनिक कृषि तकनीकों से संबंधित ज्ञान एवं कौशल को बढ़ाने के लिए किसानों एवं प्रसार अधिकारियों को क्षमता विकास का प्रशिक्षण देना।
4. ज़िले की कृषि अर्थव्यवस्था को बढ़ाने के लिए कृषि तकनीकों के ज्ञान एवं संसाधन के स्रोत की तरह कार्य करता है।
5. किसानों की ज़रूरत के अनुसार संबंधित विषयों पर कृषि संबंधी सलाह सूचना और संचार प्रौद्योगिकी व अन्य मीडिया साधनों से दी जाती है।

इसके साथ कृषि विज्ञान केंद्र बीज, रोपण सामग्री, जैव एजेंट, पशु तथा पक्षियों की विविध प्रजातियां भी तैयार कर किसानों को उपलब्ध कराते हैं। इन केंद्रों में अग्रिम पंक्ति प्रसार गतिविधियां, कृषि नवाचार की पहचान और प्रलेखन किया जाता है व कृषि विज्ञान केंद्र की अधिकृत गतिविधियों के अनुसार चल रहे कार्यक्रमों के साथ अभिसरण करता है। कृषि विज्ञान केंद्र राष्ट्रीय कृषि अनुसंधान प्रणाली का अंतर्निहित भाग है जिसका लक्ष्य तकनीकी मूल्यांकन व प्रदर्शन के द्वारा कृषि व अन्य संबंधित उद्यमों की स्थान विशिष्ट तकनीकों का विकास एवं बढ़ावा देना है। वर्तमान में जुलाई 2020 तक 721 कृषि विज्ञान केंद्रों की स्थापना की जा चुकी है। ये कृषि विज्ञान केंद्र राज्य-स्तरीय कृषि विश्वविद्यालय, केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के संस्थान, गैर-सरकारी संगठन, राज्य सरकार, केंद्रीय विश्वविद्यालय, डीम्ड विश्वविद्यालय, सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम व अन्य शैक्षणिक संस्थानों के अंतर्गत स्थापित किए गए हैं।

वर्तमान में सभी कृषि विज्ञान केंद्र 3.5 लाख सार्वजनिक सेवा केंद्रों से जोड़े गए हैं जिससे किसानों को तकनीकी समाधान प्राप्त हो सकें। कृषि विज्ञान केंद्रों के द्वारा कृषि सलाह, कृषि मोबाइल सलाह, सोशल मीडिया जैसे व्हाट्स एप, फेसबुक एवं ट्विटर आदि के द्वारा भी दी जाती है जिससे किसानों को समय पर कृषि तकनीकों की जानकारी व उनकी समस्या का समाधान प्राप्त हो जाता है। वर्ष 2019-20 में 10.5 करोड़ किसान व अन्य ग्राहकों को कृषक मोबाइल सलाह प्राप्त हुई। उपरोक्त वर्णित आंकड़े वेबसाइट https://icar.org.in पर उपलब्ध हैं।

अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन

अस्सी के दशक के मध्य में अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन की अवधारणा भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के द्वारा तिलहन फसलों के तकनीकी मिशन के आरंभ में दी गई। राष्ट्रीय कृषि अनुसंधान प्रणाली के वैज्ञानिकों की निगरानी में क्षेत्र प्रदर्शन का संचालन किया जाता है जिसे अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन कहा जाता है। इसमें वैज्ञानिकों के द्वारा पहली बार तकनीक का प्रदर्शन किया जाता है जिसके बाद इसका विस्तार राज्य के कृषि विभाग के द्वारा किया जाता है। इसका मुख्य उद्देश्य कृषि की अवस्था व कृषि जलवायु क्षेत्रों के आधार पर ज़ारी की गई नई फसल उत्पादन व सुरक्षा तकनीकों का प्रदर्शन व प्रबंधन किसान के खेत पर करना है। यह वैज्ञानिक व किसानों के बीच सीधे संपर्क बनाती हैं क्योंकि प्रदर्शन की योजना, संचालन और निगरानी में वे सीधे तौर पर शामिल होते हैं व किसानों से सीधे ही प्रतिपुष्टि की प्राप्ति हो जाती है। इस तरह अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन से अनुसंधानकर्ता व प्रसार अधिकारियों को किसानों के स्रोतों व ज़रूरतों को समझने का अवसर प्राप्त हो जाता है तथा उनकी परिस्थितियों के अनुसार वे तकनीकों का रूपांतरण आसानी से कर पाते हैं जिससे किसानों के द्वारा अपने खेतों पर उनका अनुकूलन किया जा सके।

कृषि विज्ञान केंद्र द्वारा उन्नत तकनीकों का प्रदर्शन एवं प्रसार विधियां

(अ) किसानों की आय दोगुनी करने वाली उन्नत तकनीकें एवं प्रसार

हमारे प्रधानमंत्री का सपना है कि वर्ष 2022 तक किसानों की आय दोगुनी हो जाए। इस दिशा में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् व कृषि विज्ञान केंद्रों द्वारा निरंतर प्रयास किए जा रहे हैं। किसानों की आय दोगुनी करने में विभिन्न कृषि तकनीकों का समावेश ज़रूरी है क्योंकि सिर्फ उत्पादन बढ़ाकर किसानों की आय दोगुनी करने का लक्ष्य प्राप्त नही किया जा सकता है। इसके लिए यह भी आवश्यक है कि उत्पादन बढ़ने के साथ-साथ आदानों की लागत में आने वाले खर्च की कटौती हो। इन तथ्यों को ध्यान में रखते हुए ऐसी तकनीकों/प्रणाली की आवश्यकता होती है जिसमें एक प्रणाली का उत्पाद दूसरे प्रणाली के लिए आदान का कार्य करे व वे एक-दूसरे के पूरक हो।

एकीकृत या समन्वित कृषि प्रणाली किसानों की आय दोगुनी करने में सक्षम है। यह कृषि प्रणाली एक-दूसरे पर आश्रित, परस्पर संबंधित व एक-दूसरे से जुड़ी उत्पादन प्रणाली है, जो कुछ फसलों, पशुपालन और संबंधित सहायक उद्यमों पर आधारित होती है, जो प्रत्येक प्रणाली के पोषक तत्वों के उपयोग को अधिकतम करती है और पर्यावरण में इन उद्यमों के नकारात्मक प्रभाव को कम करती है। एकीकृत या समन्वित कृषि प्रणाली के घटक किसानों की अवस्था और उसके पास उपलब्ध संसाधनों के अनुरूप होने चाहिए, जिससे पर्यावरण को बिना नुकसान पहुंचाए अधिक से अधिक लाभ अर्जित किया जा सके जैसे भूमिहीन किसानों के लिए कृषि के अलग घटक हों। जिन किसानों के पास पानी को संग्रहित करने की क्षमता हो, वहां पर तालाब-आधारित एकीकृत कृषि प्रणाली के विभिन्न मॉडल किसानों की अवस्था व उपलब्ध संसाधनों के आधार पर तैयार किए गए हैं। उदाहरण के तौर पर निम्नलिखित मॉडल प्रस्तुत हैं-

1) **भूमिहीन किसानों के लिए**:- मधुमक्खी पालन, मशरूम उत्पादन, बकरी पालन, बैकयार्ड मुर्गीपालन

2) **लघु व सीमांत किसानों के लिए** (वर्षा-आधारित स्थिति) (2-4 एकड़) :- धान-गेहूं + सब्जी उत्पादन + चारा उत्पादन + दुग्ध उत्पादन + बकरीपालन/मुर्गीपालन + नाडेप/वर्मी कम्पोस्ट इकाई + खेतों की मेड़ों पर फल व फूलों की खेती

3) **सिंचित अवस्था में लघु व सीमांत किसानों के लिए मॉडल** (2-4 एकड़)

फसल उत्पादन + सब्जी उत्पादन + एजोला उत्पादन + मुर्गीपालन + मछलीपालन

फसल उत्पादन + सब्जी उत्पादन + बकरीपालन + मुर्गीपालन + मछलीपालन + वर्मी कम्पोस्ट + एजोला उत्पादन + खेतों की मेड़ों पर फल व फूलों का उत्पादन

4) **बड़े किसानों के मॉडल** (4 एकड़ से अधिक भूमि)

सघन फसल उत्पादन + सब्जी उत्पादन + दुग्ध उत्पादन + बैकयार्ड मुर्गीपालन (कड़कनाथ मुर्गी पालन)

सघन फसल उत्पादन + दुग्ध उत्पादन + मधुमक्खी पालन + मशरूम उत्पादन

5) **तालाब आधारित कृषि प्रणाली**

मछलीपालन + बत्तख पालन, मछलीपालन + मुर्गीपालन, मछलीपालन + फसल उत्पादन, मछलीपालन + दुग्ध उत्पादन + फसल उत्पादन

(ब) जलवायु अनुकूल कृषि तकनीकें एवं प्रसार

जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् द्वारा नई तकनीकों का प्रदर्शन कृषि विज्ञान केंद्रों के द्वारा किया जा रहा है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के द्वारा फरवरी 2011 में राष्ट्रीय जलवायु अनुकूल कृषि पहल की शुरुआत एक नेटवर्क परियोजना के रूप में हुई। इसका मुख्य उद्देश्य भारतीय कृषि को जलवायु परिवर्तन के अनुकूल बनाना तथा रणनीतिक अनुसंधान एवं तकनीकी प्रदर्शन के द्वारा जलवायु भेद्यता के प्रभाव को कम करना है। इसके लिए **'जलवायु स्मार्ट ग्राम'** तैयार किए गए हैं जिसमें उचित फसल, किस्मों, प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन, कृषि यंत्रीकरण एवं कस्टम हायरिंग केंद्रों पर ध्यान केंद्रित किया गया तथा संबंधित किसानों को सूखा, बाढ़, पाला, मृदा से संबंधित समस्याओं और भूमिगत जल में कमी जैसी समस्याओं से भी अवगत कराया गया। इन कृषि विज्ञान केंद्रों के माध्यम से जलवायु स्मार्ट गांवों को विकसित किया गया जो मौसम, कार्बन, जल, पोषण एवं ज्ञान से स्मार्ट हैं। निक्रा परियोजना के अंतर्गत कस्टम हायरिंग केंद्रों की भी स्थापना की गई है। ये केंद्र छोटे एवं सीमांत किसानों के लिए काफी प्रभावशाली साबित हुए क्योंकि इनके द्वारा लघु एवं सीमांत किसान उन्नत मशीन व यंत्रों को किराए पर लेकर अपने कृषि कार्य को सरलता से पूर्ण कर लेते हैं और समय पर ये यंत्र व मशीन उपलब्ध हो जाते है।

प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण व जलवायु परिवर्तन के प्रभाव को कम करने के लिए शुन्य जुताई (ज़ीरो टीलेज) के द्वारा खाद्यान्न एवं दलहन फसलों की बुवाई की जा रही है, जिससे न केवल नमी संरक्षण होता है बल्कि मृदा की उर्वरता भी बनी रहती है। गेहूं की शुन्य जुताई पद्धति से बुवाई करने पर धान की देरी से कटाई करने के बावजूद भी गेहूं की बुवाई समय पर हो जाती है और बाली के बनने के समय अधिक तापमान से भी बचाव हो जाता है। धान की सीधी बुवाई उन क्षेत्रों में लाभदायी है जहां पर वर्षा कम तथा अनियमित होती है।

मेड़ व नाली पद्धति से फसलों की बुवाई का उपयोग करके कम वर्षा के समय में इनके द्वारा नमी का संरक्षण भी हो जाता है तथा अधिक वर्षा के समय नाली के द्वारा अधिक वर्षा जल का निकाय हो जाता है तथा इस विधि से बुवाई करने पर फसलों की अधिक उत्पादकता भी प्राप्त हो जाती है। मध्य प्रदेश में मेड़ एवं नाली पद्धति के द्वारा सोयाबीन की बुवाई 32 लाख हेक्टेयर में की

जाती है। इस पद्धति से बुवाई करने पर 25-30 प्रतिशत सिंचाई जल की बचत हो जाती है।

वर्षा-अश्रित खेती के लिए जल प्रबंधन तकनीकें एवं प्रसार

वर्षा-अश्रित कृषि में जल की कमी के कुप्रभावों से फसलों के बचाव हेतु कुछ तकनीके संस्तुत की गई हैं जैसे खेतों में नमी संरक्षण करना (शून्य जुताई, मेड़ व नाली पद्धति, लेज़र विधि द्वारा भूमि समतलन आदि), वर्षा जल एकत्रित करके पुर्नपयोग करना, भूजल का पुनर्भरण आदि के माध्यम से प्रभावी रूप से जल प्रबंधन किया जा सकता है। वर्षा जल के एकत्रण से भूमिगत जल का स्तर भी बढ़ता है तथा वर्षा न होने की स्थिति में इस जल का उपयोग सिंचाई के लिए किया जाता है। इससे मृदा का भी संरक्षण हो जाता है।

पोषण संवेदनशील कृषि एवं प्रसार

पोषण संवेदनशील कृषि एक खाद्य आधारित दृष्टिकोण है जो कुपोषण और सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी को दूर करने के लिए पोषण से भरपूर खाद्य पदार्थ, आहार विविधता और फोर्टिफाइड खाद्य पर केंद्रित है। पोषण स्मार्ट गांवों का विकास कृषि विज्ञान केंद्रों के द्वारा किया जा रहा है जिससे कुपोषण को दूर किया जा सके। पोषण स्मार्ट गांव लघु प्रयोगशाला है जिसके द्वारा उपलब्ध साधनों के द्वारा पोषण सुरक्षा, पोषण साक्षरता के साथ-साथ सर्वप्रथम किसानों में पोषण के प्रति प्रेरणा और व्यवहार परिवर्तन किया जाता है। पोषण स्मार्ट गांव "वो उगाएं जो खाएं और वो खाएं जो उगाएं" अवधारणा पर आधारित है। सर्वप्रथम इसकी शुरुआत कृषि तकनीकी अनुप्रयोग अनुसंधान संस्थान, जबलपुर, मध्य प्रदेश के द्वारा की गई, जिनको अब पूरे देश में बढ़ावा दिया जा रहा है।

इस पद्धति द्वारा पोषक तत्वों की कमी को दूर करने के लिए पारंपरिक व्यंजनों से भरपूर पोषण थाली को बनाया गया है। पोषण सुरक्षा के लिए पोषण वाटिका/गृह वाटिका, छत पर बागवानी, सात दिन सात क्यारी और बायो-फोर्टिफाइड फसलों पर प्रदर्शन कि जा रहे हैं। कृषि विज्ञान केंद्रों के द्वारा पोषण सुरक्षा को बढ़ाने के लिए पोषण संवेदनशील कृषि एवं खाद्य सुरक्षा, मूल्य संवर्धन श्रृंखला और गांव के व्यापारिक मुद्दों को सुलझाने के प्रयत्न, माताओं और बच्चों में पोषण के स्तर को बढ़ाने, पोषण साक्षरता और महिला संस्थानों/स्वयंसहायता समूहों/किसान समूहों/किसान उत्पादक समूहों का प्रशिक्षण जैसे कार्य किए जा रहे हैं।

कड़कनाथ मुर्गीपालन तकनीक एवं प्रसार

कड़कनाथ पालन अधिक आय का सृजन करने वाली कुक्कुट पालन की तकनीक है। कड़कनाथ एकमात्र भारतीय नस्ल की मुर्गी है, जिसे जी-आई (GI) टैग प्राप्त है जिसका मुख्य आवास मध्यप्रदेश का झाबुआ ज़िला है। इसकी विशेषता यह है कि इसके मांस का रंग काला है तथा यह प्रोटीन (लगभग 25 प्रतिशत) से भरपूर है एवं इसके कई औषधीय गुण भी हैं। यह नस्ल साल भर में औसतन 80-90 अंडे देती है तथा इसके चिकन का बाज़ार में मूल्य भी अधिक प्राप्त होता है। कड़कनाथ मुर्गी नस्ल देश के 20 राज्यों के 117 ज़िलों में फैल चुकी है तथा इसका निर्यात एशियाई देशों में किया जा रहा है।

लघु किसानों की आय सृजित करने वाली तकनीकें एवं प्रसार

कृषि विज्ञान केंद्रों के द्वारा लघु किसानों की अधिक आय के सृजन के लिए बकरी पालन, बैकयार्ड मुर्गीपालन, मशरूम उत्पादन, मधुमक्खी पालन व लाख उत्पादन जैसे लघु उद्यमों पर प्रदर्शन दिया जा रहा है। इन उद्यमों को अपनाने में अधिक आदानों की आवश्यकता नहीं होती है तथा इन्हें खेती के साथ-साथ भी किया जाना चाहिए जिससे अधिक आमदनी प्राप्त हो सके। इन लघु उद्यमों को अपनाकर लघु एवं सीमांत किसान अपनी आजीविका की सुरक्षा भी आसानी से कर सकते हैं।

स्वयंसहायता समूह या किसान उत्पादक संस्था

कृषि विज्ञान केंद्रों की किसानों के समूह बनाकर कार्य करने की ओर प्रेरित करने में महत्वपूर्ण भूमिका है। इनके द्वारा किसानों का समूह बनाकर कृषि गतिविधियां करने व कृषि उत्पादों को बाज़ार तक ले जाने के लिए मार्गदर्शन दिया जाता है, क्योंकि समूह में कार्य करने से लाभ अधिक होता है व उपलब्ध संसाधनों की उपयोग क्षमता भी बढ़ जाती है। इन केंद्रों के द्वारा किसानों को स्वयंसहायता समूह, किसान उत्पादक संगठन (FPO), बीज उत्पादन इकाईयों आदि के द्वारा संगठित व उद्यमी बनाया जा रहा है।

सूचना और संचार प्रौद्योगिकी

कृषि विज्ञान केंद्रों के द्वारा किसानों को समय-समय पर कृषि सलाह कृषि मोबाइल सलाह एवं सोशल मीडिया (व्हाट्स एप, फेसबुक एवं टिवट्र आदि) के माध्यम से प्रदान की जाती है। एम किसान पोर्टल के द्वारा किसान समुदायों को समय व आवश्यकतानुसार मौसम, बाज़ार, कृषि क्रियाओं, कीट व रोग प्रबंधन पर कृषि सलाह दी जाती है। कृषि विज्ञान केंद्र ज्ञान नेटवर्क पोर्टल एक वेबपोर्टल है जिसकी शुरुआत 8 जुलाई, 2016 में कृषि विज्ञान केंद्रों की निगरानी व समय पर किसानों को सूचना व सलाह प्राप्त हो सके, इस उद्देश्य से की गई थी।

नीतिगत सहायता

वर्तमान भारत सरकार ने किसानों के हित में नई-नई योजनाओं की शुरुआत की हैं जैसे प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना, प्रधानमंत्री सिंचाई योजना, प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि, प्रधानमंत्री कृषि अवसंरचना कोष, इत्यादि जिससे कृषक परिवार उचित लाभ के साथ खुशहाल ज़िंदगी जी सकें। कृषि विज्ञान केंद्र इन योजनाओं को किसानों तक पहुंचाने में पुल का काम करते हैं और कृषकों की आमदनी बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

(लेखक क्रमशः भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद-अटारी, जबलपुर, मध्य प्रदेश में प्रधान वैज्ञानिक एवं निदेशक हैं।)

ई-मेल : singhsrk@yahoo.co.in

बागवानी उत्पादों का मूल्यवर्धन

–डॉ. राम रोशन शर्मा

भारत बागवानी उत्पाद में 30 करोड़ टन उत्पादन के साथ चीन के बाद दूसरे पायदान पर है। हमारे देश में विभिन्न बागवानी फसलों के प्रसंस्करण द्वारा ही ज़्यादातर मूल्यवर्धन किया जाता है। हमारे युवा फलों के प्रसंस्करण को उद्यम के रूप में अपनाकर अपने क्षेत्रों में फलों पर आधारित उद्योग लगाकर उन्नति के नए आयाम स्थापित कर सकते हैं। इससे ना केवल किसान को आर्थिक लाभ होगा बल्कि देश की अर्थव्यवस्था को सुधारने में एक अच्छा प्रयास होगा।

हमारा देश विश्व के कुछ ही सौभाग्यशाली देशों में से एक है जहां लगभग हर तरह की जलवायु पाई जाती है। यही कारण है कि हमारे देश में कई प्रकार के फल व सब्जियां उगाई जाती हैं चाहे कुछ ही मात्रा में क्यों न हों। मुख्य बागवानी फसलें बहुत अधिक नाशवान प्रकृति की होती हैं। अधिकतर फलों में 80 से 95 प्रतिशत जल होता है। फलों का गठन मुलायम व श्वसन क्रिया अधिक होने के कारण, इन्हें ढुलाई एवं भंडारण के दौरान बहुत से सूक्ष्मजीव ग्रसित करते हैं जो कई रोगों का कारण बन जाते हैं। ऐसा अनुमान है कि इस उत्पादन का लगभग 30-40 प्रतिशत हिस्सा तुड़ाई के उपरांत कुप्रबंधन के कारण क्षतिग्रस्त हो जाता है।

यदि समय से फलों का प्रसंस्करण कर लिया जाए तो तुड़ाई उपरांत क्षति तो कम होगी ही, साथ ही ग्रामीण क्षेत्रों में रोज़गार के अवसर पैदा होंगे। इसके अतिरिक्त हमारे युवा फलों के प्रसंस्करण को उद्यम के रूप में अपनाकर अपने क्षेत्रों में फलों पर आधारित उद्योग लगाकर उन्नति के नए आयाम स्थापित कर सकते हैं। इससे ना केवल किसान को आर्थिक लाभ होगा बल्कि देश की अर्थव्यवस्था को सुधारने में एक अच्छा प्रयास होगा।

कुशलकर्मियों की कमी, शीत भंडारण की कमी, अपर्याप्त फसलोत्तर प्रबंधन व्यवस्थाएं एवं आधुनिक तकनीकों का न्यूनतम उपयोग आदि के कारण विश्व में द्वितीय सबसे बड़ा फल एवं सब्जी उत्पादक होने के बावजूद विश्व प्रसंस्करण पटल पर भारत की मात्र एक प्रतिशत हिस्सेदारी है। तुड़ाई-उपरांत क्षति को कम करने हेतु शोध संस्थानों द्वारा विभिन्न बागवानी फसलों के प्रसंस्करण एवं मूल्यवर्धन हेतु न्यूनतम प्रसंस्करण, डिब्बाबंदी, निर्जलीकरण, पिकलिंग, अनंतिम संरक्षण, बॉटलिंग आदि तकनीकें मानकीकृत हैं। लेकिन फिर भी हमारे देश के संगठित एवं असंगठित क्षेत्रों में बागवानी फसलों का प्रसंस्करण मात्र 3 प्रतिशत ही है। अन्य देशों जैसे चीन (23 प्रतिशत), संयुक्त राज्य अमेरिका (65 प्रतिशत) एवं फिलीपींस (78 प्रतिशत) में बागवानी फसलों का प्रसंस्करण हमारे देश से काफी अधिक है।

मूल्यवर्धन

किसी भी कच्चे उत्पाद को काटने के बाद एवं बेचने से पहले उसके मूल्य को बढ़ाने के लिए उठाए गए कदम की प्रक्रिया को मूल्यवर्धन कहते हैं। किसी भी उत्पाद एवं वस्तु में उसके मूल्य एवं उसके आकर्षण को बढ़ाने के लिए उस वस्तु/पदार्थ में प्रसंस्करण या विविधीकरण द्वारा परिवर्तन लाने को भी मूल्यवर्धन कहते हैं। इस कार्य के लिए अधिक मेहनत, समय एवं निपुणता की आवश्यकता होती है। मूल्यवर्धित उत्पाद बनाने से किसी भी किसान की आय भी बढ़ जाती है तथा उसे बाज़ार में अपने उत्पाद को बढ़ावा देने के नए-नए अवसर भी प्राप्त होते हैं।

हमारे देश में विभिन्न बागवानी फसलों के प्रसंस्करण द्वारा ही ज़्यादातर मूल्यवर्धन किया जाता है। प्रसंस्करण की कई विधियां जैसे गूदे के विभिन्न उत्पाद तैयार करना, जैम, जैली, अचार, सूखे उत्पाद, चूर्ण आदि तैयार करके फलों व सब्जियों से कई प्रकार के प्रसंस्कृत उत्पाद तैयार किए जा सकते हैं।

मूल्यवर्धन क्यों

- मूल्यवर्धित उत्पादों में अधिक उपज का उपयोग हो जाता है तथा उपज की बर्बादी बच जाती है।

- मूल्यवर्धित उत्पाद लाभ में वृद्धि करते हैं तथा कृषि आय को स्थिर करते हैं।
- मूल्यवर्धित उत्पाद सृजनात्मक क्रियाओं को बढ़ावा देते हैं।

प्रसंस्करण एवं मूल्यवर्धन के लाभ

- तुड़ाई उपरांत क्षति में कमी।
- मूल्यवर्धित उत्पादों में अधिक उपज का उपयोग हो जाता है तथा उपज की बर्बादी बच जाती है।
- उत्पाद की पौष्टिकता एवं गुणवत्ता में वृद्धि।
- बेमौसमी फल या सब्जी का स्वाद मिलना।
- रोज़गार के अवसर उपलब्ध होना।
- मूल्यवर्धित उत्पाद लाभ में वृद्धि करते हैं तथा कृषि आय को स्थिर करते हैं।
- आमदनी में वृद्धि।

तेज़ी से बढ़ता निर्यात

खाद्य प्रसंस्करण उद्योग देश के कुल खाद्य बाज़ार का लगभग 32 प्रतिशत हिस्सा है और उत्पादन, खपत, निर्यात और अपेक्षित वृद्धि के मामले में पांचवे स्थान पर है। पिछले दशक में भारतीय खाद्य प्रसंस्करण उद्योग में 11 प्रतिशत की वृद्धि हुई है और इस वर्ष 2020 तक यह व्यापार 480 अरब डॉलर तक पहुंचने की उम्मीद है। यह उद्योग देश के विनिर्माण जीडीपी में 14 प्रतिशत, निर्यात में 13 प्रतिशत और कुल औद्योगिक निवेश में 6 प्रतिशत योगदान देता है।

उत्पादन, वृद्धि, खपत एवं निर्यात के हिसाब से खाद्य प्रसंस्करण उद्योग भारत में प्रमुख सेक्टरों में एक है। इस उद्योग में नाना प्रकार के उत्पाद आते हैं परंतु बागवानी उत्पादों की अधिकता रहती है। वर्ष 2018-19 में भारत से कुल 31111.90 करोड़ रुपये के प्रसंस्कृत उत्पादों का निर्यात हुआ। इसमें सबसे अधिक हिस्सेदारी आम के गूदे (₹ 657.67 करोड़) की थी। इसके अतिरिक्त, प्रसंस्कृत सब्जियों (₹ 2473.99 करोड़), प्रसंस्कृत फलों, जूस एवं नट्स (₹ 2804.97 करोड़) की भी काफी हिस्सेदारी थी। खाद्य प्रसंस्करण उद्योग मुख्यतः यूरोप, खाड़ी देशों, जापान, सिंगापुर, थाइलैंड, मलेशिया एवं कोरिया आदि देशों को निर्यात करता है।

बागवानी फसलों के प्रसंस्करण-संबंधित अनुसंधान संस्थान

हमारे देश में लगभग 78 कृषि विश्वविद्यालय हैं एवं लगभग प्रत्येक विश्वविद्यालय में बागवानी विभाग है। बागवानी विभाग में वैज्ञानिक बागवानी फसलों के प्रसंस्करण एवं मूल्यवर्धन पर अनुसंधान कार्य करते हैं। देश के 5-6 कृषि विश्वविद्यालयों में तुड़ाई उपरांत प्रौद्योगिकी संभाग है जिसमें फसलोत्तर प्रबंधन एवं प्रसंस्करण पर अनुसंधान कार्य होता है। लगभग 25 कृषि विश्वविद्यालयों में खाद्य विज्ञान विभाग स्थापित किया गया है जो खाद्य प्रसंस्करण पर कार्य करता है। हमारे देश में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के अंर्तगत देश के विभिन्न क्षेत्रों में बागवानी फसलों के उत्पादन एवं प्रसंस्करण पर अनुसंधान संस्थान स्थापित किए गए हैं। ऐसे ही प्रमुख अनुसंधान संस्थान हैं: भारतीय कृषि अनुसंधान

संस्थान, नई दिल्ली; भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान, बैंगलोर, केंद्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला, केंद्रीय शुष्क बागवानी अनुसंधान संस्थान, बीकानेर, केंद्रीय उपोष्ण बागवानी अनुसंधान संस्थान, लखनऊ; केंद्रीय शीतोष्ण बागवानी अनुसंधान संस्थान, श्रीनगर; केंद्रीय बागवानी फसल अनुसंधान संस्थान, कसरगोड़, भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी आदि। इसके अतिरिक्त फल विशेष पर आधारित अनुसंधान केंद्र भी स्थापित किए गए हैं जैसे राष्ट्रीय सिट्रस अनुसंधान केंद्र, नागपुर; राष्ट्रीय द्रक्ष अनुसंधान केंद्र, पुणे; राष्ट्रीय केला अनुसंधान केंद्र, तिरूचिरापोली; राष्ट्रीय लीची अनुसंधान केंद्र, मुजफ्फरपुर (बिहार); राष्ट्रीय खुम्ब अनुसंधान केंद्र, सोलन; राष्ट्रीय अनार अनुसंधान केंद्र, सोलापुर एवं काजू निदेशालय, पुटूर, कर्नाटक आदि।

ये अनुसंधान संस्थान बागवानी फसलों के प्रसंस्करण पर शोध कार्य कर रहे हैं एवं उनके द्वारा कई मूल्यवर्धित उत्पाद विकसित किए गए हैं।

कुछ प्रचलित मूल्यवर्धित उत्पाद

फलों से जैम, जैली एवं मुरब्बे तैयार करना

ये उत्पाद ज़्यादा चीनी द्वारा परिरक्षित किए जाते हैं। इनमें चीनी की मात्रा कम से कम 68 प्रतिशत होती है क्योंकि चीनी के इतने गाढ़ेपन में जीवाणु पैदा नहीं होते हैं तथा नष्ट हो जाते हैं। इनमें सब्जी व फल की वास्तविक सुगंध तथा स्वाद बना रहता है।

आंवला कैंडी

आंवला कैंडी परासरण द्वारा निर्जलीकरण विधि से तैयार की जाती है यह आंवले के मुरब्बे का सूखा व सहज प्रतिरूप है। बाज़ार में मीठी, चटपटी व शहद वाली कैंडी उपलब्ध हैं। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान द्वारा प्राकृतिक लाल रंग की आंवला कैंडी भी विकसित की गई है।

आम पापड़

आम रस को धूप में सुखाकर आम पापड़ भी बनाया जाता है। इसके लिए रस को चटाई पर पतली तह में फैलाया जाता है। सूखने पर दूसरी तह लगा दी जाती है। कभी-कभी रस को पकाकर या अतिरिक्त चीनी मिलाकर गाढ़ा करके भी सुखाया जाता है। अत्यधिक अम्ल वाले आम रस में शर्करा मिलाने से, शर्करा व अम्ल के अनुपात को नियंत्रित किया जा सकता है।

फलों से पेय तैयार करना

ताजा फलों के जूस व गूदे से विभिन्न प्रकार के स्वादिष्ट, पौष्टिक, मनभावक पेय बनाए जा सकते हैं। फलों के जूस से स्क्वैश, नेक्टेर, शरबत इत्यादि बनाए जा सकते हैं। परिरक्षित गूदे/जूस से भी कई प्रकार के पेय तैयार किए जा सकते हैं।

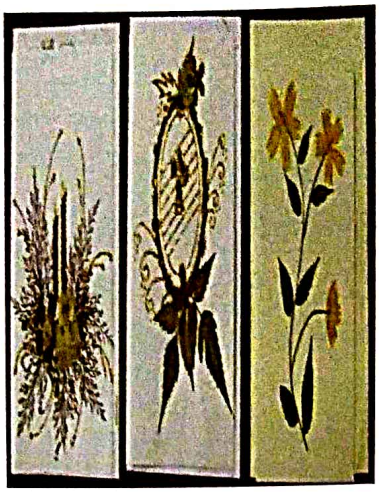

चिप्स

चिप्स तैयार करने हेतु प्रौद्योगिकी कई बागवानी फसलों जैसे केला, कटहल एवं आलू हेतु विकसित की गई है। ये सभी उत्पाद उच्च दामों पर मार्किट में मिलते हैं एवं प्रसंस्करण उद्योग संबधित लोग इन उत्पादों से भारी लाभ कमा रहे हैं। केले की प्यूरी हेतु भी प्रौद्योगिकी विकसित की गई है। केले की प्यूरी कई उत्पादों हेतु आधारभूत सामग्री का काम करती है। आलू से एक मूल्यवर्धित उत्पाद है फ्रेंच फ्राइज़। फ्रेंच फ्राइज़ के लिए भी प्रौद्योगिकी उपलब्ध है।

टमाटर का मूल्यवर्धन

टमाटर का महत्वपूर्ण उत्पाद चटनी या सॉस है। बाज़ार में टमाटर के ये पदार्थ काफी महंगे मिलते हैं। उद्योगों द्वारा इन सभी उत्पादों को प्रायः डिब्बाबंद किया जाता है या इन्हें बोतलों में भरकर बेचा जाता है। महंगे होने के कारण यह पदार्थ आम जनता के पहुंच के बाहर हैं। कुछ सरल और सस्ते तरीके अपनाकर मौसम विशेष में टमाटरों को सुरक्षित रख सकते हैं जिससे टमाटर के अनेक पौष्टिक तत्वों तथा औषधीय गुणों को भी टिकाऊ बनाया जा सकता है। घरेलू-स्तर एवं कुटीर उद्योग के स्तर पर टमाटरों को परिरक्षित करके कई नए उत्पाद बनाए जा सकते हैं जिससे जब टमाटर की पैदावार बहुत अधिक होती है तो उनको परिरक्षित करके उनको नष्ट होने से बचाया जा सकता है। इससे किसानों की भी आमदनी बढ़ेगी तथा उपभोक्ता को भी लाभ होगा। इससे बिना मौसम के टमाटरों के विभिन्न पदार्थों का साल भर आनंद उठाया जा सकता है। टमाटर का मूल्यवर्धन करके बागवानी व लघु-स्तर पर सब्ज़ी उत्पादन उद्योग को भी प्रोत्साहन मिलता है। इस प्रकार कुटीर उद्योग के स्तर पर टमाटरों को परिरक्षित करके कमज़ोर वर्ग महिलाओं तथा किसानों की आय बढ़ाने व उनको रोज़गार देने के अवसर भी मिलेंगे। साथ ही, परिरक्षण लागत कम आने से उपभोक्ताओं को भी उचित दामों पर टमाटर के उत्पाद उपलब्ध होंगे।

अलंकृत पौधों का मूल्यवर्धन

भारत का विश्व के पुष्पीय पौधों एवं उनके उत्पादों के निर्यात में 23वां स्थान है तथा भारत से निर्यात की मात्रा सिर्फ 0.38 प्रतिशत है। मुख्यतः भारत के पुष्पीय उत्पाद का निर्यातक गंतव्य स्थान यूरोप, अमेरिका तथा एशियाई देश हैं। भारत में विविध जलवायु तथा कम मूल्य पर श्रमिकों की उपलब्धता पुष्पविज्ञान खंड के लिए बहुत ही लाभदायक स्थान रखती है। कर्तित एवं खुले फूलों की आयु बहुत कम होती है जोकि सस्योत्तर प्रौद्योगिकी द्वारा कुछ और दिन बढ़ाई जा सकती है। बाज़ार में कभी-कभी फूलों की अधिकता होने के कारण किसान को अपने उत्पाद का पूरा मूल्य भी नही मिल पाता है इसलिए ऐसी परिस्थितियों में मूल्यवर्धन एक अच्छा विकल्प है। मूल्यवर्धित उत्पादों में मुख्यतः कर्तित फूलों एवं सुखाए गए फूलों के विन्यास, लटकन, सूखे तथा चित्रित तुंबी, सूखी जड़ी-बूटियां आदि शामिल होते हैं। सफल मूल्यवर्धन के लिए पुष्प उत्पादकों को यह निर्धारित करना चाहिए कि बाज़ार में किस चीज की कमी है तथा उस चीज का मूल्यवर्धन करके बाज़ार की कमी को पूरा करना चाहिए। मूल्यवर्धन करने से उत्पादों की लागत में भी वृद्धि हो जाती है। इसलिए सोच-समझ कर योजनाबद्ध ढंग से काम करना चाहिए ताकि छोटे पैमाने/स्तर के उद्यम में भी अधिक लाभ कमाया जा सके।

प्रमुख मूल्यवर्धित उत्पादों

- सुखाए गए फूल
- पुष्प विन्यास
- पॉट प्यूरी
- शुभकामना पत्र, दीवार भित्ति, लटकन
- फूलों के उत्पाद जैसे जैम, जैली, शरबत, पेय पदार्थ

भारत में सूखे फूलों का उद्योग 200 करोड़ रुपये है। इस उद्योग में 20 देशों को सूखे फूलों की 500 किस्मों का निर्यात होता है जिनकी सबसे अधिक मांग अमेरिका एवं इंग्लैड के बाज़ार में है। भारत सूखे फूलों का एक प्रमुख निर्यातक देश है जो विश्व के 5 प्रतिशत सूखे फूलों का व्यवसाय करता है। इस उद्योग की वार्षिक वृद्धि दर 15 प्रतिशत है। यह उद्योग लगभग 1,00,000 लोगों को प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से रोज़गार प्रदान करता है।

सूखे फूल

विभिन्न तरीकों से एक बड़ी शृंखला में फूल सुखाए जा सकते हैं परंतु कुछ पुष्प ऐसे भी होते हैं जिन्हें बहुत आसानी से सुखाया जा सकता है तथा वह सूखे फूलों के उत्पाद एवं पुष्प विन्यास बनाने में सहायक होते हैं। उदाहरणतः हेलीक्राइसम, लार्कस्पर, एमरैन्थस, नाईजैला, गुलाब, गुलदाउदी आदि।

सुखाए गए फूलों के लाभ

- ये फूल सस्ते एवं पर्यावरण मित्र होते हैं।
- सुखाए गए फूलों के उत्पादों की एक बड़ी शृंखला उपलब्ध होती है।
- यह पूरे वर्ष प्राप्य होते हैं।
- यह गर्मी व सर्दी सहन कर सकते हैं।
- इनका परिवहन भी आसान होता है।

(लेखक भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली के खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग में प्रधान वैज्ञानिक हैं।)

ई-मेल : rrs_fht@rediffmail.com

पुस्तक विमोचन

कनेक्टिंग, कम्युनिकेटिंग, चेंजिंग ... उपराष्ट्रपति के तीसरे वर्ष के कार्यकाल का वृत्तांत

प्रकाशन विभाग द्वारा "कनेक्टिंग, कम्युनिकेटिंग, चेंजिंग" शीर्षक से प्रकाशित पुस्तक जिसमें भारत के उपराष्ट्रपति श्री वेंकैया नायडू के तीसरे वर्ष के कार्यकाल का वृत्तांत है, का विमोचन 11 अगस्त, 2020 को नई दिल्ली में उपराष्ट्रपति निवास में हुआ। विमोचन कार्यक्रम में केंद्रीय मंत्री श्री राजनाथ सिंह और श्री प्रकाश जावड़ेकर उपस्थित थे। 250 से अधिक पृष्ठों वाली इस पुस्तक को सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय के प्रकाशन विभाग ने प्रकाशित किया है। लेखों और चित्रों के माध्यम से यह पुस्तक उपराष्ट्रपति की

विभिन्न गतिविधियों, जिनमें भारत और विदेश में उनकी यात्राएं शामिल हैं, को बखूबी प्रस्तुत करती है। यह किसानों, वैज्ञानिकों, डॉक्टरों, युवाओं, प्रशासकों, अग्रणी उद्योगपतियों और कलाकारों आदि से उनकी चर्चाओं की झलक प्रदान करती है। सूचना और प्रसारण मंत्रालय में सचिव श्री अमित खरे भी इस अवसर पर उपस्थित थे।

हमारी पुस्तकें

कनेक्टिंग, कम्युनिकेटिंग, चेंजिंग

लेखक : उपराष्ट्रपति सचिवालय

ISBN : 978–93–5409–000–4, मूल्य : रु. 1500

यह कॉफी टेबल पुस्तक उपराष्ट्रपति के तीसरे वर्ष के कार्यकाल की महत्वपूर्ण घटनाओं पर प्रकाश डालती है। पुस्तक में उपराष्ट्रपति की विदेश यात्राओं, विश्व नेताओं के साथ उनकी बातचीत और विभिन्न देशों में प्रवासी भारतीयों को उनके संबोधन से संबंधित कार्यक्रम भी शामिल हैं। राज्यसभा के प्रभावी रूप से कामकाज के लिए श्री नायडू द्वारा किए गए बदलाव और उनके फलस्वरूप उच्च सदन की उत्पादकता में आए सुधारों का उल्लेख भी पुस्तक में किया गया है। पुस्तक के अंतिम अध्याय में वर्णन है कि कैसे उपराष्ट्रपति ने महामारी के दौरान समय का प्रभावी ढंग से उपयोग किया और अपने मित्रों, शिक्षकों, दीर्घकालीन सहयोगियों, परिचितों– पुराने और नए, संबंधियों, संसद सदस्यों, आध्यात्मिक गुरुओं, और पत्रकारों की कुशलक्षेम जानने के लिए "मिशन कनेक्ट" शुरू किया।

पी–बुक और ई–बुक http : //www.publicationsdivision.nic.in/ से ऑनलाइन खरीदी जा सकती हैं।

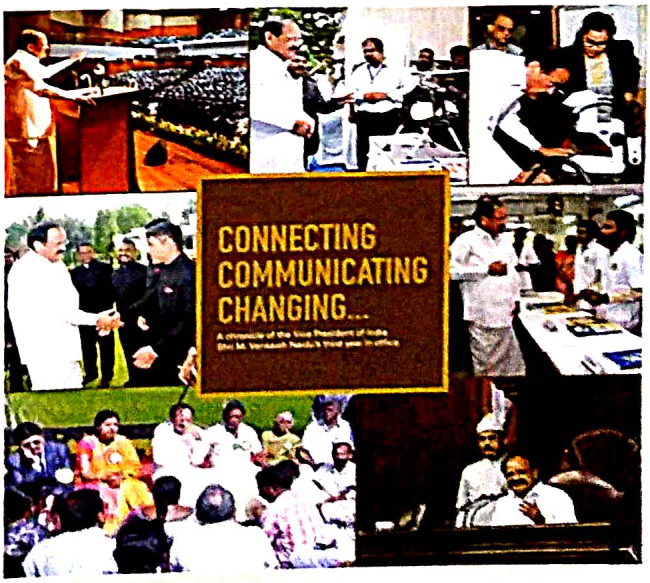

R.N.I/708/57

आर. एन. आई./708/57
डाक-तार पंजीकरण संख्या : डी.एल. (एस)-05/3164/2018-20
आई.एस.एस.एन. 0971-8451, पूर्व भुगतान के बिना आर.एम.एस.
दिल्ली में डाक में डालने के लिए लाइसेंस : यू (डी.एन.)-54/2018-20
01 सितंबर, 2020 को प्रकाशित एवं 5-6 सितंबर, 2020 को डाक द्वारा जारी

P&T Regd. No. DL (S)-05/3164/2018-20
ISSN 0971-8451, Licenced under U (DN)-54/2018-20
to Post without pre-payment at R.M.S. Delhi.

हमारे नए प्रकाशन

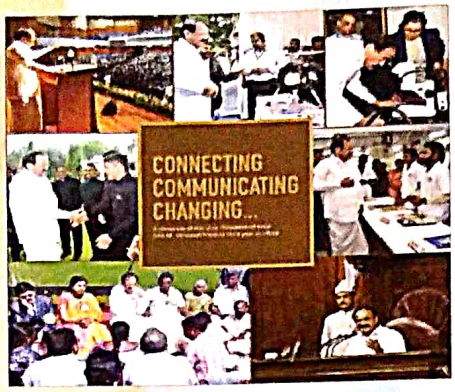

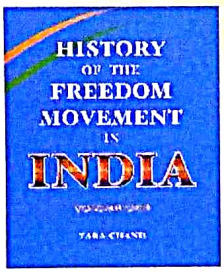

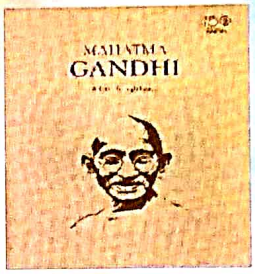

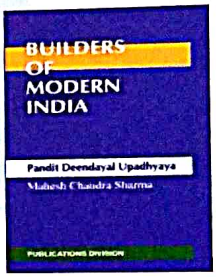

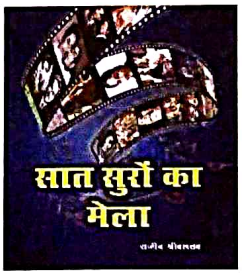

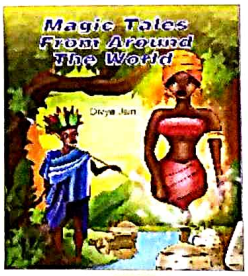

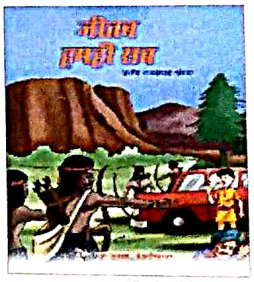

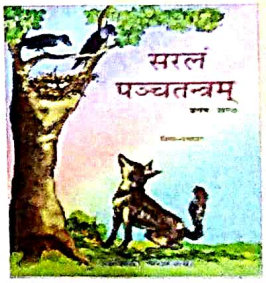

चुनिंदा ई-बुक
एमेज़ॉन और गूगल प्ले
पर उपलब्ध

गांधी साहित्य, भारतीय इतिहास, जाने-माने व्यक्तियों की जीवनियां, उनके भाषण और लेखन,
आधुनिक भारत के निर्माता शृंखला की पुस्तकें, कला एवं संस्कृति, बाल साहित्य

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार
हमारी पुस्तकें ऑनलाइन खरीदने के लिए कृपया www.bharatkosh.gov.in पर जाएं।
ऑर्डर के लिए कृपया संपर्क करें : फोन : 011-24365609, ई-मेल : businesswng@gmail.com
वेबसाइट : www.publicationsdivision.nic.in